प्रवचन-क्रम

1. जीवन की कुंजी है मृत्यु 2
2. युवा शक्ति का संगठन.... 15
3. दमन नहीं, समझ पैदा करें.... 20
4. हिंदुस्तान क्रांति के चौराहे पर है.... 28
5. युवा चित्त का जन्म 43
6. निःशब्द में ठहर जाएं.... 57
7. राजनीति का सम्मान कम हो.... 76
8. क्या मनुष्य एक रोग है? 83

नये मनुष्य का धर्म

पहला प्रवचन

जीवन की कुंजी है मृत्यु

मेरे प्रिय आत्मन्!

नेहरू विद्यालय के भारतीय सप्ताह का उदघाटन करते हुए मैं अत्यंत आनंदित हूं। युवकों के हाथ में भविष्य है... विषय नई पीढ़ी का निर्मित करना है। ज्ञान के जो केंद्र हैं वे यदि नई पीढ़ी को ज्ञान के साथ ही साथ हृदय की और प्रेम की भी शिक्षा दे सकें तो शायद नये मनुष्य का निर्माण हो सके।

एक छोटी सी बात के संबंध में कह कर मैं अपनी चर्चा शुरू करूंगा।

बहुत पुरानी घटना है एक गुरुकुल से तीन विद्यार्थी अपनी समस्त परीक्षाएं उतीर्ण करके वापस लौटते थे। लेकिन उनके गुरु ने पिछले वर्ष बार-बार कहा था कि तुम्हारी एक परीक्षा शेष रह गई है। उन्होंने बहुत बार पूछा कि वह कौन सी परीक्षा है? गुरु ने कहा, वह परीक्षा बिना बताए ही लिए जाने की है, उसे बताया नहीं जा सकता। और सारी परीक्षाएं तो बता कर ली जा सकती हैं, लेकिन जीवन की एक ऐसी परीक्षा भी है जो बिना बताए ही लेनी पड़ती है। समय पर तुम्हारी परीक्षा हो जाएगी, लेकिन स्मरण रहे, उस परीक्षा को बिना पास किए, बिना उत्तीर्ण हुए तुम उत्तीर्ण नहीं समझे जा सकोगे।

फिर उनकी सारी परिक्षाएं हो गईं, उन्हें परीक्षाओं में प्रमाणपत्र भी मिल गए, फिर उनके विदा का दिन भी आ गया, दीक्षांत-समारोह भी हो गया और वे विद्यार्थी बार-बार सोचते रहे कि वह अंतिम परीक्षा कब होगी? अब तो अंतिम विदा का दिन भी आ गया। तीन विद्यार्थी जो उस विश्वविद्यालय की, उस गुरुकुल की सारी परिक्षाएं उत्तीर्ण कर चुके थे वे उस सांझ विदा भी हो गए। रास्ते में उन्होंने एक-दो बार सोचा भी, पूछा भी एक-दूसरे से एक परीक्षा शेष रह गई। गुरु बार-बार कहते थे एक परीक्षा लेनी है। लेकिन अब वह परीक्षा कब होगी, अब तो वे गुरुकुल से विदा भी ले चुके?

सूरज ढलने को था, गुरुकुल पीछे छूट गया, घना जंगल आगे था। वे तेजी से जंगल पार कर रहे थे ताकि शीघ्र गांव में पहुंच जाएं। एक झाड़ी के पास से निकलते समय पगडंडी पर दिखाई पड़ा बहुत से कांटे पड़े हैं, एक युवक जो आगे था छलांग लगा कर निकल गया। दूसरा युवक पगडंडी से नीचे उतर कर पार कर गया। लेकिन तीसरा युवक अपने सामान को, अपने ग्रंथों को नीचे रख कर कांटे बीनने लगा। उन दो युवकों ने उससे कहा, पागल हुए हो! समय खोने का मौका नहीं है, रात हुई जाती है, घना जंगल है, रास्ता भटक सकता है अंधेरे में, फिर गांव हमें जल्दी पहुंच जाना चाहिए। यह समय कांटे बीनने का नहीं है।

उस युवक ने कहा, इसीलिए कांटे बीन रहा हूं, क्योंकि सूरज ढला जाता है फि र रात हो जाएगी हमारे पीछे जो भी पथिक आएगा उसे कांटे दिखाई नहीं पड़ सकेंगे। देखते हुए हम कांटों को बिना बीने निकल जाएं और रात होने को है पीछे कोई भी आएगा उसे फिर कांटे दिखाई नहीं पड़ेंगे, इसलिए मैं कांटे बीन लूं। तुम चलो मैं थोड़ा दौड़ कर तुम्हे मिला लूंगा। वह कांटे बीन ही रहा है, वे दोनों युवक चलने को हुए तभी वे तीनों हैरान रह गए पास की झाड़ी से उनका गुरु बाहर निकल आया। उस गुरु ने कहा, जो दो युवक आगे निकल गए हैं वे वापस लौट आएं। वे अंतिम परीक्षा में असफल हो गए हैं। जिसने कांटे बीने हैं वह जा सकता है, वह अंतिम परीक्षा में भी उत्तीर्ण हो गया है। उनके गुरु ने कहा, ज्ञान की परीक्षाएं अंतिम नहीं हैं अंतिम परीक्षा तो प्रेम की है। और जो प्रेम को उपलब्ध नहीं होता उसका सब ज्ञान व्यर्थ हो जाता है। नेहरू विद्यालय के भारतीय सप्ताह

के इस उदघाटन में मैं यही प्रार्थना करूंगा कि यह विद्यालय केवल ज्ञान देने का माध्यम नहीं बनेगा बल्कि प्रेम देने का भी क्योंकि प्रेम की परीक्षा में जो उत्तीर्ण नहीं है, उसका सब ज्ञान व्यर्थ है। और जो प्रेम की परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाता है, वह जो प्रेम के ढाई अक्षर भी सीख लेता है वह सारे ज्ञान को उपलब्ध हो जाता है क्योंकि प्रेम प्रभु को उपलब्ध करने का द्वार है।

अब मैं जिन चर्चाओं का एक सिलसिला चला है उस संबंध में अपनी बात शुरू करना चाहूंगा। मनुष्य को मैं एक बहुत गहरी नींद में सोया हुआ देखता हूं। आदमी बिल्कुल सोया हुआ है। रास्ते पर चलते हुए लोगों को देखता हूं तो ऐसा नहीं लगता है कि वे जाग कर चल रहे हैं। कोई अकेले में ही अपने से बात किए जाता है, किसी के होंठ कंपते हैं। कोई हाथों से इशारे कर रहा है, साथ उनके कोई भी नहीं है।

वे किससे बातें कर रहे हैं शायद किसी सपने में, शायद वे किसी नींद में हैं। आदमी रात को ही नहीं सोता है दिन में भी सोया ही रहता है। आदमी की पूरी जिंदगी बिना जागे ही बीत जाती है। क्योंकि यदि मनुष्य जाग जाए तो चारों ओर परमात्मा के सिवाय और उसे कोई भी दिखाई नहीं पड़ेगा। जागे हुए मनुष्य का अनुभव परमात्मा का अनुभव है, सोए हुए मनुष्य का अनुभव नहीं है।

जब कोई मुझसे पूछता है, ईश्वर है? तो मैं उससे पूछता हूं, यह प्रश्न इस बात की सूचना है कि तुम जागे हुए नहीं हो, सोए हुए हो। और जब तक तुम सोए हुए हो तब तक ईश्वर नहीं है। जैसे कोई उगे हुए सूरज के सामने भी आंखें बंद करके खड़ा हो और पूछता हो कि सूरज है? तो उससे हम क्या कहेंगे उससे हम सूरज के संबंध में कुछ कहेंगे या कि सोचेंगे कि इस आदमी ने आंखें बंद कर रखी हैं इसीलिए प्रश्न उठा है सूरज के संबंध में। सूरज भी मौजूद हो तो भी जो आदमी आंख बंद किए है वह अंधकार में होता है। सूरज उसके अंधकार को नहीं मिटा सकता है।

परमात्मा प्रकाश की भांति निरंतर मौजूद है। जैसे मछलियां सागर में हैं वैसे ही हम परमात्मा में हैं। लेकिन निरंतर यह प्रश्न उठता है, परमात्मा है? निश्चित ही यह प्रश्न इस बात की सूचना है कि हमारी आंखें बंद हैं, हम सोए हुए हैं। सोए हुए होने का अर्थ है हम सपनों से घिरे हुए हैं, हमारा चित्त ड्रीम से, सपनों से घिरा हुआ है दिन-रात, रात तो घिरा ही होता है, दिन में भी घिरा होता है।

एक युवक न्यूयार्क की तरफ यात्रा कर रहा था वह जिस ट्रेन में बैठा हुआ था उसके बगल की ही सीट पर एक वृद्धजनजी बैठे हुए थे। उस युवक ने थोड़ी देर बाद उनसे पूछा कि कितना समय हुआ होगा आपकी घड़ी में, आपकी घड़ी में कितना बजा है। उस वृद्ध ने उस युवक को नीचे से ऊपर तक देखा, उसके हाथ के बस्ते और सामान को देख कर लगता था वह किसी इंश्योरेंस कंपनी का एजेंट होगा, किसी बीमा कंपनी का एजेंट होगा। उस वृद्ध ने उसे नीचे से ऊपर तक देखा और फिर कहा महाशय, मैं आपको समय नहीं बता सकूंगा। युवक हैरान हुआ, उसने पूछा आपके घड़ी नहीं है? उस वृद्ध ने कहा, घड़ी तो है लेकिन मैं आपको बताऊंगा कि समय कितना है, फिर बातचीत चल पड़ेगी। आप मुझसे पूछेंगे, आप कहां जा रहे हैं? मैं आपको कहूंगा, मैं न्यूयार्क जा रहा हूं। आप पूछेंगे, वहीं रहते हैं? फिर मजबूरी में मुझे बताना पड़ेगा अपने घर का पता और शायद शिष्टाचार में आपसे कहना पड़े कि आप भी न्यूयार्क चलते हैं कभी मेरे घर आइए। मेरी लड़की जवान है, जरूरी है घर आकर आपका उससे मिलन, मैत्री, परिचय हो जाएगा। आप उससे कहेंगे कहीं घूमने को चलने को, शायद वह जाने को राजी हो। और यह बात अंत में मैं जानता हूं कि आप प्रस्ताव करेंगे कि मैं आपकी युवा लड़की से विवाह करना चाहता हूं। और मैं आपसे निवेदन करता हूं मैं बीमा एजेंट बिल्कुल भी पसंद नहीं करता हूं, उनको मैं दामाद नहीं बना सकता हूं।

वह युवक तो हैरान रह गया। उसने कहा, महाशय आप किन सपनों में खोए हुए हैं! मैं केवल पूछता हूं कि समय, कितना बजा है, कितना बजा है आपकी घड़ी में? और आप किन-किन नतीजों पर, किन-किन अनुमानों पर यात्रा कर गए?

हमें हंसी आती है इस वृद्ध आदमी पर लेकिन हम सब भी निरंतर ऐसे ही सपनों में, भविष्य में यात्रा करते रहते हैं। वर्तमान में हम में से कोई भी नहीं जीता है। या तो हम अतीत की स्मृतियों में खोए रहते हैं जो बीत गया उसकी याद्दाश्तों में या जो नहीं आया उसकी आशाओं में, सपनों में। वर्तमान में कोई भी नहीं जीता है। या तो हम बीते हुए अतीत की स्मृतियों में खोए रहते हैं या न आए हुए भविष्य की कल्पनाओं में। यही नींद है, यही सपना है। जो वर्तमान में है, वह जागा हुआ होता है। जो अतीत में है, भविष्य में है वह सोया हुआ है।

यही अर्थ है निद्रा का आध्यात्मिक क्योंकि न तो अतीत की अब कोई सत्ता है, अतीत जा चुका। केवल स्मृतियां, केवल मेमोरीज रह गईं हैं मन पर। उनकी अब कोई भी सत्ता नहीं, कोई भी अस्तित्व नहीं है। और भविष्य अभी आया नहीं है, आने को है। उसकी भी कोई सत्ता नहीं है। तो जिसका मन अतीत में और भविष्य में गतिमान होता हो वह जान ले कि वह सपनों में भटक रहा है सत्य में नहीं। सत्य तो वर्तमान में है जो मौजूद है उसी क्षण में न उसके पीछे न उसके आगे। वर्तमान के अतिरिक्त और किसी चीज की कोई सत्ता नहीं है, कोई अस्तित्व नहीं है। वर्तमान के अतिरिक्त सब असत्य है, सब असत्तावान है। हम उसी असत्तावान में उस नॉन-एक्झिस्टेंसियल में वह जो नहीं है उसी में भटकते रहते हैं, यात्रा करते रहते हैं। यही सपना है, यही ड्रीमलैंड है इसी में हम सोए हुए हैं। रात ही हम सपना नहीं देखते दिन भर हम सपना देखते हैं। लेकिन दिन के काम में इतने उलझ जाते हैं कि भीतर चलते हुए सपनों का तांता हमें दिखाई नहीं पड़ता है, बस इतना ही फर्क जरा आंख बंद करें भीतर सपने उपलब्ध हो जाएंगे। जरा आंख बंद करके भीतर झांकें और पाएंगे सपनों की कतार वहां चल रही है।

रात आकाश में तारे होते हैं, दिन में, दिन में तारे दिखाई नहीं पड़ते। यह मत सोच लेना कि नहीं होते हैं। दिन में भी तारे अपनी ही जगह होते हैं सिर्फ दिखाई नहीं पड़ते। सूरज की रोशनी बीच में इतना बड़ा परदा खड़ा कर देती है कि दूर तारे दिखाई नहीं पड़ते, छिप जाते हैं रोशनी ही है अंधेरे में नहीं, अंधेरे में तो दिखाई पड़ जाते हैं रोशनी में छिप जाते हैं। लेकिन अगर किसी गहरे कुएं में चले जाएं तो दिन में भी आकाश में तारे दिखाई पड़ सकते हैं बीच में अंधेरे का परदा आ जाए तारे दिखाई पड़ने लगेंगे।

ऐसे ही रात मन में सपने चलते हैं यह मत सोचना कि दिन की रोशनी में सपने समाप्त हो जाते हैं इसलिए मैं जाग गया। केवल दिन की रोशनी में सपने दिखाई नहीं पड़ते जैसे दिन की रोशनी में तारे दिखाई नहीं पड़ते। सपने मौजूद हैं भीतर उनकी यात्रा चल रही है भीतर। आप बाहर काम भी कर रहे हैं भीतर सपने भी चल रहे हैं। जरा काम बंद करें और भीतर देखें तो पाएंगे भीतर कोई सपना मौजूद है। न मालूम कौन सी योजनाएं चल रही हैं, न मालूम कौन सी कल्पनाएं चल रही हैं, न मालूम अतीत के कौन से चित्र दुहर रहे हैं। भविष्य की कौन सी आशाएं बन रही हैं। भीतर एक सपनों की दुनिया मौजूद है। यह जो सपनों की दुनिया है यही मनुष्य की निद्रा है। और जब तक मनुष्य के भीतर सपने मौजूद हैं तब तक मनुष्य को सत्य का साक्षात नहीं हो सकता है। सत्य के साक्षात के लिए और कुछ नहीं केवल सपने खोने पड़ते हैं। सत्य के अनुभव के लिए और किसी चीज का त्याग नहीं करना पड़ता केवल सपनों का त्याग करना पड़ता है, केवल निद्रा को छोड़ देना होता है, जागना पड़ता है।

इसलिए पहली बात तो मैं यह कहना चाहता हूं हम यह अनुभव करें, जानें पहचानें कि हम सोए हुए हैं। यद्यपि एकदम से यह ख्याल में नहीं आता कि सोए हुए होने का क्या अर्थ है?

एक मित्र मेरे सारे विश्व का भ्रमण करके वापस लौटे थे। वे कवि थे और एक चित्रकार भी, वे दुनिया की सुंदरतम चीजों को देखने गए थे। जब वे गए थे तब भी मैंने उनसे कहा था, मत जाओ व्यर्थ क्योंकि जो बाहर सौंदर्य को देखने जाता है उसे अभी सौंदर्य का पता भी नहीं है। लेकिन नहीं वे माने। वे यात्राएं करके वापस लौटे वर्षों बाद, मेरे पास फिर रुके। उस दिन पूर्णिमा की रात थी और उन्हें मैं नर्मदा के तट पर ले गया, संगमरमर की चट्टानों पर। नाव में आधी रात को निर्जन एकांत में उनके साथ में मैं दो घंटे था। वे उन दो घंटों में निरंतर स्विटजरलैंड की झीलों की बात करते रहे, कश्मीर की झीलों की बातें करते रहे, लेकिन नर्मदा की वे चट्टानें न तो उन्हें दिखाई पड़ीं, न उन्होंने देखीं। न तो वह पूर्णिमा का चांद उन्हें दिखाई पड़ा न वह बरसती हुई चांदनी उन्हें अनुभव हुई। वे स्विटजरलैंड में रहे मैं नर्मदा पर रहा दोनों के बीच बड़ा फासला था। फिर हम लौटे तो वे कहने लगे बहुत धन्यवाद आप बहुत सुंदर जगह ले गए थे। मैंने उनसे कहा क्षमा करें ले तो गया था लेकिन आप पहुंच नहीं सके। और मैं वहां जाकर बहुत-बहुत पछताया। आए तो दो थे लेकिन पहुंच मैं अकेला ही सका। आप मेरे साथ वहां नहीं थे और इसलिए व्यर्थ ही मत कहें कि सुंदर जगह थी। जिसे देखा ही नहीं जिससे निकटता ही अनुभव नहीं की उसके सौंदर्य का क्या पता चला होगा आपको! उन दो घंटों में एक बार भी जो मौजूद था उससे आपका कोई संपर्क कोई संस्पर्श न हो सका। लेकिन जो मौजूद नहीं था स्विटजरलैंड और कश्मीर अतीत की स्मृतियां उनमें आप खोए रहे। आप सपने में थे आप मेरे साथ नहीं थे। और मैं उनसे निवेदन किया कि अगर बुरा न मानें तो मैं यह कहना चाहूंगा कि जैसा आपको दो घंटों में मैंने जाना मैं मान ले सकता हूं कि स्विटजरलैंड में भी जब आप रहे होंगे तब आप कहीं और रहे होंगे। वे झीलें भी आपने नहीं देखी होंगी।

सपने में जीते हैं, जहां हैं वहां नहीं जीते जहां नहीं हैं वहां जीते हैं। जब भोजन करने घर बैठे होते हैं तब आपको पता न हो आप दफ्तर में होंगे। जब दफ्तर में होते हैं तब हो सकता है कि भोजनगृह में हों। जब मंदिर में बैठे हों जरूरी नहीं है कि मंदिर में हों सिनेमागृह में हो सकते हैं। सिनेमागृह में बैठे हो हो सकता है मंदिर में गीता सुनते हो। कुछ नहीं कहा जा सकता। आदमी वहां नहीं है जहां है क्योंकि आदमी अगर वहां हो जाए जहां है तो जीवन में जो भी छिपा हुआ है वह सब प्रकट हो जाता है।

जीवन को जानने की कुंजी वर्तमान में जीना है। जीवन को जानने की कुंजी वह जो प्रजेंट है, जो उपस्थित है उसमें समग्ररूपेण चेतना को उपस्थित कर देना है। हम अनुपस्थित हैं प्रतिपल अनुपस्थित हैं और ऐसे ही सोए-सोए जीए चले जाते हैं और फिर पूछते हैं जीवन का आनंद अनुभव नहीं होता जीवन का पता सोए हुए आदमी को चल सकता है?

राजस्थान के एक गांव में एक फकीर एक रात आकर रुका था। उस गांव के लोग जैसा हमेशा संन्यासियों को सुनने इकट्ठे होते थे। उसको सुनने भी इकट्ठे हो गए। गांव का जो सबसे बड़ा धनपति था आसोजी वह भी सभी के सामने सभा में बैठा हुआ था। फकीर ने बोलना शुरू किया था और आसोजी की नींद लग गई। क्योंकि वे दिन भर के थके-मांदे, दुकान पर काम करते, और ऐसे भी जिन लोगों को नींद नहीं आती वे धर्म सभाओं में जरूर जाते हैं। क्योंकि कई डाक्टर ऐसी सलाह देते हैं कि नींद लाने की सबसे अच्छी दवा धर्म-कथा सुनना है। आसोजी भी इस तरकीब को मानते थे। वे जाकर धर्म-कथा सुनते थे। रोज ही वहां जो थोड़ी बहुत नींद आ जाती हो आ जाती हो। रात भर तो धन की पूंजी की व्यवस्था जुटाने में नींद नहीं आ पाती थी। उस दिन भी वे जाकर

वहां सो गए थे। और गांव में कोई भी इस बात को एतराज नहीं करता था। क्यों? कौन जाग कर कभी धर्मकथा सुनता है?

और जो संन्यासी भी बोलने आते थे वे भी क्यों ये कहते आसोजी से कि तुम सोते हो। क्योंकि किसी को यह कहना कि तुम सोए हुए हो उसके मन को बड़ी चोट पहुंचाना है वह नाराज हो जाएगा। और आज तक संन्यासी धनपति को नाराज नहीं कर सके इसीलिए धर्म नष्ट हुआ है। संन्यासी और धर्मगुरु धनपति को प्रसन्न करते हैं नाराज नहीं। एक सांठ-गांठ है, एक समझौता है। धनपति धार्मिक आदमी की बातों से सुरक्षित बना रहता है और धार्मिक लोगों के धन से धर्मगुरु सुरक्षित बना रहता है। लेकिन ये संन्यासी कुछ अनूठा होगा शायद सच में संन्यासी होगा इसने बीच में बोलना बंद कर दिया और चिल्ला कर कहा, आशूजी सोते हो! दूसरे संन्यासी तो कहते थे आसोजी ध्यानमग्न हो कर सुनते हैं। और आसोजी यह सुन कर बहुत प्रसन्न होते थे। इस आदमी ने कहा आसोजी सोते हो आसोजी की नींद खुली उन्होंने झांक कर चारों तरफ देखा और कहा नहीं नहीं कौन कहता है मैं तो ध्यानमग्न होकर सुनता था आप बोलें। उस फकीर ने फिर बोलना शुरू कर दिया। कभी कोई सोया हुआ आदमी मानने को राजी नहीं होता कि मैं सोता हूं क्योंकि अगर वह मानने को राजी हो जाए तो जागरण की शुरुआत, जागरण का प्रारंभ हो जाता है। इसलिए नींद समझाती है कि मानना मत कि तुम सोते हो क्योंकि अगर मान लिया कि मैं सोता हूं तो जागने का उपक्रम शुरू हो ही जाएगा। इसलिए नींद कहती है कभी मानना मत कि तुम सोए हो दुनिया सोती होगी तुम तो जागते हो। आशूजी ने कहा नहीं-नहीं कौन कहता है मैं सोता हूं। मैं तो ध्यान से सुनता था आप शुरू करें आपको रुकने की जरूरत नहीं।

फकीर ने बोलना शुरू किया। थोड़ी देर में आसोजी फिर सो गए। सोए हुए आदमी की बातों का कोई भरोसा। सोए हुए आदमी को आश्वासन का कोई बल है। सोए हुए आदमी की बात का कोई अर्थ है। आसोजी फिर सो गए। वह फकीर भी एक ही रहा होगा। उसने फिर बोलना बीच में बंद कर दिया और फिर चिल्लाया आसोजी सोते हो? अब आसोजी को गुस्सा आ गया। यह आदमी इतने जोर से कहता है, पूरा गांव सुन लेगा और ऐसी बातें पूरा गांव जान ले यह उचित नहीं है। और यह आदमी इतने जोर से कहता है कि हो सकता है कि भगवान भी सुन लें और पीछे मुश्किल पड़े कि तुम धर्म-कथा में सोते थे! आसोजी ने भी जोर से कहा, माफ करिए आप अपना बोलना जारी रखें, मैं सो नहीं रहा हूं, कौन कहता मैं सोता हूं? बार बार रोकने की जरूरत नहीं है, मैं तो ध्यानमग्न होकर सुनता हूं।

फकीर ने फिर बोलना शुरू किया, आसोजी फिर सो गए। लेकिन फकीर भी एक ही था, वह मानने को राजी नहीं था। अब की बार उसने तीसरी बार कहा, लेकिन थोड़े शब्दों को बदल लिया। और आसोजी इसीलिए भूल में पड़ गए। दो बार उसने कहा था आसोजी, सोते हो? और आसोजी इंकार कर दिए थे। तीसरी बार उसने कहा, आसोजी, जीते हो? नींद में आसोजी ने समझा पुराना ही प्रश्न फिर है। उन्होंने कहा, नहीं-नहीं कौन कहता है! उस फकीर ने कहा, इस बार अब किसी के कहने की कोई जरूरत नहीं है। आप इस बार उलझ गए। इस बार मैंने पूछा ही नहीं कि सोते हो। मैंने पूछा है, जीते हो? और सबूत मिल गया कि आप सोते थे, नहीं तो जीने को इंकार नहीं कर सकते थे। और फिर उस फकीर ने कहा, ठीक भी है यह, जो आदमी सोता है वह जीता भी नहीं। सोने और जीने का क्या संबंध? जीने और जागने का संबंध हो सकता है। सोने और जागने, सोने और जीने इन दोनों का कोई संबंध नहीं।

इसीलिए तो हमें जीवन का कोई पता नहीं चल पाता है कि जीवन क्या है। हमें नहीं अनुभव हो पाता कि सत्य क्या है, हम नहीं जान पाते कि यह चारों तरफ व्याप्त ऊर्जा यह परमात्मा, यह प्रभु क्या है, यह अस्तित्व

क्या है। हम सोए हुए अपनी नींद में घिरे हुए, चारों तरफ नींद के दरवाजों में बंद नींद की दीवालों में बंद हमसे जीवन का कोई संबंध नहीं हो पाता। इसलिए धर्म यदि कुछ है तो मेरी दृष्टि में जागने की प्रक्रिया है। धर्म न तो पूजा है न प्रार्थना क्योंकि सोए हुए आदमी की न पूजा का कोई अर्थ है और न प्रार्थना है। धर्म न शास्त्रों को जान लेना है न सिद्धांतों को सीख लेना क्योंकि सोए हुए आदमी के शास्त्रों को कंठस्थ कर लेने का क्या अर्थ है। धर्म तो है जागरण की प्रक्रिया। धर्म तो है जागरण का सूत्र। धर्म तो है एक अवेकनिंग भीतर जो सोया है उसे जगा लेने की विधि। उस संबंध में ही थोड़ी बात समझ लेनी जरूरी है कि भीतर जो सोया है वह कैसे जाग जाए। भीतर जो सपने चलते हैं वे कैसे विसर्जित हो जाएं। भीतर जो अतीत और भविष्य की ऊहा चलती है वह कैसे विलीन हो जाए। मैं कैसे उस क्षण में खड़ा हो जाऊं जिसमें मैं हूं क्योंकि वही एक क्षण है, उसी क्षण से प्रवेश मिल सकता है। उसमें जो अस्तित्व है लेकिन उसके अतिरिक्त कहीं और कोई द्वार नहीं है। तो मैं क्षण में कैसे मौजूद हो जाऊं। और धर्म के नाम पर हम जो उपाय करते हैं, वे क्षण में जगाते नहीं वर्तमान में बल्कि और सुलाने की विधियां हैं।

एक आदमी बैठ कर राम-राम जपता है, ओम-ओम जपता है। एक आदमी अल्लाह-अल्लाह करता है। नमोकार पढ़ता है, कोई और मंत्र, कोई और शब्द। क्या आपको पता है बहुत बार दोहराने से शब्द नींद लाने की विधि बन जाते हैं। क्या आपको पता है रिपीटेशन किसी शब्द की पुनरुक्ति आत्म-सम्मोहन की, खुद को सुला लेने की विधि है। शायद आपको पता नहीं और पता भी हो तो शायद आपको खयाल नहीं। एक मां को अपने बच्चे को सुलाना होता है तो वह कहती है, राजा बेटा सो जा, राजा बेटा सो जा, राजा बेटा सो जा। वह इसी एक कड़ी को, इसी एक लोरी को दुहराए चले जाती है--राजा बेटा सो जा। थोड़ी देर में राजा बेटा सो जाता है। मां सोचती होगी, मेरे मधुर कंठ के कारण सो गया तो गलती में है। राजा बेटा बोरडम की वजह से, ऊब की वजह से एक ही शब्द को बार-बार दुहराने की वजह से सो गए हैं। राजा बेटा तो क्या राजा बेटा के राजा बाप को भी सुलाने की विधि यही है। उससे कोई भी फर्क नहीं पड़ता। एक ही शब्द की पुनरुक्ति चित्त को ऊब से भर देती है, बोरडम से भर देती है। एक ही शब्द को बार-बार दुहराने से चित्त का रस उस शब्द में खो जाता है। चित्त का रस है नए के प्रति नवीन के प्रति जितना नवीन होता है चित्त उतना जागता है। जो परिचित है उसको बार-बार दुहराने से चित्त रस खो देता है, रुचि खो देता है। और फिर उससे बचने के लिए एक ही रास्ता रह जाता है अब राजा बेटा को सुला रहे हैं आप। राजा बेटा भाग जा नहीं सकते कहीं और आप कहे जाते हैं, राजा बेटा सो जा, राजा बेटा सो जा, तो राजा बेटा इस ऊब से बचने के लिए क्या करें? सिवाय इसके कि नींद में चले जाएं और आपसे बचने का कोई उपाय नहीं है।

आप चाहे खुद बैठ कर राम-राम राम-राम राम-राम राम-राम दोहराते रहें बार-बार दोहराया गया शब्द ऊब पैदा कर देता है, परेशानी पैदा कर देता है। फिर मन को बचने की सेल्फ-डिफेंस में आत्मरक्षा में मन को बचने के लिए नींद में चला जाना पड़ता है। एक हलकी तंद्रा पैदा हो जाती है। उसी तंद्रा को आप समझ लेते होंगे शांति, उसी निद्रा को आप समझ लेते होंगे मन शांत हो गया। उस निद्रा के बाद थोड़ा सा अच्छा लगेगा, थोड़ी राहत जैसा नींद के बाद लगती है तो आप सोचते होंगे कि मैं धार्मिक हो गया हूं।

धर्म इतना सस्ता नहीं है, धर्म नींद का उपाय नहीं है। एक आदमी भजन-कीर्तन में अपने सोने की व्यवस्था कर सकता है। संगीत सुलाने की विधियों में से बहुत कीमती विधि है।

लखनऊ में एक बार ऐसा हुआ एक बहुत बड़ा संगीतज्ञ आया। लेकिन संगीतज्ञ बड़ा अनूठा था वाजिद अली उन दिनों नवाब था। वाजिद अली तो जाहिर पागल नवाब था। ऐसे तो बहुत कम नवाब हुए जो पागल न

हों आमतौर से पागल होना, नवाब होना एक ही बात का मतलब रखते हैं। क्योंकि जो पागल नहीं हैं वे नवाब होना नहीं चाहता है। तो वाजिद अली तो पागल था ही खबर मिली एक बहुत बड़ा संगीतज्ञ आया है लेकिन उसकी एक शर्त है, वह वीणा तो बजाएगा, वह गीत तो गाएगा लेकिन एक शर्त उसकी बड़ी अनूठी है कि कोई सिर उसकी वीणा बजाते समय हिलना नहीं चाहिए अगर कोई सिर हिला, वह पहले से ही पाबंदी और शर्त बांध लेता है कि सिर नहीं हिल सकेगा। वाजिद अली ने कहा, कोई फिकर नहीं है, जाओ उसको कहो कि सिर हिलने की क्या जरूरत है, सिर हिलेगा हम सिर कटवा देंगे।

गांव में खबर कर दी गई कि संगीत का रात्रि बड़ा कार्यक्रम होगा, बहुत बड़ा वीणावादक आया है, लेकिन जो लोग सुनने आएं एक बात खयाल रख कर आएं, अपने सिर कटवाने की तैयारी। सिर नहीं हिलना चाहिए, सिर हिलेगा तो सिर अलग कर दिया जाएगा। जिसे आना हो आए, न आना हो न आए। बहुत लोग आते उसे सुनने लेकिन सबके आने का सवाल न रहा। उस गांव में जो बहुत संयमी होंगे, वे ही सुनने आए। कोई सौ-पचास आदमी सुनने आए। और वे भी आ कर ऐसे बैठ गए जैसे योगासन कर रहे हों। कोई सिर अगर धोखे से भी हिल जाए, संगीत के कारण नहीं किसी और वजह से, कोई मक्खी आ जाए तो मुश्किल हो जाए! वह आदमी, नवाब ने चारों तरफ नंगी तलवारें लिए आदमी खड़े कर दिए थे कि ख्याल रखना, किस आदमी का सिर हिलता है।

दो घंटे तीन घंटे बीत गए, लोग पत्थर की मूर्तियां बने बैठे हैं कोई सिर हिलता ही नहीं। लेकिन तीन घंटे के बाद रात जब गहरी होने लगी, और जब संगीत गहरा उतरने लगा तो कुछ सिर हिलने शुरू हो गए। नवाब के आदमी तैयार थे, उन्होंने निशान लगा लिए कौन-कौन आदमी हिल रहे हैं। सभा जब पूरी हुई, बीस आदमी पकड़े गए जिनके सिर हिले थे। नवाब ने उनसे कहा, पागलो! तुम्हे पता नहीं कि सिर कट जाएंगे, तुम्हे खबर नहीं मिली? उन लोगों ने कहा, हमें पूरी खबर थी। लेकिन जब तक हम जागे हुए थे तभी तक तो खबर काम कर सकती थी। जब तक हमें होश रहा तब तक हम सम्हाले रहे, लेकिन जब होश ही न रहा तो सम्हालता कौन? सिर हमने नहीं हिलाए, हिले होंगे। हमारा कोई कसूर नहीं है, हमारा कोई हाथ नहीं है। वैसे कटवाना हो कटवा दें। लेकिन शर्त ये थी कि हम सिर न हिलाएंगे तो हमने सिर नहीं हिलाए। लेकिन जब नींद लग गई होगी, तब हमें पता नहीं कि फिर क्या हुआ। तो संगीत में चाहें तो अपने को सुला लें। शराब में, सेक्स में सब सोने की विधियां हैं।

आदमी जागने से डरता है, सोना अच्छा लगता है। इसलिए कि सोने में न तो अपना पता रह जाता है न किसी और का। न किसी दुख का बोध रह जाता है न किसी चिंता का। न कोई पीड़ा न कोई समस्या। इसीलिए तो शराब का इतना प्रभाव है सारी दुनिया में, और शराब का प्रभाव रोज-रोज बढ़ता जाता है कम नहीं होता क्योंकि आदमी भूलना चाहता है दुख को, पीड़ा को, चिंता को, समस्या को--जीवन को भूलना चाहता है। खयाल न रह जाए कि यह सब है। इसलिए अपने को बेहोश करना चाहता है। और जो चीज भी बेहोश करने में सहयोगी हो जाती है आदमी उसको बहुत पसंद करता है। बेहोशी के प्रति बड़ा प्रेम, बड़ा लगाव है। और धर्म धर्म बेहोशी से बिल्कुल उलटी चीज है। धर्म बेहोशी नहीं होश है। इसलिए धर्म के नाम पर जो हजारों सोने की विधियां चल रही हैं उनको मैं धर्म नहीं कहता हूं। वे सब... वे सब शराब के रूपांतर हैं। वे सब नशे की दवाइयां अफीमें हैं। आदमी जहां भी अपनी चेतना क्षीण करना चाहता है, जहां अपनी चेतना को डुबाना चाहता है, जहां अपनी कांशसनेस को खोना चाहता है, वहीं वह आदमी बेहोशी, नींद में, तंद्रा में जाने की कोशिश कर रहा है। वह आदमी असल में यह कह रहा है कि मैं जीना नहीं चाहता, मैं मरना चाहता हूं। वह आदमी एक तरह की धीमी सुसाइड में एक ग्रेजुअल सुसाइड में एक धीमी आत्महत्या में लगा हुआ है। धर्म बिल्कुल दूसरी बात है।

बिल्कुल उलटी बात। धर्म है जागरण का प्रयास धर्म है पूरी तरह चेतना को एक्सपेंशन चेतना को और विस्तार। भीतर जितनी चेतना है उसको नष्ट करने की आकांक्षा और भीतर पूरा चित्त कांसस हो जाए पूरा चित्त चेतन हो जाए, भीतर कोई अंधेरे का सोता हुआ कोना न रह जाए, भीतर सब प्रकाशित हो जाए यह कैसे हो सकता है!

एक छोटी सी घटना से मैं समझाने की कोशिश करूं।

एक सम्राट अपने राजकुमार को धर्म में दीक्षित करना चाहता था। उसने सारे देश में खबर पहुंचवाई कि मेरे युवक राजपुत्र को कौन धर्म में दीक्षित कर सकेगा? एक बूढ़े आदमी की खबर मिली, एक अस्सी वर्ष का बूढ़ा किसी जंगल में है, उसका दावा है कि वह आपके पुत्र को धर्म में दीक्षित कर सकता है। लेकिन उसकी बड़ी शर्तें हैं। उसकी पहली शर्त तो यह है कि धर्म की दीक्षा में धर्म की कोई शिक्षा वह न देगा। वह शिक्षा देगा किसी और बात की। और राजपुत्र को उसके इशारों पर ही चलना होगा। और कितने दिन में यह शिक्षा पूरी होगी इसके लिए कोई सीमा नहीं बांधी जा सकती। कितना भी समय लग सकता है। और अधूरी शिक्षा छोड़ कर राजकुमार वापस नहीं आ सकेगा। ये सारी शर्तें सम्राट ने मंजूर कर लीं और राजकुमार को वृद्ध गुरु के पास भेज दिया गया।

उस वृद्ध गुरु ने उस राजकुमार को कहा कल सुबह से तेरी परीक्षा का पहला पाठ शुरू होगा और पहला पाठ यह है कि मैं कल सुबह किसी भी समय तेरे ऊपर लकड़ी की तलवार से हमला शुरू करूंगा। कल सुबह से ये हमले शुरू होंगे और दिन में किसी भी समय जाने-अनजाने मैं तेरे ऊपर हमला करूंगा तू हमेशा सावधान रहना रक्षा के लिए यह ढाल सम्हाल। राजकुमार ने कहा, मैं धर्म सीखने आया हूं तलवार सीखने नहीं। उसके गुरु ने कहा, यह तुझे जानने की जरूरत नहीं कि तू क्या सीखने आया है, यह मुझे जानने की जरूरत है कि क्या सिखाना है। धर्म की ही यह शिक्षा है लेकिन मेरा रास्ता कुछ ऐसा ही है यह बाद में ही पता चल सकेगा कि धर्म तक तू पहुंचा कि नहीं पहुंचा। मैं तो तुझे तलवार चलाना ही सिखाऊंगा। क्योंकि मेरे जीवन भर का अनुभव यह है कि खतरे में ही मनुष्य जागता है। खतरा नहीं होता तो कोई आदमी जागता नहीं। तो मैं खतरे पैदा करूंगा ताकि तू जाग सके।

उस बूढ़े गुरु ने कहा कि मेरे गुरु ने मुझे बहुत सी बातें सिखाई थीं और एक बार वे वृक्षों पर चढ़ना मुझे सिखाते थे। एक सौ फीट ऊंचे वृक्ष पर उन्होंने मुझे चढ़ाया था पहली ही बार मेरे हाथ-पैर कंपे जाते थे। और जब मैं सौ फीट ऊपर था वृक्ष की ऊपरी शाखा पर तब वे मेरे गुरु नीचे चुपचाप आंख बंद किए बैठे रहे थे। फिर जब मैं वापिस उतरने लगा और जमीन से कोई आठ-दस फीट दूर रह गया था तब वे एकदम से उठे और चिल्लाए, बेटा सम्हल कर उतरना! मैं बहुत हैरान हुआ कि यह आदमी पागल है! जब मैं सौ फीट ऊपर था जहां खतरा था और जहां से पैर चूकता तो जीवन का कोई पता नहीं चलता वहां तो यह आंख बंद कर कर बैठा रहा यह बूढ़ा और जब मैं अब जमीन के करीब आ गया आठ-दस फीट जहां से गिर भी पड़ूं तो कोई खतरा नहीं है वहां यह चिल्ला रहा है कि बेटा, सावधान! होशियारी से! होश से उतरना! नीचे उतर कर मैंने अपने गुरु को कहा कि आप पागल तो नहीं हैं? जब मैं सौ फीट ऊपर था तब आप चुपचाप बैठे रहे और जब मैं दस फीट करीब आ गया था, तब आपने कहा, सावधान, संभल के। उस बूढ़े गुरु ने मुझसे कहा था कि बेटे, सौ फीट ऊपर तो तू इतने खतरे में था कि किसी को सावधान करने की जरूरत न थी, तू खुद ही सावधान था। जहां खतरा है वहां चेतना खुद ही सावधान होती है, जागी हुई होती है वहां नींद की फुरसत नहीं होती। वहां नींद को एफर्ड नहीं किया जा सकता, वहां नींद की सुविधा नहीं है। जब तू सौ फीट ऊपर था तो उस बूढ़े गुरु ने मुझसे पूछा था कि तू बता कि तब तेरे मन में कौन से विचार चलते थे। तब मैंने कहा था वहां कोई विचार नहीं थे। वहां तो सावधानी इतनी थी कि विचार में खोना मतलब नींद में जाना। वहां कोई विचार नहीं था मन बिल्कुल शांत

था, बिल्कुल साइलेंट था सिर्फ होश था एक एक चीज, एक एक श्वास का मुझे पता चल रहा था। एक एक पत्ता हिलता था तो मुझे पता चल रहा था। वहां कोई विचार नहीं था न कोई पीछा था न आगे। मैं तो वहां केवल वर्तमान में था, वह जो स्थिति थी वहीं मैं था इसके आगे पीछे जरा भी मन यहां वहां जाता तो खतरा हो सकता था, चूक हो सकती थी।

तो उस बूढ़े गुरु ने कहा था लेकिन इसीलिए मैं आंख बंद किए नीचे बैठा रहा। अभी कोई खतरा नहीं है क्योंकि खतरा है इसलिए तू सावधान है। फिर मैंने देखा कि जैसे जैसे तू नीचे उतरने लगा मैंने पाया कि अब तेरी सावधानी विलीन हो रही है। दस फीट आकर मुझे लगा कि अब नींद ने तुझे पकड़ लिया। उस युवक ने कहा, आप ठीक कहते हैं। जैसे ही मैं करीब आने लगा मैंने कहा, अब कोई खतरा नहीं है, मैं निश्चिंत हो गया। सावधानी खत्म हो गई थी।

उस बूढ़े ने कहा था कि हमेशा मैंने हजारों लोगों को वृक्षों पर चढ़ना सिखाया। ऊपर की शाखाओं से कभी कोई नहीं गिरता। जो भी गिरता है नीचे की शाखाओं से गिरता है। शिखरों से कभी कोई नहीं गिरा। खाईयों और गड्ढों में लोग गिर जाते हैं और खो जाते हैं। समतल भूमि पर लोग गिर पड़ते हैं। कठिनाइयों में कभी कोई नहीं गिरता। सुविधा में लोग सो जाते हैं इनसिक्योरिटी में, असुविधा में असुरक्षा में जागे रहते हैं।

तो उस बूढ़े ने इस राजकुमार को कहा कि मेरे पास अब तू आ गया है तो मैं सब असुविधा पैदा करूंगा, सब खतरे पैदा करूंगा, सब डेंजर खड़े करूंगा ताकि तू सो न पाए। और एक बार तुझे जागने का अनुभव हो जाए तो फिर दुनिया में कोई कितनी ही कोशिश करे तू खुद भी सोना न चाहेगा।

दूसरे दिन से पाठ शुरू हो गया। बड़ा अजीब पाठ था। राजकुमार किताब पढ़ रहा है, पीछे से हमला हो जाएगा। वह राजकुमार भोजन कर रहा है और पीछे से उसकी हड्डी पर लकड़ी की तलवार आ पड़ेगी। सात दिन में उसकी हड्डियां-हड्डियां दुखने लगीं। लेकिन रोज रोज उसे अनुभव हुआ कि उसके भीतर अलर्टनेस, सावधानी बढ़ती जाती है, क्योंकि चौबीस घंटे उसे चौकन्ना रहना पड़ता है कभी भी हमला हो सकता है, किसी भी क्षण कुछ पता नहीं है, पहले से कोई सूचना नहीं मिलती वह बुहारी लगा रहा है गुरु की झोपड़ी में और पीछे से आकर हमला हो गया है। वह खाना खा रहा है, हमला हो गया है। वह किताब उठाने जा रहा है, हमला हो गया है। कुछ नहीं कहा जा सकता है कब हमला हो जाए।

तीन महीने बीतते-बीतते हमला करना लेकिन मुश्किल हो गया। हमला होता है और उसके हाथ, उसका मन इतना सजग है कि तत्काल हमले से रक्षा कर लेता है। तीन महीने बीतते-बीतते उसने अनुभव किया कि कोई एक अजीब बात उसके भीतर पैदा हो रही है विचार कम होते जा रहे हैं, और जागरूकता बढ़ती जा रही है। और स्मरण रखें, जितने ज्यादा विचार होंगे उतनी जागरूकता कम होगी। जितनी जागरूकता ज्यादा होगी उतने विचार कम होंगे। विचार और जागरूकता, थॉट्स और अवेयरनेस विरोधी बातें हैं ये दोनों एक साथ नहीं होती हैं।

उसका चित्त विचारों से क्षीण और कम होता जा रहा है, उसका चित्त सावधानी से भरता जा रहा है। वह पूरे वक्त एक होश से, अमूर्च्छित जागा हुआ है। तीन महीने होने पर उसके गुरु ने कहा, तेरा पाठ, पहला पाठ पूरा हो गया है। कल से तेरा दूसरा पाठ शुरू होगा। उस युवक ने कहा, दूसरा पाठ कौन सा है? गुरु ने कहा, कल से मैं अब नींद में भी हमला करूंगा। तू सोया हुआ है और हमला हो जाएगा। उस युवक ने कहा, जागने में फिर भी गनीमत थी, लेकिन नींद में? मैं सोया हुआ हूं और आप हमला कर देंगे, तो मुझे कैसे पता चलेगा कि आप

हमला कर रहे हैं? नींद में मैं कैसे सावधान रहूंगा? उस बूढ़े ने कहा, घबड़ा मत, जलदी मत कर। जितना चैलेंज खड़ा हो, जितनी चुनौती खड़ी हो, चेतना उतनी ही जागती है। चैलेंज चाहिए। नींद में भी जागती है।

एक मां का बच्चा बीमार पड़ा है। ऊपर आकाश में बादल गरजते रहें उसे पता नहीं चलता, रास्तों पर रथ निकलते रहें उसे पता नहीं चलता। उसका बच्चा जरा सा रो दे, जरा सा करवट बदल ले, उसका हाथ उठ जाता है, उसे पता चल जाता है। नींद में भी उसकी चेतना का कोई कोना स्मरण रखे हुए है कि बच्चा बीमार है। नींद में भी कोई जागा हुआ हिस्सा है मन का। रात हम सब यहां सो जाएं और फिर कोई आकर चिल्लाए, राम! तो किसी को सुनाई नहीं पड़ेगा लेकिन जिसका नाम राम है, वह कहेगा कौन है, कौन बुला रहा है। नींद में भी चित्त का कोई हिस्सा जानता है कि मेरा नाम राम है। नींद में भी कोई जागा हुआ है, कोई कोना, कोई पार्ट, कोई अंश और सब सो रहे हैं। सबको पता नहीं चलता कि राम को बुलाया गया है। लेकिन राम को पता चल जाता है कि मुझे पुकारा गया है। वह नींद में कहता है, कौन है, गड़बड़ मत करो, सोने दो।

तो उस बूढ़े कहाः घबड़ाओ मत, मैं तो चुनौती खड़ी करूंगा ताकि तुम्हारी चेतना को आखिरी दम तक जगाया जा सके। अब कल से नींद में हमला शुरू हो जाएगा। अब तुम अपनी फिकर तुम करना। मजबूरी थी बीच से भागा नहीं जा सकता था। और इधर तीन महीने में एक अनुभव भी हुआ था, बड़ा अदभुत। उस युवक ने सोचा और थोड़ी चोटें सही। अदभुत अनुभव हुआ था इन तीन महीनों में उसके चित्त ने एक बहुत अजीब शांति जानी थी जिसे वह कभी नहीं जानता था। उसकी अंतर्दृष्टि गहरी हुई थी, जितनी उसने कभी नहीं जानी थी, उसकी चिंता विलीन हो गई थी, उसके मन की समस्याएं खतम हो गई थीं। उसके मन में तो सिर्फ एक जागने का भाव भर अवशिष्ट रह गया था।

रात भी हमला शुरू हो गया। रात वह सो रहा है और लकड़ी की तलवार से हमला हो जाएगा। फिर सात-आठ दिन में उसकी हड्डियां दुखने लगीं। जगह-जगह चोट लेकिन रोज-रोज नींद में भी उसे अनुभव होने लगा कि कोई खयाल रखे कि कहीं हमला न हो जाए। नींद में भी मन का कोई कोना जान रहा है कि हमला हो सकता है। नींद में भी एक हिस्सा जागा हुआ रहने लगा। तीन महीने पूरे होते-होते दूसरा पाठ भी पूरा हो गया। नींद में भी उसके हाथ हमले से रक्षा करने लगे। उसके गुरु ने कहा, दूसरा पाठ पूरा हो गया और तू दूसरे पाठ में भी उत्तीर्ण हुआ। कल से तीसरा पाठ शुरू होगा। उस युवक ने कहा अब तीसरा पाठ और क्या हो सकता है! जागना, सोना दोनों में हमला हो गया। उसके गुरु ने कहा, कल से असली तलवार से हमला शुरू होगा। अभी लकड़ी की तलवार अब चुनौती असली खड़ी होगी। अभी चुनौती नकली थी। अभी हड्डी पर चोट लगती थी अब प्राण भी लिए जा सकते हैं। अब प्राणों तक तलवार छिद सकती है। एक दफा चूकना और जिंदगी खोना हो जाएगा। कल से असली तलवार आती है।

उस युवक ने कहा, ठीक है, मैं तैयार हूं अब क्योंकि सवाल इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि तलवार असली है कि नकली है अगर नकली तलवार के प्रति मैं सावधान होता हूं और रक्षा कर लेता हूं तो असली तलवार के प्रति भी रक्षा हो जाएगी। अब मैं निश्चिंत हूं, अब मैं घबड़ाया हुआ नहीं हूं।

दूसरे दिन से असली तलवार का हमला शुरू हो गया। वह युवक प्राणों की बाजी पर खड़ा है। किसी भी क्षण मौत खड़ी हो सकती है। ऐसी स्थिति में कोई सो सकता है? सपने देख सकता है? कोई अतीत और भविष्य में जा सकता है? एक क्षण भी यहां वहां चित्त का जाना जीवन का अंत हो जाएगा।

तीन महीने बीतने को आ गए असली तलवार ने उसके भीतर असली चेतना को भी जगा दिया। तीन महीने पूरे होते थे शायद एक दिन और बचा था और गुरु ने उससे कहा, एक दिन और है और तेरी परीक्षा पूरी

हो जाएगी। फिर अंतिम पाठ रह जाएगा चौथा पाठ। और वह चौथा पाठ मैं तुझे जलदी ही सिखा दूंगा, क्योंकि तीन पाठ जो जान लेता है उसे चौथे पाठ को जानने में देर नहीं लगती।

आखिरी दिन शेष था वह युवक एक वृक्ष के नीचे बैठा हुआ था और उसका गुरु दूर सौ फीट के फासले पर दूसरे वृक्ष के नीचे बैठ कर कोई किताब पढ़ता था। अस्सी वर्ष का बूढ़ा उसकी पीठ युवक की तरफ थी। युवक के मन में एक खयाल आया कि यह बूढ़ा चौबीस घंटे मुझे चेतावनी, सजग, चुनौती में रखता है। यह खुद भी इतना सावधान है या नहीं आज मैं भी क्यों न इसके पीछे से हमला करके देखूं। मैं भी तो देखूं उस पर हमला करके कि ये खुद भी इतना सावधान है या नहीं जितना मुझे सावधान रहने को कहता है। ये उसने सोचा ही था कि वह बूढ़ा गुरु वहां से चिल्लाया कि बेटा ऐसा मत करना। युवक बहुत हैरान हो गया उसने कहा कि मैंने अभी कुछ किया नहीं केवल सोचा था, आप क्या कहते हैं? उस बूढ़े ने कहाः मैं बूढ़ा आदमी हूं ऐसा मत कर बैठना। पर उस युवक ने कहाः आप कैसे कहते हैं? मैंने केवल सोचा। उस बूढ़े ने कहा, तू थोड़ी देर और ठहर जा, चौथा पाठ पूरा हो जाने दे। जब चित्त पूरा सावधान होता है तो दूसरे के विचारों की पगध्वनियां भी सुनाई पड़ने लगती हैं। और जिस दिन दूसरों के विचारों की पगध्वनियां सुनाई पड़ने लगती हैं उसी दिन चित्त उस संवेदना को उपलब्ध हो जाता है जिसमें परमात्मा की पगध्वनियां भी सुनाई पड़ती हैं।

वैसा जागरूक चित्त ही परमात्मा को अनुभव कर पाता है। सोए हुए लोग नहीं जागे हुए लोग। प्रत्येक को इतना ही जागने का प्रश्न है। आरडुअस है, तपश्चर्यापूर्ण है। तपश्चर्या का मतलब नहीं कि आप उपवासे बैठ जाएं। तपश्चर्या का मतलब नहीं कि आप सिर के बल शीर्षासन लगा कर खड़े हो जाएं। ये बातें तो किसी सर्कस में भरती होना हो तो ठीक हैं। परमात्मा को जानने से किसी सर्कस के नट होने की जरूरत नहीं है। लेकिन आरडुअस है, तपश्चर्यापूर्ण है जागने की चेष्ठा। और चौबीस घंटे उठने से सोने तक, सोने से जागने तक चित्त जागा हुआ रहे, होश भरा हुआ रहे कैसे ये होगा? कौन तलवार लेकर पीछे आपके पड़ेगा? आपको खुद ही पर जाना पड़ेगा। और सच्चाई तो यह है कि अगर हमें पता हो तो मौत चौबीस घंटे हमारे पीछे तलवार लेकर पड़ी हुई है।

इसलिए बहुत पुराने दिनों में मृत्यु को ही गुरु और आचार्य कहा जाता था वह जो नचिकेता यम के पास पहुंच गया था उस कथा को कथा ही मत समझ लेना। जब भी किसी नचिकेता को जीवन सत्य को जानना होता है तो मृत्यु के पास पहुंचना पड़ता है। मृत्यु के निकट ही मृत्यु के खतरे में ही मृत्यु की वह जो असुरक्षा है वह जो मृत्यु की तलवार है उसके बोध से ही भीतर सावधानी और जागरूकता पैदा होती है।

तो अंतिम बात आज की सुबह की आपसे कहूं और वह यह कि जिसे धार्मिक होना है उसे मृत्यु के प्रति सचेत सावधान होना पड़ेगा। उसे जानना होगा प्रति क्षण मौत घेरे खड़ी है। प्रति क्षण मौत पकड़े खड़ी है किसी भी क्षण मौत की तलवार ले जाएगी इसलिए निद्रा का मौका और सुविधा नहीं है। अगर मौत ऐसी प्रति क्षण निकट मालूम होने लगे जो कि सच्चाई है जिसको हम जान कर छिपाए रहते हैं, जिसको हम जान कर आंखों पर परदा डाले रहते हैं कि मौत दिखाई न पड़ जाए। मरघट को गांव के बाहर बनाते हैं। अगर दुनिया समझदार होगी तो गांव के बीच चौरस्ते पर मरघट बनाएगी ताकि हर बच्चा रोज-रोज जानता रहे कि मौत है, निरंतर मौत है। हम तो मौत को छिपाते हैं। घर के बाहर कोई अर्थी निकलती है, बच्चों को भीतर का दरवाजा लगाते हैं कि अंदर आ जाओ, कोई मर गया है।

ऐसे जिंदगी भर हम मौत से अपने को छिपाए रखते हैं। झूठी है यह बात। मौत को जानना है, पहचानना है।

एक छोटी सी कहानी से मैं अपनी बात पूरी करूं।

एक संन्यासी के पास एक युवक एक दिन सुबह आया और उस युवक ने उनके पैर छूकर कहा कि मेरे मन में बहुत बार विचार उठता है आप इतने पवित्र मालूम होते हैं, फूल जैसे पवित्र! आप इतने सुगंधित मालूम होते हैं, धूप जैसे सुगंधित! आप इतने प्रकाशित मालूम होते हैं, दीये जैसे आलोकित! मेरे मन में हमेशा यह उठता है कि कहीं यह सब ऊपर ही ऊपर न हो भीतर शायद पाप उठता हो, भीतर शायद दुर्गंध भी हो। हमेशा भीड़-भाड़ होती है, मैं पूछ नहीं पाता। आज अकेले में मिल गए हैं आप मैं पूछता हूं कि ये जो इतनी सुगंध और आनंदित आप बाहर से दिखाई पड़ते हैं, ऐसा भीतर भी है या नहीं?

उस संन्यासी ने कहा, तुम पूछते हो बड़ा सुंदर प्रश्न और मैं उत्तर जरूर दूंगा। लेकिन उसके पहले एक और जरूरी बात मुझे तुमसे कहनी है कहीं भूल न जाऊं। कल भी मैं भूल गया था और अगर दो-चार दिन भूल गया तो फिर बताने की भी जरूरत नहीं रह जाएगी। इसलिए पहले बता दूं। कल अचानक तुम्हारे हाथ पर मेरी दृष्टि पड़ गई, देखा तुम्हारी उम्र की रेखा समाप्त हो गई है। सात दिन और बस सातवें दिन सूरज ढलेगा और तुम भी ढल जाओगे। यह मैं बता दूं कल मुझे ख्याल आया था फिर दूसरी बातचीत में खो गया नहीं बता पाया। आज तुम फिर प्रश्न पूछते हो। पहले मैं यह बता दूं अब तुम पूछो, क्या पूछते हो?

उस युवक ने कहा, मुझे याद नहीं पड़ता कि मैंने आपसे कुछ पूछा। अभी मैं घर जाता हूं। फिर मौका मिला तो मैं आऊंगा। उस संन्यासी ने कहा, रुको भी, इतनी जलदी क्या? सात दिन पड़े हैं बहुत समय है। उस युवक ने कहा, माफ करिए। उसके हाथ कंप रहे थे। अभी वह आया था तो उसके पैरों में सिकंदर का बल था, अभी लौटता था तो एक मरा हुआ आदमी। सीढ़ियां उतरता था तो सहारे की जरूरत पड़ गई थी। वह युवक बूढ़ा हो गया था। रास्ते पर डगमगाता हुआ घर पहुंचा, पूरा घर भी नहीं पहुंच पाया, सीढ़ियों के पास ही गिर पड़ा। उठा कर लोगों ने घर पहुंचाया। बिस्तर से लग गया। सात दिन, केवल सात दिन मौत एकदम पास मालूम पड़ने लगी। हाथ हिलाओ तो मौत उसे छू जाए, निकट सब तरफ।

आस-पड़ोस में जिनसे झगड़े चलते थे और जिनके साथ सुप्रीम कोर्ट तक जाने के इरादे थे वे सब बदल गए। उन्हें बुला कर उनसे क्षमा मांग ली, उनके पैर छू लिए। क्षमा कर देना। झगड़े जीवन के थे मौत से फिर क्या झगड़ा रह जाता है। उपद्रव जीवन के साथ थे जब मौत ही आ गई तब किससे क्या उपद्रव रह जाता है। शत्रुताएं जीवन के ख्याल से थीं जिसको मौत दिख जाती है फिर उसका कोई शत्रु रह जाता है? माफी मांग ली, पैर छू लिए क्षमा कर दिया गया। सात दिन बीते रोज मौत करीब आने लगी रोज मौत करीब आने लगी। घर उदास हो गया, अंधेरे में डूब गया मित्र-परिजन इकट्ठे हो गए। सातवें दिन सूरज डूबने के घड़ी भर पहले वह संन्यासी उस घर में पहुंचा। घर रोता था, उदास सन्नाटा जैसे मरघट हो। वह भीतर गया। उसने उस व्यक्ति को जाकर हिलाया। सूख कर हड्डी हो गया था वह युवक। पहचानना कठिन था कि यही वह आदमी है जो सात दिन पहले था। सब सपने डूब गए थे उसके। सब नावें कागज की सिद्ध हुई थीं। सब भवन राख के ढह गए थे। खाली पड़ा था जैसे मर ही चुका हो। लेकिन एक और अजीब बात थी चेहरे पर बड़ी रौनक थी आंखें बड़ी शांत थीं, बड़ी गहरी थीं। युवक को हिलाया, उसने आंख खोली जैसे किसी दूसरे लोक से लौटा हो और संन्यासी ने पूछा, एक प्रश्न पूछने आया हूं सात दिन मन में कोई पाप उठा? उस युवक ने कहा, क्या बातें करते हैं आप? मौत इतने करीब हो तो पाप उठने के लिए जगह कहां? फासला कहां? डिस्टेंस कहां? इधर मैं था और मौत थी, बीच में कोई और न उठा न उठने की सुविधा थी, न समय था, न अंतराल था उठने का। सात दिन क्या सोचते रहे? उस युवक ने कहा, क्या आप सोचते हैं, मौत सामने हो तो कुछ सोचा जा सकता है? सोचना खो गया। फिर क्या

करते रहे? उस युवक ने कहा, पहली दफा जिंदगी में कुछ नहीं कर रहा था। सात दिन कुछ भी नहीं किया लेकिन जब कुछ भी नहीं किया, कोई विचार न रहे, कोई पाप न रहा, कोई योजना, कोई कल्पना, कोई सपना न रहा तो मैंने पा लिया उसको जो मैं हूं। आपकी बड़ी कृपा! आपकी बड़ी कृपा कि मृत्यु से मुझे मिला दिया क्योंकि मृत्यु के निकट रह कर मैं उसको जान गया जिसकी कोई मृत्यु नहीं है जो अमृत है।

वह संन्यासी हंसने लगा और उसने कहाः घबड़ाओ मत, मौत तुम्हारी अभी आई नहीं, केवल तुम्हारे प्रश्न का उत्तर दिया है। सात दिन बाद मृत्यु दिखती हो या सत्तर वर्ष बाद जिसको दिख जाती है उसके भीतर सब-कुछ बदल जाता है। तुम्हारे प्रश्न का उत्तर दिया। अभी मरने का कोई सवाल ही नहीं है। हाथ की रेखा अभी बहुत लंबी है, उठ आओ। लेकिन उस युवक ने कहाः अब आपको बताने की जरूरत नहीं कि मृत्यु नहीं होगी, अब मैं खुद ही जानता हूं। मृत्यु की कोई संभावना ही नहीं है। इधर मृत्यु से घिर कर मैंने उसे जाना जो अमृत है।

स्कूलों में छोटे-छोटे बच्चों को हम पढ़ाते हैं काला तख्ता बना देते हैं फिर सफेद खि.ड़या से उस पर लिखते हैं तो दिखाई पड़ता है। सफेद दीवाल पर लिखेंगे तो दिखाई नहीं पड़ेगा। काले तख्ते की पृष्ठभूमि में सफेद रेखाएं उभर आती हैं। जो मृत्यु को ठीक से अनुभव करता है तो मृत्यु की काली चादर पर फिर जो सफेद रेखाएं अमृत की हैं वे दिखाई पड़नी शुरू हो जाती हैं। अमृत तो भीतर छिपा है लेकिन जब तक हम मृत्यु की पृष्ठभूमि उसे न देंगे, तब तक वह दिखाई नहीं पड़ सकता। मृत्यु की काली छाया के बीच अमृत की विद्युत चमक उठती, दिखाई पड़ने लगती है।

तो धार्मिक व्यक्ति वह है जो मृत्यु के साथ जीना शुरू कर देता है। उसके भीतर खतरा खड़ा हो गया। उसे तलवार मिल गई, उसे गुरू उपलब्ध हो गया। मृत्यु के अतिरिक्त और कोई गुरु नहीं है। और फिर उस खतरे में भीतर सावधानी पैदा होनी शुरू हो जाती है। इसी सावधानी के निरंतर बढ़ते किसी दिन, किसी क्षण में, किसी सौभाग्य के क्षण में जीवन के बादल हट जाते हैं और सूरज का दर्शन हो जाता है जो परमात्मा है।

मेरी इन बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना उससे बहुत अनुगृहीत हूं। और भीतर बैठे परमात्मा को अंत में प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

दूसरा प्रवचन

युवा शक्ति का संगठन

मेरे प्रिय आत्मन्!

दो ही दृष्टियों से तुम्हे यहां बुलाया है, एक तो श्री नरेंद्र ध्यान के ऊपर शोध करते हैं, रिसर्च करते हैं। मैं ध्यान के जो प्रयोग सारे देश में करवा रहा हूं, वे उस पर मनोविज्ञान की दृष्टि से, पीएचड़ी. की... बनाते हैं। वे एम. ए. हैं मनोविज्ञान में, मनोविज्ञान के शिक्षक हैं और चाहते हैं कि ध्यान के ऊपर वैज्ञानिक रूप से खोज की जा सके। उनकी खोज के लिए कुछ मित्रों को निरंतर अपने मन का निरीक्षण करके अपने मन की स्थिति से और ध्यान के द्वारा उनके मन में क्या परिवर्तन हो रहे हैं, उस सबकी सूचना उन्हें देनी जरूरी है। तभी वे उस रिसर्च को पूरा कर सकेंगे। तो तुम्हें एक तो इस कारण से बुलाया है क्योंकि वे पिछले दो वर्षों से अनेक लोगों से प्रार्थना करते हैं। हमारे मुल्क में पहले तो कोई किसी तरह की प्रश्नावली को भरने को राजी नहीं होता, क्योंकि वह सोचता है न मालूम... और अगर भरने को भी राजी होता है तो उसे सत्य-सत्य नहीं भरता। अगर उसमें लिखा हुआ है कि आपको क्रोध कितनी बार आता है दिन में? तो वह यह भरने को राजी नहीं होगा कि दस बार मुझे क्रोध आता है। वह कहेगा, आता ही नहीं। तो फिर शोधकार्य बहुत मुश्किल हो जाता है। ध्यान से क्या फर्क हुए हैं, वह भी सच्चाई से कोई नहीं लिखता। ध्यान से क्या फर्क हो रहे हैं या नहीं हो रहे हैं वह भी कोई नहीं लिखता। तो वे कठिनाई में पड़ गए हैं। तो इसलिए मैंने चाहा कि पच्चीस वर्ष से कम लोगों को बुलाओ उनसे सत्य की ज्यादा आशा है। उसके बाद असत्य की संभावना बढ़ती चली जाती है।

उनकी जो प्रश्नावली है वे तुम्हें देंगे। उसे बहुत ईमानदारी से, क्योंकि वह एक वैज्ञानिक शोध है। उसका परिणाम विश्व व्यापी हो सकता है। क्योंकि अब तक ध्यान पर कोई वैज्ञानिक शोध नहीं हुई है। ध्यान के द्वारा मनुष्य के व्यक्तित्व में क्या फर्क हो सकते हैं, उसके मन में कितने फर्क हो सकते हैं? उसकी स्मृति बढ़ सकती है, उसका ज्ञान बढ़ सकता है, उसकी चेतना जाग सकती है। वह ज्यादा शांत हो सकता है, ज्यादा आनंदपूर्ण हो सकता है। उसके व्यक्तित्व में ज्यादा इंटीग्रेशन पैदा हो सकता है। पागल होने की संभावना उसकी कितनी कम हो जाती है जितना वह शांत होता है।

यह सारी बातों का, सारे जगत पर व्यापक परिणाम हो सकता है। लेकिन हमारे मुल्क में ध्यान तो हजारों वर्षों से चलता है लेकिन वैज्ञानिक शोध उस पर कुछ भी नहीं हो सकी। तो वे एक महत्वपूर्ण काम करते हैं। उसमें उनका साथ देना चाहिए। वे आपको प्रश्नावली दे देंगे उसे ईमानदारी से भरें और फिर वर्ष में वे दो-चार दस दफा आपको प्रश्नावली भेजते रहेंगे तो उसको ईमानदारी से भरते रहें कि आप में क्या फर्क हो रहा है। इसके दोहरे परिणाम होंगे। उनको तो रिसर्च में फायदा होगा और आपको भी वर्ष दो वर्ष के बीच अपना निरीक्षण करने का मौका मिलेगा बार-बार कि मुझमें क्या फर्क पड़ रहा है, पड़ रहा है या नहीं पड़ रहा है! तो वे दो वर्ष की प्रश्नावली के उत्तर आपके लिए भी दो वर्ष का अपना अध्ययन बन जाएंगे। दो वर्ष के पीछे आप भी देख सकेंगे कि मुझमें कुछ फर्क पड़ा है या नहीं पड़ा है। मेरे व्यक्तित्व में कोई क्रांति आई कि नहीं आई। मैं पहले से ज्यादा शांत हूं, ज्यादा आनंदित हूं, ज्यादा प्रेमपूर्ण हूं, ज्यादा करुणा से भर गया हूं या नहीं भर गया हूं। मेरी कठोरता और मेरी हिंसा कितनी दूर हुई है। तो वह आपके लिए भी उपयोगी होगा। तो उनके साथ स्थायी संबंध बना लें। जो लोग भी फार्म लेते हैं, वे अपना पता उन्हें दे दें ताकि वे निरंतर आपसे पत्र-व्यवहार कर सकें और

आपकी सारी जानकारी ले सकें। वे कम से कम पचास मित्रों पर दो वर्ष तक निरंतर अध्ययन करना चाहेंगे। और इस अध्ययन से वह जो पीएच डी की थीसिस विश्वविद्यालय में पेश करने को हैं वह उपयोगी होगी बहुत। वह सारी दुनिया के काम पड़ेगी। वह जलदी ही उनकी थीसिस बन जाएगी तो वह प्रकाशित भी हो सकेगी और सबको मिल सकेगी। आपके नामों का उसमें कोई उल्लेख नहीं होगा इसलिए उसमें कोई चिंता करने की बात नहीं है कि हम अपनी कोई कमजोरी कैसे लिखें। उस थीसिस में आपके नाम का कोई उल्लेख नहीं होगा। न ही आपके नामों के संबंध में कहीं वे कोई बात करेंगे। वह तो आपने जो सूचना उन्हें दी है बिल्कुल गुप्त होगी। लेकिन वह उनकी थीसिस के लिए आधार बन सकेगी तो एक तो यह उनकी तरफ से मैं कहता हूं कि उनके लिए थोड़ी सहायता पहुंचाएं।

दूसरी बात, इधर सारे देश में मैं घूमता हूं तो मुझे ऐसा लगता है कि युवकों की स्थिति एक वैक्यूम की स्थिति हो गई है, एक शून्य की स्थिति हो गई है। न उनके पास कोई लक्ष्य है जीवन का, न उनके पास जीवन को निर्मित करने की कला और कल्पना है न ही समाज कैसा हो उसके भविष्य की कोई दृष्टि है। वे बिल्कुल अंधेरे में और अधर में लटके रहते हैं। उनके पास कोई जीवन की योजना नहीं है। और अगर युवकों के पास जीवन की कोई योजना न हो तो सारे देश का, सारे जगत का भविष्य अंधकारपूर्ण हो सकता है। क्योंकि कल तुम्हारे हाथ में सारी शक्तियां आ जाएंगी। कल तुम देश को बनाओगे, मिटाओगे। कल तुम्हारे हाथ में होगा कि तुम क्या करना चाहते हो। तो इसके पहले कि युवकों के हाथ में शक्ति आ जाए, युवकों के पास जीवन को, समाज को बदलने और बनाने की स्पष्ट धारणा... होनी जरूरी है कि कल जब उनके हाथ में ताकत आएगी तो वे जिंदगी को नये ढंग से ढाल सकेंगे। और हमारी जिंदगी सारी की सारी गलत हो गई है। हमारे जीवन का कोई अंग स्वस्थ नहीं है। सारे अंगों को बदल डालना है। जीवन की सारी व्यवस्था को नया रूप दे देना है। तो यह कौन करेगा? यह युवकों के अतिरिक्त युवतियों के अतिरिक्त और तो कोई नहीं कर सकता है। और उनके पास कोई दृष्टि नहीं, कोई जीवन नहीं है। तो इधर मेरे मन में एक कल्पना रोज रोज तीव्र होती गई है कि सारे मुल्क में युवक और युवतियों के अलग संगठन यूथ फोर्स की तरह खड़े किए जाएं। वहां हम विचार करने को मिलेंगे, चर्चा करेंगे, अध्ययन करेंगे, सोचेंगे और जो बात हमें ठीक लगती है उसे हम दूर-दूर तक फैलाने की कोशिश करेंगे। फिर युवकों के मैं अलग ही शिविर लेना चाहता हूं। सिर्फ युवकों के लिए शिविर लेना चाहता हूं ताकि युवकों की जिंदगी के जो मसले हैं उन पर मैं स्पष्ट चर्चा कर सकूं। उनके सामने क्या सवाल है?

निश्चित ही वृद्ध लोगों के सामने सवाल दूसरे तरह के होते हैं, युवकों के सामने सवाल दूसरे तरह के होते हैं, बच्चों के सामने सवाल तीसरे तरह के होते हैं। जो वृद्ध के लिए समस्या है वह युवक के लिए समस्या नहीं है। और जो युवक की समस्या है उसको वृद्ध पार कर चुका है, वह उसके लिए समस्या नहीं रह गई है। इसलिए यह मुझे बहुत प्रीतिकर नहीं लगता कि एक ही शिविर सब लोगों के लिए हो। वह ठीक नहीं है। जैसे वृद्धों के लिए सबसे बड़ी समस्या मृत्यु है, उनके सामने जो सबसे बड़ी समस्या है वह यह है कि मृत्यु क्या है? और मृत्यु के बाद क्या होगा? जीवन बचेगा कि नहीं बचेगा? भीतर कोई आत्मा है या नहीं है? कोई स्वर्ग है? मोक्ष है या नहीं? हमारे किए हुए कर्मों का कोई फल बचेगा कि नहीं बचेगा? हम बचेंगे या नहीं बचेंगे? वृद्ध जैसे ही कोई व्यक्ति होता है, तुम भी जब कल वृद्ध हो जाओगे तो मृत्यु ही सबसे बड़ी समस्या हो जाएगी, क्योंकि वही दिखाई पड़ेगी सामने।

लेकिन युवक के लिए मृत्यु समस्या नहीं है, उसके लिए मृत्यु अभी दिखाई भी नहीं पड़ती। उसके लिए समस्याएं दूसरी हैं। उसके लिए समस्या प्रेम की हो सकती है कि प्रेम क्या है? और जीवन को मैं कैसे प्रेमपूर्ण बनाऊं? उसके लिए समस्या विवाह की हो सकती है। उसके लिए समस्या हो सकती है कि जिंदगी को मैं कैसे बसाऊं? तो युवकों के मैं अलग ही शिविर लेना चाहता हूं ताकि उनके जीवन को छूने वाली बातों पर सीधी और साफ चर्चा हो सके। वे अपने प्रश्न पूछ सकें और उत्तर ले सकें। पर वह तभी हो सकेगा जब गांव-गांव में युवकों के संगठन हों। और मैं इतने छोटे शिविर युवकों के नहीं लेना चाहता। युवकों के शिविर हों तो दस हजार युवक हों, युवतियां हों, तो उनके शिविर का कोई अर्थ होगा। ताकि वे फैल जाएं फिर पूरे मुल्क में उस खबर को लेकर और गांव-गांव तक पहुंचा दें।

तो तुमसे मैं यह चाहूंगा कि जहां से भी तुम हो जिस गांव से भी वहां मित्रों को, युवकों का, युवतियों का एक मंडल खड़ा करो। जीवन-जागृति-केंद्र का एक युवक संस्थान खड़ा करो। वहां अध्ययन भी करो, साहित्य पर विचार भी करो, चर्चाएं भी रखो। टेप उपलब्ध हैं; सारे मुल्क में जो मैं बोलता हूं उनको वहां सुनाने की व्यवस्था करो। और जो उसमें बहुत उत्सुक हो जाएं वे और घरों में भी जाकर सुनाएं। हर कालेज और स्कूल में भी खबर पहुंचाओ और फिर जहां भी तुम्हे लगे कि युवकों की एक हवा पैदा हो गई तो मैं वहां आने को हमेशा तैयार हूं। वृद्धों के पचास कार्यक्रम छोड़ कर मैं तुम्हारे कार्यक्रम में आने के लिए तैयार रहूंगा। जहां भी तुम हवा पैदा कर लो--युनिवर्सिटी में, कालेज में, स्कूल में मैं वहां आने को हमेशा तैयार हूं। ताकि फिर मैं वहां पूरी हवा का उपयोग कर सकूं, पूरी बात कर सकूं। और युवकों से मैं अब सीधी बात करना चाहता हूं। क्योंकि कल सारी शक्ति उनके हाथ में आ जाएगी। और अगर मुल्क को बचाना है और ढंग पर ले जाना है और जिंदगी को बदलना है तो तुम्हे उसकी तैयारी करनी है।

तो इसलिए मैंने अलग से तुम्हें यहां बुलाया कि इस संबंध में तुम्हारे मन में खयाल आ जाए कि मेरी शक्तियों का अधिकतम उपयोग तुम्हें करना है। मेरे विचार का अधिकतम उपयोग तुम्हें करना है। और मेरी जो भी आशा है वह तुम पर बंधी हुई है और किसी पर नहीं।

जहां भी तुम लौट कर जाओगे इस शिविर की खबर ले जाओ, हवा ले जाओ, साहित्य ले जाओ, टेप पहुंचाओ, वहां लोगों को सुनाओ, बातचीत खड़ी करो और वहां केंद्र बनाने की फिकर बनाओ। और जैसे ही तुम वहां थोड़ा वातावरण बना लेते हो, मैं वहां हमेशा आने को तैयार हूं। और वहां से मैं युवकों से सीधी बात कर सकूं, सीधा डायलॉग हो सके उनसे मेरा, उसकी मैं फिकर में हूं।

अभी तुम पीछे पड़ जाते हो। अभी यहां तुमको इकट्ठे बुलाया तो मुझे पता चला कि इतने युवक और युवतियां यहां आए हुए हैं। वह तो वहां तुम्हें पता भी नहीं चलता न भीड़ में तुम सब खो जाते हो, वहां कुछ दिखाई नहीं पड़ता कि कौन कौन है, कौन कहां है। यह तो अभी तुम आए तो मुझे लगा, यह खयाल नहीं था नहीं तो माइक का इंतजाम करते, कहीं ज्यादा बड़ी जगह में बैठते। यह सोचा था कि इधर काम चल जाएगा थोड़े से लोग होंगे। तो वहां तुम पीछे पड़ जाते हो और जो अधिक उम्र के लोग हैं उनके सवाल उनकी समस्याएं प्रमुख हो जाती हैं। तुम्हारी समस्याओं को मैं छू भी नहीं पाता। उन पर विचार भी नहीं हो सकता है।

इसलिए जल्दी ही अलग अलग केंद्र खड़े करो और जल्दी ही युवकों के संगठन बनाओ और उन संगठनों के द्वारा हम अलग शिविर लेने की फिकर शुरू करेंगे। कि अलग शिविर तुम्हारा हो। वहां दस हजार युवक और युवतियां इकट्ठे हों चार या पांच दिन या सात दिन रहें। वहां कुछ बातें सोचें, समझें, प्रयोग करें और फिर फैल जाएं पूरे मुल्क में और वह खबर सारे देश में पहुंचा दें। अगर युवकों के मन में कोई बात पैदा हो जाए तो हम

दस वर्ष के भीतर सारे मुल्क की हवा बदल सकते हैं, सारी निराशा तोड़ सकते हैं, सारा दुख तोड़ सकते हैं। और जो मुल्क आज बिल्कुल डगमगा गया है। और गलत लोगों के हाथ में पड़ गई है पूरे मुल्क की शक्ति। एकदम गलत लोगों के हाथ में मुल्क की ताकत पहुंच गई है। जो मुल्क को नष्ट किए दे रहे हैं। दस वर्षों के भीतर यह ताकत ठीक लोगों के हाथ में पहुंचाई जा सकती है। और दस वर्ष के भीतर हम मुल्क को एक ठीक रास्ते पर गतिमान कर सकते हैं।

और हम तो बहुत अभागे देश के लोग हैं। हमारा देश कोई पांच हजार साल से बहुत पीड़ित और परेशान है। तुम्हें दिखाई भी पड़ता होगा पांच हजार वर्ष में भी हम अपने मुल्क की गरीबी नहीं मिटा पाए। अमरीका ने तीन सौ वर्षों में इतनी संपत्ति पैदा कर ली। केवल तीन सौ वर्ष का इतिहास जिनका है, वहां दुनिया के सबसे संपत्तिशाली लोग हो गए। और हमारा इतिहास दस हजार साल पुराना है, और हम आज भी भीख मांग रहे हैं। तो दस हजार साल के इतिहास पर यह कलंक का टीका है कि दस हजार साल तक लोगों ने क्या किया कि अब तक लोगों को रोटी भी नहीं जुटा पाए, कपड़े भी नहीं जुटा पाए? एक हजार साल तक हम गुलाम रहे। दुनिया के इतिहास में कोई कौम इतने लंबे वक्त गुलाम नहीं रही। एक हजार साल तक गुलाम रहने का मतलब यह है कि हमारे भीतर स्वतंत्रता की कोई आकांक्षा नहीं, कोई प्यास नहीं। और आज भी हम भीख मांग रहे हैं। आज भी हिंदुस्तान में जितना रुपया चल रहा है उसमें दो रुपया अमरीका के हैं तीन रुपये में। तीन रुपये हैं अगर हमारे मुल्क में तो दो रुपये अमरीका के ऋण के हैं और एक रुपया हमारा है। पांच साल के भीतर वह एक रुपया भी अमरीका के ऋण का हो जाएगा। हम बिल्कुल ऋणी हो जाएंगे पांच साल के भीतर। सारा मुल्क दीवालिया हो गया है, बैंककरप्ट हो गया है और लड़के कुछ भी नहीं सोचेंगे तो फिर यह कैसे, क्या होगा।

उन्नीस सौ अठहत्तर तक हिंदुस्तान में इतना बड़ा अकाल पड़ने की संभावना है जिसमें बीस करोड़ लोगों को मरना पड़ेगा। यह संभावना साधारण संभावना नहीं है, यह करीब-करीब सुनिश्चित है। उन्नीस सौ पचहत्तर और उन्नीस सौ अठहत्तर के बीच तीन साल में हिंदुस्तान को बीस करोड़ की आबादी को मरना पड़ेगा, इतना बड़ा अकाल पड़ेगा। इसका कोई रास्ता नहीं दिखाई पड़ता। नेता इसकी बात नहीं करते क्योंकि नेता इसकी बात करेंगे तो उनकी सारी नेतागिरी चली जाएगी। इसलिए वे चुपचाप हैं, वे फिजूल के कामों में लगे हुए हैं। कोई बेवकूफ कहता है, गो-हत्या नहीं होनी चाहिए। इधर पूरा मुल्क मर जाएगा पंद्रह साल के भीतर, उनको गो-हत्या होनी चाहिए कि नहीं होनी चाहिए इस बात में लगे हुए हैं। कोई कहता है कि पंजाबी सूबा अलग होना चाहिए, कोई कहता है कि एक जिला बंबई में न होकर... कोई कहता है कि गुजरात में होना चाहिए। इस बेवकूफी में मुल्क के सारे नेता लगे हुए हैं। और वे टुच्ची बातों में मुल्क के दिमाग को उलझाए हुए हैं ताकि असली सवाल दिखाई न पड़ें। क्योंकि असली सवाल दिखाई पड़ा तो हम उनको नीचे उतार कर फेंक देंगे, क्योंकि वे हमारी जान ले रहे हैं। और पंद्रह साल, दस साल के भीतर जब मुल्क में बीस करोड़ लोग मरेंगे तो क्या हालत हो जाएगी इसकी कल्पना करनी मुश्किल है। साठ करोड़ लोगों में से बीस करोड़ लोग मर जाएंगे तो जो जिंदा रह जाएंगे उनकी जिंदगी मरने से बदतर हो जाएगी। लेकिन वह आ रही है घटना क्योंकि संख्या हमारी बढ़ती जा रही है और हमारी दौलत कम होती जा रही है, हमारी पैदावार कम होती जा रही है और संख्या बढ़ती चली जा रही है। पंद्रह साल के भीतर हम उस हालत में पहुंच जाएंगे कि हमें मरना पड़े। कौन बचाएगा इससे? नेता नहीं बचा सकते हैं, नेता पूरे बेईमान हैं, क्योंकि वे सारी चेष्ठा इसमें है कि वे अपनी नेतागिरी जितने दिनों तक चल सके चला लें। उसके बाद जो होगा होगा, उनको कुछ समझ नहीं पड़ता कि हम क्या करें इसलिए अभीकुछ बात भी उठानी ठीक नहीं है उसकी। तो जिंदगी का एक-एक मसला हमारा दुर्भाग्य से भरा हुआ है।

एक रूसी विचारक हिंदुस्तान से वापस लौटा तो उसने अपनी डायरी में एक बात लिखी, मैं उसकी डायरी पढ़ रहा था तो मुझे ऐसा लगा कि कोई छापेखाने की भूल हो गई। उसने लिखा कि हिंदुस्तान एक धनी देश है जिसमें गरीब लोग रहते हैं। इंडिया रिच कंट्री वेयर पुअर पीपुल लिव। तो मैं समझा कि कुछ गड़बड़ हो गई बात। लेकिन आगे पढ़ा तो समझ में आया कि उसने मजाक किया है। उसने मजाक यह कहा है कि देश तो बहुत धनी है, लेकिन लोग बेवकूफ हैं, इसलिए गरीब हैं। नहीं तो देश तो इतना धनी है कि कितना धन पैदा कर लेता, जिसका कोई हिसाब नहीं था। देश बहुत धनी है। देश की नदियां धनी हैं, जमीन धनी है, देश का आकाश धनी है, देश के पास विस्तीर्ण संपदा है छिपी हुई। लेकिन आदमी नासमझ है। और उनकी फिलासफी गलत है। अब तक हमें यही सिखाया गया है आज तक हजारों साल में कि जितनी चादर हो उससे कम पैर सिकोड़ना। जो मुल्क इस तरह की बातें करेगा वह गरीब हो जाएगा। पैर हमेशा चादर के बाहर फैलाओ ताकि चादर को बड़ा करने का विचार पैदा हो। पैर बाहर फैलाओ चादर के ताकि पैरों में ठंड लगे और तुम्हें खयाल आए कि चादर बड़ी करनी है। अगर तुम पैर सिकोड़ते गए तो तुम भीतर सिकुड़ते चले जाओगे। और चादर रोज छोटी होती चली जाएगी, क्योंकि तुम रोज भीतर बड़े हो रहे हो।

तो मुल्क बड़ा होता जा रहा है चादर छोटी की छोटी है। और मुल्क की दृष्टि यह है कि अपने पैर और अंदर कर लो, और अंदर कर लो। अगर पांच रोटी खाने से नहीं चलता तो चार ही रोटी खा लो, तीन ही रोटी खा लो, दो ही रोटी खा लो। सोमवार को उपवास कर लो। ऐसी बेवकूफी की बातें! नहीं, इससे नहीं होगा।

अगर मुल्क को समृद्धिशाली बनाना है और एक समृद्धशाली देश खड़ा करना है तो हमें पूरी हमारी गरीबी की जो चिंतना है जो फिलासफी ऑफ पार्वटी है, उसको बिल्कुल आग लगा देनी पड़ेगी। उसको बिल्कुल आग लगा देनी पड़ेगी। उससे काम नहीं चलेगा। जो मुल्क गरीबी की भाषा में सोचता है वह गरीब हो जाता है। समृद्धि की भाषा में सोचेगा तो समृद्ध हो सकता है। तो ये सारे मसलों पर मैं तुमसे बात करना चाहता हूं। तुम्हारे लिए सवाल मैं आज आत्मा का न इतना बड़ा है न परमात्मा का न इतना बड़ा है। तुम्हारे लिए सवाल आज जिंदगी कैसे सुंदर और सुखद बन सके। इस पृथ्वी को हम कैसे स्वर्ग बना सकें वह सवाल है। लेकिन उसकी बात तो तभी हो सकेगी जब तुम्हारे और मेरे बीच एक संबंध बन सके। एक निकटता बन सके तो उसके लिए मैंने बुलाया है। तुम ये ध्यान रखो कि मैं तुम्हारे लिए हूं। और जिस दिन तुम्हें जरूरत पड़े उस दिन मैं तुम्हारे सारे मसलों पर उत्सुक हूं कि तुमसे बात करूं, तुम्हें तुम्हारे मन में खयाल पैदा करूं और एक क्रांति की आग तुम्हारे भीतर जले तो हम पंद्रह-बीस वर्षों में इतना कर सकते हैं जिसका कोई हिसाब नहीं।

किसी भी मुल्क की जिंदगी बीस वर्षों में बदली जा सकती है क्योंकि बीस वर्षों में पुरानी पीढ़ी चली जाती है और नई पीढ़ी आ जाती है। एक पीढ़ी की उम्र बीस वर्ष होती है, इससे ज्यादा नहीं होती। तो अगर हम नये बच्चों को कोई खयाल सिखा सकें तो बीस वर्ष के भीतर वे बच्चे ताकत में आ जाएंगे और वे बच्चे कुछ कर सकेंगे।

इस समय को खो नहीं देना है। इसलिए तुम अपने गांव में जाओ तो वहां फिकर करो और हमेशा यह ध्यान रखो कि मेरी सारी शक्तियां तुम्हारे लिए हैं। मुझे न आत्मा में उतनी उत्सुकता है, न परमात्मा में उतनी उत्सुकता है। जितनी उत्सुकता मुझे युवकों में है और देश के भविष्य में है।

तो यह तुम्हारे खयाल में आ जाए और तुम्हें लगे कि तुम मुझसे निकटता बना सको, इसलिए थोड़ी देर के लिए यहां बुला लिया। अब तो चलना पड़ेगा वहां।

तीसरा प्रवचन

दमन नहीं, समझ पैदा करें

मेरे प्रिय आत्मन्!

मनुष्य के मन का एक अदभुत नियम है। उस नियम को न समझने के कारण मनुष्यता आज तक अत्यंत परेशानी में रही। वह नियम यह है कि मन को जिस ओर जाने से रोकें, मन उसी ओर जाना शुरू हो जाता है। मन को जिस बात का निषेध करें, मन उसी बात में आकर्षित हो जाता है। मन से जिस बात के लिए लड़ें, मन उसी बात से हारने के लिए मजबूर हो जाता है। लॉ ऑफ रिवर्स इफेक्ट। मन के जगत में उलटे परिणामों का नाम है। इस नियम को बहुत समझना जरूरी है।

फ्रायड अपनी पत्नी के साथ एक दिन बगीचे में घूमने गया था। छोटा बेटा उसके साथ था। वे दोनों बगीचे में बैठ कर, घूम कर बातचीत करते रहे। और जब बगीचा बंद होने का समय आ गया, तो दोनों दरवाजे पर आए, तब उन्हें खयाल आया कि उनका बेटा बहुत देर से उनके साथ नहीं है। फ्रायड की पत्नी तो घबड़ा गई। द्वार बंद हो रहा था, माली दरवाजे बंद कर रहे थे। बड़ा बगीचा था। बेटा कहां गया? वह घबड़ा कर कहने लगी, मैं कहां खोजूं?

फ्रायड ने कहाः पहले मैं तुझसे एक बात पूछूं? तूने अपने बेटे को कहीं जाने से मना तो नहीं किया? अगर मना किया गया, और तेरे बेटे में थोड़ी भी बुद्धि हो तो सौ में निन्यानबे मौके पर वह वहीं होना चाहिए जहां मना किया था।

तो उसकी पत्नी ने कहाः हां, मैंने कहा था, फव्वारे के पास मत जाना।

फ्रायड ने कहाः चलो, अगर बेटा तेरा बुद्धिहीन है, तो और कहीं भी हो सकता है; अगर थोड़ी बुद्धि है, तो फव्वारे पर मिलेगा। वे दोनों गए। और बेटा फव्वारे पर पैर लटका कर पानी से खिलवाड़ कर रहा है।

तो उसकी पत्नी ने कहाः बहुत हैरान हो गई। उसने कहाः तुमने कैसे जान लिया कि बेटा फव्वारे पर है?

फ्रायड ने कहाः यह मन का सीधा सा नियम हैः जहां जाने को मना करो, मन वहीं चला जाता है। और तेरा बेटा ही वहीं नहीं चला गया, सारी मनुष्यता ही वहां चली गई है जहां मनुष्य को जाने से रोक दिया गया था।

लेकिन इस छोटे से सूत्र को अब तक नहीं समझा जा सका है। और वे ही सारे लोग जिन्हें हम भला आदमी कहते हैं, सज्जन कहते हैं, साधु-संत कहते हैं, वे ही लोग मनुष्य को बुराई में ढकलने का कारण बने हैं, यह भी नहीं समझा जा सका है। जिनको हमने महात्मा कहा है वे ही मनुष्य की ठीक आत्मा के ऊपर लदे हुए बैठे हैं, इस बात को नहीं समझा जा सका है। इस बात को समझना अत्यंत उपादेय है।

अगर आपके इस पैसेज के बाहर एक तख्ती लगा दी जाए, जिस पर लिखा हो कि भीतर झांकना मना है, तो आप समझते हैं कि अहमदाबाद में ऐसे शरीफ आदमी मिल जाएंगे जो बिना झांके निकल जाएं। हां, कुछ मिल सकते हैं। कुछ शरीफ आदमी मिल सकते हैं जो दूसरी तरफ आंख करके निकल जाएं। लेकिन आंख दूसरी तरफ होगी, मन तख्ती की तरफ ही होगा।

सीधी आंखों से ही चीजें देखी नहीं जाती हैं, तिरछी आंखों से भी चीजें देखी जाती हैं। और सीधी आंखों से देखे जाने पर कुछ चीजों से मुक्ति हो जाती है। तिरछी आंखों से देखे जाने पर चीजें बहुत पीछा करती हैं, उनसे मुक्त होना असंभव हो जाता है।

कुछ लोग हो सकता है भय के कारण भी न देखे तख्ती की ओर, क्योंकि हमारा जीवन और सज्जनता दूसरों के भय पर ही खड़ी है, रिस्पेक्टिबिलिटी के कारण नहीं। दूसरे लोग यह देख रहे हैं कि सज्जन आदमी तख्ती के पीछे झांक रहा है, जहां लिखा है कि झांकना मना है, तो उस भय से कुछ लोग बिना झांके निकल जाएंगे। लेकिन वे बड़ी मुश्किल में पड़ जाएंगे। दुकान पर पहुंच जाएंगे, मंदिर में पहुंच जाएंगे, दफ्तर में पहुंच जाएंगे, लेकिन मन तो उनका तख्ती के आस-पास ही चक्कर काटता रहेगा। दिन मुश्किल हो जाएगा, जीना मुश्किल हो जाएगा, वह तख्ती बार-बार बुलाने लगेगी कि आओ और झांको। सांझ होते-होते, अंधेरा घिरते-घिरते अधिक से अधिक आदमी किसी न किसी बहाने से इस रास्ते से निकलेंगे। बहाना कोई भी हो सकता है, रास्ता यही होगा। लेकिन यह भी हो सकता है कि कुछ और भी लोग... तो एक बात निश्चित है कि आप सपने में अपनी पत्नी के पास जरूर आएंगे। आना ही पड़ेगा, मन के कुछ शाश्वत नियम हैं। मनुष्य को जिन बातों से रोका गया है मनुष्य उन्हीं बातों में गिर गया है। और जो सबसे बड़ा दुर्भाग्य मनुष्य-जाति का हुआ है, वह है, सेक्स के संबंध में। सेक्स के संबंध में मनुष्य के मन में इतनी लिपापोती की गई है। उस तख्ती पर इतने जोर से लिखा गया है कि न झांकना, कि सारी मनुष्यता उसी तख्ती में झांकती है और नष्ट हो जाती है।

सेक्स के ऊपर इतने टैबू, इतने रोक, सेक्स के संबंध में इतनी अनर्गल, सेक्स के संबंध में इतना गलत प्रचार किया है कि मनुष्य के मन में सेक्स के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं बचा है।

मनुष्य को सेक्सुअल बनाने के मनुष्य को कामुक बनाने में साधुओं-संतों का हाथ है, और जिस दिन मनुष्य-जाति समझेगी, साधु-संतों की लंबी कतार इतनी बड़ी अपराधी सिद्ध होने वाली है जिसका कोई हिसाब नहीं। ये खतरनाक लोग मनुष्य को सेक्सुअल बनाने का... सेक्स तो स्वाभाविक चीज है।

सेक्सुअलिटी मनुष्य की इनबार्न है। काम तो स्वाभाविक है। सारे तत्वों में काम है, लेकिन कामुकता सिर्फ मनुष्य में है। यह मनुष्य में कैसे कामुकता पैदा हो गई? यह कामुकता पैदा की गई है। यह कामुकता मनुष्य के अचेतन में पैदा की गई है। मनुष्य को रोका गया है, वर्जित किया गया है, इनकार किया गया है। जिस चीज को हम वर्जित करते हैं, बुरा कहते हैं, विरोध करते हैं, नंगा करते हैं, उन्हें पता नहीं वह उसमें रस पैदा करते हैं। रस पैदा करने की तरकीब यही है।

एक फिल्म को अगर लिख दोः सिर्फ व्यस्कों के लिए; सिर्फ उनके लिए जिनकी उम्र अट्ठारह वर्ष से ऊपर हैं। और अट्ठारह वर्ष से छोटे बच्चे दा.ढ़ी-मूंछ लगा कर फिल्म में आएंगे।

एक पत्रिका छपती हैः सिर्फ पुरुषों के लिए, उस पत्रिका को सिवाय स्त्रियों के और कोई नहीं पढ़ती। एक पत्रिका छपती हैः सिर्फ स्त्रियों के लिए; जिस पत्रिका पर लिखा हैः सिर्फ स्त्रियों के लिए, उसे सिर्फ पुरुष पढ़ेंगे। क्यों? सिर्फ हमेशा आमंत्रण देता है। सेक्स के संबंध में मनुष्य का चित्त बिल्कुल परभौतिक विकृत हो गया है। और विकृत हो जाने के कारण क्या हैं? कारण है सेक्स के संबंध में उठाई गई दीवाल। सेक्स के संबंध में आदमी को अज्ञान में रखने की चेष्टा, सेक्स के संबंध में प्रथम दिन से ही भयभीत करने की कोशिश।

न कोई बाप अपने बेटे को सेक्स के संबंध में बेटे को कुछ कहता है, न कोई मां अपनी बेटी को सेक्स के संबंध में कुछ कहती है, न गुरु अपने शिष्य को सेक्स के संदर्भ में कुछ कहता है। और अगर बच्चे पूछे तो सब तरफ डंडा उठ जाता है; चुप रहो, ये बातें तुम्हारे पूछने की नहीं हैं।

बच्चों की जिज्ञासा को विकृत क्यों करते हो? फिर बच्चे पूछते हैं, खोज-बीन करते हैं, गलत रास्ते पर खोज-बीन करते हैं, गलत जानकारी एकत्र करते हैं, और उसी गलत जानकारी के संग वे जिंदगी भर जीते हैं।

लेकिन सत्य के संबंध में सब तरफ आंख बंद हैं।

एक बहुत बड़ा विचारक और लेखक अनातोले काट मरण-शय्या पर पड़ा हुआ था। एक मित्र उससे मिलने गया था। अनातोले से पूछने लगा, उसने पूछा, अनातोले तुम्हारे जीवन की अंतिम घड़ी निकट है, मैं तुमसे पूछता हूं कि जिंदगी में सबसे महत्वपूर्ण तुमने क्या पाया? अनातोले ने कहाः सबसे ज्यादा महत्पूर्ण? थोड़ा पास आ जाओ, कान में ही कह सकता हूं। वह आदमी साफ चला जा रहा है बिना कुछ बताए। मित्र अनातोले के पास कान ले गया, अनातोले बोला कुछ भी नहीं, अनातोले ने कहा, तुम समझ गए, बोलने की कुछ जरूरत नहीं है।

अनातोले बिना बोले कुछ कह दिया, बिना बोले उसने वही कह दिया जिसके संबंध में हमारी दुनिया मानती थी, चुप हो गया। लेकिन चुप होने में कोई तथ्य बदल नहीं जाते। और तथ्य को समझ गए तो बोलने की जरूरत नहीं है। तथ्य होने चाहिए प्रकाशित, तथ्य होने चाहिए ज्ञानेय।

मनुष्य को कामुक बनाने की जो रामबाण औषधि है वह यह है कि काम को सेक्स को मनुष्य के ज्ञान में मत आने दो, उसे जानने मत दो, आदमी नहीं जान पाता क्योंकि अंधेरे में काम उसके प्राणों को घेरता है। और दूसरी तरकीब यह है कि काम प्राणों को घेरे तो उसको दबाओ, उसका दमन करो, सप्रेस करो। सारी दुनिया में सप्रेशन बढ़ रही है। क्योंकि काम से मुक्त नहीं हो पाया।

पश्चिम में एक संस्कृति का जन्म हुआ, एंद्रिक संस्कृति। पश्चिम में दो संस्कृतियों के केंद्र में एक संस्कृति है, भोग संस्कृति है। हमारे गुरु बड़े खुश होंगे यह बात जान कर कि कामदेव पश्चिम की संस्कृति को अंगीकृत करता है कि सब हमारी संस्कृति इंद्रियों के ऊपर है। हमारी संस्कृति भी इंद्रियों के ऊपर नहीं हैं। फर्क थोड़ा सा है। कामदेव को शायद पता नहीं होगा, वह पश्चिम की संस्कृति को पता है। पश्चिम की संस्कृति है ऐंद्रिक, पूरब की संस्कृति है पाखंडी। भीतर से ऐंद्रियता है और ऊपर से साधुता है। ऐंद्रियता का उलटा। अंदर पाखंड है, भीतर चोर है, भीतर सेक्स है, ऊपर ब्रह्मचर्य की बात हो रही है। संयमी जीवन इस तरह की किताबें, भीतर वही है जो पश्चिम में। ऊपर से एक धोखा। और मेरा मानना है, ऐंद्रिक व्यक्ति तो किसी दिन इंद्रियों से मुक्त हो भी सकता है, क्योंकि इंद्रियों से परिचित होने के बाद इंद्रियों के भीतर रह जाने का कोई भी कारण नहीं रह जाता। लेकिन पाखंडी आदमी कभी इंद्रियों से मुक्त नहीं हो पाता। क्योंकि पाखंडी आदमी ऐसे घोर चक्र में पड़ जाता है कि सबको धोखा देकर खुद को धोखा देने के बाद... दूसरा अगर आपको धोखा दे रहा है। अब थोड़े बहुत दिन... धोखे को पहचान जाएंगे। क्योंकि दूसरा धोखा दे रहा है। लेकिन आपको धोखा दे तो इस जगत में दूसरे को पहचानना बहुत मुश्किल, आप खुद ही धोखा दे रहे हैं, दूसरा वहां कोई है नहीं।

पाखंडी आदमी मनुष्य-जाति का सबसे विकृत रूप है। लेकिन दमन करने वाली नीति पाखंडी आदमी को सबसे ज्यादा सम्मान देती है। पाखंडी आदमी का मतलब हैः भीतर से कुछ और है। लेकिन भीतर उसे दबाया गया है, सप्रेस किया गया है। बाहर से वह कुछ और है। वह डरा हुआ आदमी, इसके जिंदगी के दिखाने के रास्ते और, जीने के रास्ते कुछ और, वह चलता और रास्तों पर है बताता और रास्तों पर है। उसके मकान के सामने के दरवाजे दूसरी तरफ मकान में पीछे के भी दरवाजे हैं।

मैंने सुना है, मंदिर में शेक्सपीयर का नाटक है। उस नाटक को लाखों लोग देख रहे थे। सारे गांव में उसी नाटक की चर्चा थी। उस गांव के लोग उस गांव का जो पादरी, विशप, आर्चविशप था, उसके पास भी जाकर कहते थे, अहा, इतना सुंदर नाटक कभी देखा नहीं। लार टपक जाती थी पादरी की। पादरी भी आखिर आदमी

है। लेकिन लार दिखा नहीं सकता। पादरी की नाटक देखने के लिए टपकती है। क्योंकि पादरी तो समझा कर कहता नाटक नरक जाने का रास्ता है। तो पादरी चिल्ला कर कहता, नरक में सड़ोगे, क्या रखा है इस नाटक में, पूरी जिंदगी एक नाटक है, कोई और नाटक देखो। लेकिन लोग कहते, आप ठीक कहते हैं। लेकिन नाटक इतना बढ़िया है कि नरक जाएं तो जाएं, नाटक देखेंगे। पादरी के मन में और लालसा पैदा होती कि हद्द हो गई, नाटक में जरूर कोई खूबियां होगीं जो लोग नरक जाने को तैयार हैं। लेकिन नाटक देखना नहीं छोड़ना चाहते, कितने दिन पादरी ने समझाया नाटक मत देखो, मगर देखते हैं। लेकिन नरक जाने को फिर भी तैयार हैं। नाटक छोड़ने को तैयार नहीं। नाटक में कुछ मामला ज्यादा है पुरोहित से। उससे ज्यादा ताकतवर है। नरक के भय से ज्यादा। और पीछे लिखा लाल स्याही से एक बात आपको सूचित कर दें, दरवाजा तो है पीछे का, आप खुशी से आइए।

आखरी दिन आ गया और सारा लंदन नाटक की तरफ उमड़ने लगा, तब पुरोहित को भी अपने को सम्हालना मुश्किल हो गया। उसने एक चिठ्ठी लिखी नाटक के मैनेजर को। मैं एक छोटी सी प्रार्थना करना चाहता हूं, मैं भी देखना चाहता हूं नाटक। क्या आप के थियेटर में पीछे का कोई दरवाजा नहीं है? जब अंधेरा होगा मैं पीछे के दरवाजे से आ जाऊंगा, मैं नाटक देख सकूं लेकिन लोग मुझे न देख सकें।

उस थिएटर के मैनेजर ने जो पत्र लिखा वह अदभुत था। उसने लिखा कि महामहीम, पुज्यवर, पीछे दरवाजा है। हर नगर में जहां हम थिएटर ले जाते हैं वहां पीछे भी दरवाजा रखना ही पड़ता है। क्योंकि सज्जन कभी सामने के दरवाजे से नहीं आते। और सज्जनों के लिए विशेष सुविधा जुटाना हमारा कर्तव्य है। दरवाजा है। आपका स्वागत है, आप आइए, कोई आपको नहीं देख सकेगा। पर भगवान देख सकेगा, यह हम नहीं जानते। और यह भी हो सकता है भगवान न हो। और जहां तक पुरोहितों का संबंध है पुरोहित भलीभांति जानते हैं भगवान नहीं है। पुरोहित और दुनिया में कोई भी जानता हो कि भगवान नहीं है। और कोई भी जान सकता है भगवान है। पुरोहित नहीं जान सकता। क्योंकि जो आदमी भगवान के नाम का धंधा करता है वह आदमी भगवान के सत्य की तरफ कभी उन्मुख नहीं होगा, उसे धंधे से प्रयोजन है, भगवान से कोई भी प्रयोजन नहीं। तो उसने लिखा हो सकता है, आप जानते हैं कि भगवान नहीं है। तो भी एक बात है, और कोई तो नहीं जान सकेगा लेकिन आप तो जानते ही रहेंगे कि पीछे के दरवाजे से आए थे।

पता नहीं वह पुरोहित देखने आया की नहीं? वह जरूर आया होगा। यह पीछे का दरवाजा सोचता है यह आदमी पाखंडी है, वह आदमी हिपोक्रेट है। आदमी का सामान्य स्वस्थ होना ठीक है, क्योंकि सामान्य व्यक्तित्व से कभी हम ऊपर उठ सकते हैं। ...

लेकिन आदमी का पाखंडी हो जाना वह बहुत विकृत चक्कर है। फिर उससे ऊपर हम कभी नहीं उठ सकते। अब यह हमारा देश है, इस देश में हम कितनी बातें करते हैं ब्रह्मचर्य की, लेकिन एक आदमी की खोपड़ी खोदी जाए तो सेक्स के सिवाय वहां कुछ भी नहीं मिलेगा। सत्तर साल, अस्सी साल के बूढ़े आदमी को भी सेक्स से मुक्ति नहीं होती। अस्सी साल का बूढ़ा आदमी अगर स्त्री को देखे तो उसकी आंखें उसके वस्त्रों के भीतर प्रवेश करती हैं।

यह क्या स्थिति है? साधु-संन्यासियों की किताबें पढ़िए, उनके प्रवचन सुनिए, स्त्री को नरक का द्वार बताने के बहाने स्त्री के अंग-अंग की जैसी नग्न चर्चा की जाती है फिल्म अभिनेता भी नहीं कर सकते।

स्त्री का हिसाब साधु-संन्यासी रखते हैं। यह रस अदभुत है। यह रस इसलिए है कि स्त्री को नरक बताने का कारण कहीं यह तो नहीं है कि भीतर स्त्री पर बड़ा क्रोध है। और भीतर स्त्री से बड़ी लड़ाई चल रही है। और भीतर स्त्री पीछा कर रही है। सच बात यह है, जो आदमी भी जीवन के किन्हीं तथ्यों से भागेगा वह तथ्य उसका

पीछा करेगा। अगर कोई स्त्री पुरुष से भागेगी तो जीवन भर पुरुष उसका पीछा करेगा। अगर कोई पुरुष स्त्री से भागेगा तो जीवन भर स्त्री उसका पीछा करेगी।

मैंने सुना है, कोरिया में एक नदी के पास एक संध्या दो भिक्षु यात्रा कर रहे थे। एक बूढ़ा भिक्षु उसके पीछे उसका एक जवान साथी। तो जैसे ही नदी के किनारे पहुंचे, पहाड़ी नदी है, तेज धार है, एक युवा लड़की किनारे खड़ी है, शायद उसे भी नदी पार करनी हो, लेकिन अनजान डगर है, घबड़ा रही है। सांझढलने को है, सूरज उतरने को है, बूढ़ा भिक्षु आगे है, एक क्षण उसके मन में खयाल आया कि लड़की को हाथ का सहारा देकर नदी पार करा दे। जैसे उसके मन में विस्फोट हो गया, जैसे उसके भीतर तीस साल से दबी हुई सारी वासना रंगीन चित्रों में उसके सारे चित्त पर फैल गई, जैसे सारा चित्त एक रंगमंच हो गया हो, उस पर एक आंधी चलने लगी। घबड़ा गया, यह क्या हुआ, यह क्या हो गया, यह मैंने सोचा ही क्यों कि उसका हाथ अपने हाथ में लूं? मैंने यह पाप की बात सोची ही क्यों? आंख बंद करके नदी पार करने लगा। आंख तो बंद थी, लेकिन आपको पता होगा कि कई मौके पर आपने भी आंख बंद की होगी। खुली आंख से स्त्री इतनी सुंदर कभी नहीं होती बंद आंख में जितनी सुंदर हो जाती है। क्योंकि खुली आंख से स्त्री आकृत शरीर है। सिर्फ आकृत शरीर है। खुली आंख से स्त्री चलती हड्डी-मांस-मज्जा है, लेकिन बंद आंख से काया सोने की हो जाती है, स्वप्न की हो जाती है। झिलमिल शुरू हो जाती है। स्वप्न में जो दिखाई पड़ता है वैसा सुंदर व्यक्ति कहीं नहीं है। स्वप्न में न तो काया ढलती, न वह गलती, न बीमार पड़ती।

जिस स्त्री को पुरुष प्रेम करने लगता है या कोई स्त्री किसी पुरुष को प्रेम करने लगती है, तब असली पुरुष और असली स्त्री दिखाई नहीं पड़ते, उनके भीतर जो स्वप्न निर्मित हो गया है। दुनिया की समझ में नहीं आता कि यह जवान लड़की के पीछे पागल क्यों हो गया है? लड़की बिल्कुल साधारण है। तुम्हारे लिए साधारण होगी। उसका स्वप्न लड़की पर सवार हो गया है। उसे अपना सपना दिखाई दे रहा है। लड़की दिखाई नहीं दे रही है।

वह बूढ़ा भिक्षु जैसे ही आंख बंद किया मुश्किल में पड़ गया। आंख खुली थी तब तक भी एक साहस था, जरूरत पड़ी तो आंख बंद कर लेंगे, अब आंख बंद करने के बाद तो कोई उपाय नहीं बचता कि अब क्या करे। तेजी से चल रहा है। घबड़ा गया है। श्वास तेज चल रही है। स्त्री पीछा कर रही है, वह स्त्री पीछा कर रही है।

उस स्त्री को पता भी नहीं होगा कि यह बूढ़ा उसकी वजह से परेशान हो रहा है। लेकिन एक भीतर स्त्री जग गई है। वह दबाई हुई स्त्री है। जो दबाई है, दबा रखी है तीस सालों से, वह जग गई है उस लड़की का बहाना लेकर।

पुरुष के चित्त में भीतर स्त्री है, स्त्री के चित्त में भीतर पुरुष है। पुरुष का चेतन मन पुरुष का है, अचेतन मन में स्त्री छिपी है। स्त्री का चेतन मन स्त्री का है, अचेतन, अनकांशसनेस में पुरुष छिपा है। बाहर के पुरुष को देख कर स्त्री आकर्षित होती है, क्योंकि उसके भीतर का पुरुष जग जाता है, वही पुरुष उसे बाहर दिखाई पड़ने लगता है। और स्त्री अगर ज्यादा दिन पुरुष के साथ रहती है तो उसे फर्क दिखाई पड़ने लगता है। और स्त्री अगर ज्यादा दिन पुरुष के साथ रहती है तो उसे फर्क दिखाई पड़ने लगता है। तब तकलीफ शुरू हो जाती है। इसलिए जब तक प्रेम चलता है, तब तक ठीक है, विवाह हुआ और तकलीफ शुरू हो गई। क्योंकि वह जो भीतर का पुरुष था उससे... शुरू हो गया, तालमेल टूटने लगा। तब उसे पता चलता है यह आदमी मेरी आकांक्षा का आदमी नहीं था, यह स्त्री मेरी आकांक्षा की स्त्री नहीं थी। तब एक इमेज है भीतर जिसकी तलाश चल रही। और अगर उस इमेज को किसी ने जोर से दबा लिया तो वह इमेज, वह प्रतीक नष्ट नहीं होती दबाने से और बढ़ जाती है। इतना जोर पकड़ लेती है, जिस दिन वह फूटती है, सारे चित्त में विस्फोट हो जाता।

बुढ्ढा बहुत घबड़ा गया। किसी तरह नदी पार की। निकल कर भागा। लेकिन जितनी जोर से भाग रहा है उतना ही दबाव बढ़ता; क्योंकि भाग रहा है दबाव के कारण। जोर से भाग रहा है, रुकता तक नहीं। लेकिन इससे क्या लाभ कि मेरे पीछे जवान साथी भी आ रहा है, कहीं उसके दिमाग में भी यही गलत सवाल न आ जाए। लड़की का हाथ पकड़ ले कहीं। बूढ़े को हमेशा खयाल आता है जवानों का, कहीं उससे भी वही गलती न हो जाए जो मुझसे हुई। जवान भी गलती करने के हकदार हैं और आप गलती कर चुके हैं। कृपा करें, ेउनको भी करने दें। आप भी बिना गलती किए नहीं रहे। आपके बाप ने भी चाहा था गलती न हो, उनके बाप ने भी चाहा था गलती न हो, लेकिन गलती होती रही। पीछे लौट-लौट कर देखा गलती तो चुकी है। वह जवान लड़की को कंधे पर बिठाए ला रहा था। यह तो हद्द हो गई। हाथ से छूने के खयाल से मुसीबत हो गई, तो कंधे पर बिठाने से क्या बिगड़ गया होगा। बूढ़ा तो पागल हो गया। यह क्या हो रहा है?

नदी के इस पार भिक्षु ने लड़की को कंधे से उतार दिया, फिर अपने रास्ते पर चल पड़ा। दो मील पार वे आश्रम के द्वार पर पहुंचे, लेकिन बूढ़ा बोला नहीं। भारी क्रोध है, और क्रोध के कारण शायद ईर्ष्या भी है। ईर्ष्या भी है जरूर, नहीं तो क्रोध का जन्म नहीं हो सकता, यह ध्यान रखना आप। ईर्ष्या भी है। उस लड़के ने उस युवती को कंधे पर बिठाया। असंभव है उस बूढ़े को खयाल न आया हो? मैं भी कंधे पर बिठा सकता था। लेकिन चूक हो गई। फिर क्रोध भी है कि मैं जिस भूल से बचा उसने वह भूल कर दी। फिर यह भी एक खयाल है गलत हुआ। जाकर सीढ़ी पर ख.ड़े होकर उसने युवा भिक्षु से कहा, सुनो, मैं गुरु से जाकर बिना कहे नहीं रह सकता, तुमने लड़की को कंधे पर क्यों बिठाया?

उस युवक ने कहाः कंधे पर उठाया लड़की बहुत देर की बात हो गई। उतार आया उस लड़की को नदी के किनारे, बात खत्म हो गई, आप अभी भी ढो रहे हैं क्या? आपने तो कंधे पर बिठाया भी नहीं। कंधे पर बिना लिए भी ढोना हो सकता है, कंधे पर लेकर भी ढोना हो सकता है। और मानना है, जो कंधे पर लेता वह किसी दिन मुक्त भी हो सकता है। और जो कंधे पर लेने से रुक जाए वह कभी भी मुक्त नहीं होता। जीवन के नियम ऐसे नहीं हैं।

सेक्स हर आदमी के कंधे पर चढ़ गया है। और आदमी के प्राणों पर छा गया है। और बच्चे बच्चे को हम सेक्स सिखा रहे हैं, सेक्सुअलिटी सिखा रहे हैं--मौन रह कर, इनकार करके, हम बच्चे को मुक्त होना नहीं सिखा रहे। जितना ब्रह्मचर्य का पाठ सिखाएंगे बच्चे उतना...

आज हिंदुस्तान में स्त्री का सड़क से निकलना मुश्किल है। आज लड़की का कालेज में पढ़ने जाना मुश्किल है। कहीं... तो कहीं धक्के लगेंगे, कहीं पत्थर लग जाएंगे। और वह किसी से कह भी नहीं सकती। क्योंकि स्वीकृति हो गया है ऐसा होता है। यह ऐसा होने का कारण है दमन। यह होने का कारण है सेक्स के संबंध में अज्ञान, यह सब होने का कारण है मनुष्य के मन को गलत ढंग से दबाने की चेष्टा की जा रही है। मनुष्य के मन को मुक्त होना नहीं सिखा रहे हैं।

जाने लें जिस बात को आप भीतर दबा लेंगे, वह कोशिश करेगी। मैं दबा लूंगा, आप दबा लेंगे, या कोई भी भीतर दबा ले, वह दबी हुई बात चौबीस घंटे भीतर से बाहर निकलने की कोशिश करती है। वह चौबीस घंटे कोशिश करती है, हर रूप में कोशिश करती है। कविता लिखोगे, और वह जो दबाया है वह निकल आएगा। सौ में से एक सौ एक कविताएं सेक्स से संबंधित होती हैं। सौ किताबें पढ़िए, सौ उपन्यास एक सौ एक सेक्स से संबंधित होते हैं। फिल्म बनेगी तो सेक्स होगा। टुथपेस्ट भी बेचना हो, साबुन भी बेचना हो, तो सेक्स का उपयोग करना पड़ेगा। साबुन बेचने हो तो भी, टूथपेस्ट बेचना हो तो भी, साड़ी बेचनी हो तो भी नंगी औरत

खड़ी करनी पड़ेगी, उसके बिना कुछ नहीं होगा। इसका मतलब क्या है? इसका मतलब यह है भीतर जो दबाया हुआ है, हर दुकानदार उस दबाए हुए को उभार कर अपनी चीज बेचने की कोशिश करता है। मैं जानता हूं, साड़ी-वाड़ी कोई नहीं खरीदता, आदमी औरत खरीदने जाता है।

साड़ी ही खरीद लूं। साड़ियां पीछे से बेचो, औरत आगे से बेचो।

सपनों को कोई सपना कहता है? सपने सपने हैं। लेकिन जब आप कहते हैं, संसार माया है, तब समझ लेना, भीतर यह माया खींच रही है। वह प्राणों को जकड़ रही है। आदमी उसी को इंकार करता है जिसको वह भीतर से आकांक्षा दिलाती है। कहा कि तकलीफ क्या है। मन से निकल गई जबान से गई। लेकिन पता होना चाहिए जबान कभी गलती नहीं करती। जबान कैसे गलती कर सकती है? भीतर जो छिपा होता है कभी-कभी जबान से निकल जाता है। और जब भी जबान से कुछ गलती से निकल गया, जरा खयाल करना, वह भीतर छिपा होता है। वह अनकांशस माइंड का हिस्सा होता है। तब जबान से निकलेगा, ... नहीं निकल जाएगा, लेकिन...

दूसरे घर में गया, घर की महिला बाहर आई, सुंदर महिला ठगी रह गई एकदम उस आदमी पर जिसने कपड़े पहने थे। आग लग गई उसके दिल में आदमी की पुरुष की आंख हो तो बरदाश्त भी हो जाए, स्त्री की आंख को बरदाश्त करना मुश्किल हो गया, आगे बढ़ा लेकिन उसको किसी देखा नहीं, उस स्त्री ने पूछा कौन है यह, कहां से आप, कौन है यह? उसकी आंखों में... नसरुद्दीन ने कहा, मेरे मित्र हैं, दूर से आए हैं। और रह गए कपड़े तो कपड़े हैं मेरे... नसरुद्दीन की छाती पर बड़ी चोट लगी होगी, कहा, मैं किस मुंह से तुमसे क्षमा मांगूं? ... कहा, गलती हो गई, अब कभी भी बात नहीं करूंगा। ... कपड़े की बात नहीं करनी, कपड़े की बात नहीं करनी, वह सोचता चला जा रहा है। कपड़े की बात नहीं करनी अपने मन में सोच रहा है। ...

उसे कुछ भी सुनाई नहीं पड़ रहा है, उसे लग रहा है, लोग पूछ रहे हैं, कपड़े किसके हैं। वह अपने मन में कह रहा है बात ही करनी... कपड़े किसी के हैं। कपड़े से कोई मतलब नहीं, क्या हो गया इस बेचारे को? सारी मनुष्यता को क्या हो गया, सेक्स की बात ही नहीं करनी, सेक्स की बात नहीं करनी, और सेक्स ही सेक्स हे गया है।

क्या कहना चाहता हूं, चर्चा से इस चर्चा से यह कहना चाहता हूं कि इस देश में आने वाले मनुष्य को स्वस्थ, शांत, शक्तिशाली, समझदार बनना है, तो अब तक हमने जो सेक्स का जो दमन किया है, निंदा की है, गाली दी है... उसकी जगह लाओ सेक्स की समझ, ... उसके प्रति लाओ सेक्स के प्रति बुद्धिमत्ता, ज्ञान, एक-एक बच्चे को समझ दो, एक-एक बच्चे को समझपूर्वक जीन की कला दो, ताकि वह बच्चा अपने भीतर की वृत्तियों को पूरी तरह जान सके। उन वृत्तियों को पहचान सके, उन वृत्तियों से भयभीत न हो जाए, उन वृत्तियों से भागने न लगे, उन वृत्तियों से लड़ने न लगे, उन वृत्तियों को जाने। क्यों जानने पर जोर दे रहा हूं, क्योंकि मेरा खुद का अनुभव है, हम जिस वृत्ति को ठीक से जान लेते हैं वही वृत्ति शांत हो जाती है। अगर कोई व्यक्ति अपने आप को ठीक से जान ले तो क्राध शांत हो जाता है। फिर वह कितनी कोशिश करे ले क्रोध क्रोध कर ले क्रोध आएगा ही नहीं। क्योंकि यह जो आ रहा है क्रोध से और उसका क्रोध विलीन हो जाएगा। काम, सेक्स को समझने, पहचान ले वह जीवन का एक सामान्य हिस्सा रह जाएगा। विकृत हिस्सा वही और जितना ज्यादा सामान्य हो जाएगा। उतनी समझ बढ़ेगी फिर व्यक्ति उससे ऊपर उठना शुरू हो जाएगा।

और जिस व्यक्ति के भीतर सेक्स की ऊर्जा ऊपर ऊठनी शुरू हो जाती है उस व्यक्ति के जीवन में परमात्मा का द्वार खुल जाता है। क्योंकि मनुष्य के पास शक्ति सेक्स के सिवाय दूसरी नहीं है। सिवाय मनुष्य के पास

दूसरी शक्ति नहीं। वही शक्ति जब समझपूर्वक ऊपर ऊठनी शुरू होती है तो परमात्मा के द्वार खोल देती है, जीवन के रहस्य से ज्ञात हो जाती है। लेकिन गलत दिशा ने गलत सभ्यता ने मनुष्य की शक्ति के द्वार बंद कर दिए। और सब कुछ ऐसे बंद कर दिया है। ... एक-एक आदमी के भीतर सेक्स की ऊर्जा का... हो रहा है। ... विस्फोट हो रहा है। आदमी पागलखाने के अंदर पागल पागलखाने के बाहर पागल। दोनों तरह पागल है। बाहर वाले पागल और भीतर वाले पागल में बुनियदी फर्क वही है। ... हम थोड़े कम पागल, वे थोड़े ज्यादा पागल। हम इतने पागल है कि काम चला लेते हैं। पागल रहते हुए भी वे इतने पागल है कि काम चलना मुश्किल हो गया है। वे नब्बे डिग्री के पार निकल गए, हम नब्बे डिग्री के इस तरफ रह गए। अगर आप एक कमरे में दस मिनट तक कागज पर वह लिख दे जो आपके मन में चलता है। तो आप... घबड़ा जाएगा, दिमाग खराब हो गया है। ... भीतर जो चल रहा है उसका खयाल करो तो पता चल जाएगा कि भीतर... थोड़ा सा धक्का लग जाएगा। पूरी सभ्यता पागलपन में गई क्यों, सेक्स की जो ऊर्जा थी विकृत हो गई। अगर मनुष्य को शांत बनाना है तो सेक्स के प्रति दुर्भाव क्यों हो। सेक्स की समझ छोटे से छोटे बच्चे को मिलनी चाहिए। सेक्स के संबंध में होना चाहिए कि गंदी बात है। ... उसे पता चलना चाहिए। ... वह सेक्स सेक्स की पुकार है। अगर पता चले तो मार डालो... ।

पता है, पूरे जीवन का सारा सृजन सेक्स से हो रहा है, सारे जीवन की गति उससे है। सेक्स का परमात्मा ने सृजन में... सारे जीवन के विकास पर उसको गाली देते हैं। उसे समझो, उसे पहचानो, उसे जानो, उसकी शक्ति को जानने-पहचानने के लिए ज्ञानपूर्वक विश्वास करो, जीवन में ब्रह्मचर्य सफल होगा। ब्रह्मचर्य सेक्स की समझ से पूर्ण होगा।

सोचो, अगर मेरी बातें ठीक लगे, मान लो। मेरी बातें गलत हो सकती हैं। हो सकता है उनमें कोई न कोई सत्य दिखाई पड़ जाए, सत्य दिखाई पड़ जाए, तो वह तुम्हारा सत्य है। अपना सत्य मनुष्य को मुक्त करता है, अपना सत्य मनुष्य को जीवन देता है। अगर समझ गए, जीवन की गरिमा, जीवन का गौरव मिल जाता है। परमात्मा है तुम्हारे भीतर छिपी हुई ऊर्जा।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उससे बहुत अनुगृहीत हूं। अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

चौथा प्रवचन

हिंदुस्तान क्रांति के चौराहे पर है

यह भी मैं मानता हूं कि सत्य बोलने से बड़ा धक्का दूसरा नहीं हो सकता। समाज इतना झूठ बोलता रहा, इतना झूठ पर जी रहा है कि आप बड़े से बड़े शॉक जो पहुंचा सकते हैं वह यह कि चीज जैसी है वैसी सच-सच बोल दें।

प्रश्नः इसलिए कभी-कभी ऐसा भी हो जाता है कि लोग मानते हैं कि जो कोई धक्का दे सकता है वे सत्यवती हैं।

यह जरूरी नहीं है। यह जरूरी नहीं है। लेकिन फिर भी मेरा मानना यह है कि धक्का न देने वाले सत्य की बजाए धक्का देने वाला असत्य भी बेहतर होता है। क्योंकि धक्का चिंतन में ले जाता है। और चिंतन में बहुत देर तक असत्य नहीं टिक सकता। मेरी दृष्टि यह है कि चिंतन में, विचार में समाज जाना चाहिए। इससे बहुत फर्क नहीं पड़ता कि इनिशिअल धक्का अगर गलत भी था, और झूठ भी था, तो भी फर्क नहीं पड़ता। यानी वह सत्य जो हमें स्टैटिक बनाते हैं उन असत्यों से बदतर हैं जो कि हमें डाइनैमिक बनाते हैं। क्योंकि असत्य बहुत दिन नहीं टिक सकता, अगर चिंतन की प्रक्रिया शुरू हो गई है तो। और इस देश में तकलीफ यह है कि चिंतन चलता ही नहीं।

प्रश्नः वी हैव ए ट्रेडीशन फॉर द इंटलेक्चुअल डिसकशंस, इफ यू गो टु दि उपनिषद एण्ड निलंकार। नाउ वॉट यू आर फाइनली दैट यू आर ईवल बी "संशय आत्मा विनश्यति" वी स्टार्ट टेकिंग ए डोंट बाय टू टॉक। हाउ दिस चेंज ए केनवास?

कई तरह से। वह जिसको आप इंटलेक्चुअल ट्रेडीशन कहते हैं उपनिषद की, वे भी बहुत इंटलेक्चुअल नहीं थी, पहली बात। क्योंकि अगर आप एक सौ आठ उपनिषद उठा कर देखें, तो एक सौ आठ लाइन भी नहीं मिलेंगी, जिनको आप कहें कि हां ये कुछ हैं। रिपिटीशन, रिपिटीशन, वही, वही, वही। और वे भी जो बातें थीं, वे भी जो बातें थीं, वे भी इंटलेक्चुअल नहीं हैं। क्योंकि उपनिषद की पूरी की पूरी... जगह वह बियांड इंटलेक्ट है। यानी वे जो कह रहे हैं वह यह है कि सत्य जो है वह बुद्धि के अतीत है। तो जब तक, जब तक किसी को विश्वास दिलाना या तर्क करना है, तब तक वे तर्क करने में राजी हैं। और जैसे ही विश्वास खंडन करने वाला तर्क हो, वे कहते हैं, यह कुतर्क है। आप मेरा मतलब समझे न?

हिंदुस्तान की हजारों साल से यह अनवरत परंपरा रही है कि निषेध करने वाले तर्क को वे कुतर्क कहेंगे और सिद्ध करने वाले तर्क को वे तर्क कहेंगे। यह बड़ी खतरनाक और बेईमान बात है। वह जो कि जो तर्क मुझे सिद्ध करता है वह सही और जो मुझे गलत कर देता हो वह खराब। इसका दुष्परिणाम हुआ है। क्योंकि धीरे-धीरे तर्क ही कुतर्क हो गया। और दूसरी बात यह हुई कि यह सारी उपनिषद की और इन दिनों की सारी की

सारी परंपरा इंटलेक्चुअल नहीं है, मिस्टिक है। भारत की जो बहुत बड़ी परंपरा है वह मिस्टिक है। और मिस्टिक परंपरा हमेशा इररेशनल होती है, रेशनल नहीं होती।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

साक्रेटीज, साक्रेटीज जैसे एक बिल्कुल प्योरिफाई इंटलेक्ट है। वैसी कोई मिस्टिक एप्रोच की बात नहीं है। यद्यपि रीगन जब पूरी कोशिश करता है तो एक जगह पहुंचता है वहां मिस्टिसिज्म शुरू होता है। लेकिन रीगन उसकी बात नहीं करता कभी। कभी बात नहीं करता, उस मामले में चुप ही रहेगा।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां-हां, हो सकता है। हो सकता है। तो जैसे हिंदुस्तान में गौतम बुद्ध। गौतम बुद्ध की एप्रोच एक बंधी रेशनल है। और इसी वजह से बुद्धिज्म हिंदुस्तान में नहीं टिक सका। क्योंकि हिंदुस्तान की परंपरा इररेशनल है। गौतम बुद्ध नहीं टिक सके हिंदुस्तान में, क्योंकि पूरी की पूरी जो मेन करंट है वह मेन करंट इररेशनल है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, तो वहां जाकर बुद्धिज्म पूरा का पूरा इररेशनल हो गया इसलिए टिका। आप मेरा मतलब समझे न? हिंदुस्तान से बुद्धिज्म जैसे ही बाहर गया बर्मा या लंका या चीन वहां जाकर वह इररेशनल हो गया। इतना वह यहीं हो जाता तो यहीं टिक जाता। वहां बुद्ध तो गौण हो गए, स्वर्ग-नरक बन गए, और उनकी पूजा शुरू हो गई। और वे जिस बात से हिंदुस्तान में बुद्धिज्म लड़ा था, वे सबकी सब बातें उसने चीन में, बर्मा में स्वीकार कर लीं, इसलिए वहां टिक गया। वहां भी इररेशनल ट्रेडीशन ही थी। और बुद्धिज्म वहां टिका इसलिए कि वह इररेशनल होने को राजी हो गया। यहां अपनी मदरलैंड में वह इररेशनल होने को राजी नहीं हुआ। बुद्ध की हवा कायम थी, उसने लड़ने की कोशिश की, यहां हार गया। हारने से ही वह पराजित हो गया। पराजित मन लेकर बौद्ध भिक्षु हिंदुस्तान के बाहर गया। वहां जाकर वह राजी हो गया। उसने कहा कि लड़ नहीं सकते। जो कहते हैं वह मान लेना चाहिए। जैसे बुद्ध को मैं कहता हूं कि यह आदमी एक बिल्कुल एब्सोल्यूट रेशनल एप्रोच है। जैसे आज के युग में जैसे विट्गिंस्टीन, ऐसे लोगों की एप्रोच।

प्रश्नः चार्वाक मेक एवरी राइट टू कंट्रीब्यूशन टू बाय द टेकन।

बहुत मेहनत की। बहुत मेहनत की। लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि चार्वाकों के पास कभी कोई बहुत बुद्धिमान आदमी नहीं रहा। इसलिए जो चर्चा उन्होंने चलाई बहुत नीचे तल पर थी। यानी वह कभी मैटाफिजिकल नहीं हो सकी। वह कभी ऐसे नहीं हो सकी कि चार्वाक को भी ऐसा नहीं हो सका कभी कि जैसे ह्यूम है, जैसे ह्यूम ने जो बात चलाई नास्तिकता की भी, तो उसमें एक बड़ा तर्क है, बड़ा विचार है। चार्वाक

का मामला कुछ ऐसा मालूम पड़ता है कि वह बहुत सिंपल है, डोनेज्म है, खाओ-पीयो-मौज करो। लेकिन उसमें कोई ऐसा तर्क नहीं है कि आप...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

एपीकुरस तो बहुत अदभुत है। एपीकुरस जैसा मामला चार्वाकों का नहीं है। एपीकुरस तो रेयर फेनामिना है मनुष्य-जाति के पूरे इतिहास में। यानी एपीकुरस के मुकाबले में आदमी खोजना मुश्किल है, इतना प्यारा आदमी है। चार्वाक अगर एक भी एपीकुरस पैदा कर देते, तो उस समय परंपरा टिक जाती। वह नहीं हो सका। और उसका कुल कारण इतना है कि हिंदुस्तान की पूरी की पूरी परंपरा इतनी इररेशनल है कि एपीकुरस कैसे पैदा हो, एपीकुरस तो बड़ा रेशनल आदमी है। यह मामला... है। एपीकुरस का मामला इन लोगों से बहुत प्यारा है। और यह जो, और तब यह हुआ धीरे-धीरे, धीरे-धीरे तीन हजार वर्ष निरंतर दोहराने से कि विश्वास करो, विश्वास करो, संदेह मत करो, भटक जाओगे। इसमें फायदा है गुरुओं को विश्वास कराने में। तो ठीक है, वे समझाते रहें। और हिंदुस्तान जो है वह धीरे-धीरे गुरुओं का देश बन गया।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

दो-तीन बातें मेरे खयाल में हैं। एक तो यह कि जिस तरह की बात मैं कह रहा हूं शायद इस तरह की बात सुनने की तैयारी हिंदुस्तान में पहली दफा पैदा हुई है, पश्चिम के संपर्क से। यानी हिंदुस्तान की मानसिक हवा एक बहुत बड़ी बदलाहट के किनारे खड़ी है। जैसा कि कभी नहीं हुआ था। हिंदुस्तान के साथ एक मजा हुआ कि हिंदुस्तान में मुगल आए, हूण आए, लेकिन वे सब हमसे कम वि.जन के लोग थे। हिंदुस्तान को अंग्रेजों के पहले जितने लोगों से संपर्क पड़ा, वे सब के सब लोग सांस्कृतिक और बौद्धिक रूप से हमसे निम्नतल के थे। इसलिए उनका कोई इंपेक्ट हम पर नहीं हुआ। बल्कि वे हमारे इंपेक्ट में आकर बदल गए।

पहली दफा अंग्रेजों के साथ संपर्क में आने पर हमें एक बिल्कुल ही डायमेट्रिकली अपोजिट किस्म की इंटलेक्ट से मुकाबला पड़ा। इसलिए क्राइसिस पैदा हो गई। और वह क्राइसिस चल रही है। इस क्राइसिस के वक्त में मुझे आशा बनती है कि हिंदुस्तान के माइंड को कंप्लीट टर्न दी जा सकती है, इस क्राइसिस के वक्त में। क्योंकि पुराने माइंड ने जड़ें छोड़ दी हैं। वह मरने के करीब है। नया माइंड पैदा होने की तैयारी कर रहा है। अगर हमने नये माइंड को पैदा करने की इस वक्त अगर पंद्रह-बीस साल सतत मेहनत की, तो निश्चित रूप से हिंदुस्तान वह कभी नहीं हो सकेगा जो था। और अगर हमने यह कोशिश नहीं की, अगर यह कोशिश नहीं की तो हिंदुस्तान वापस लौट कर रिवर्स अपनी हालत पकड़ लेगा।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

मैं समझा। नहीं, पश्चिम में यह हो जाएगा। उसका कारण है, उसका कारण है। पश्चिम में इधर डेढ़ सौ, दो सौ वर्षों में बुद्धि से इतना श्रम किया है कि बुद्धि थक गई है, और विश्राम चाहिए। तो कोई भी तरह का विश्राम ठीक मालूम पड़ रहा है। तो ये जो हिंदुस्तान के महर्षि फलां-ढिंका महेश इत्यादि पहुंच जाते हैं, ये सब पश्चिम

को सोने की तरकीब बताने में सुविधापूर्ण मालूम पड़ रहे हैं। इनकी जो अपील है वह किसी मिस्टिसिज्म-विस्टिसिज्म की अपील नहीं है। वह सिर्फ पश्चिम की बुद्धि थक गई है, बुरी तरह थक गई है। दो महायुद्धों ने बुरी तरह थकाया है और वह इतनी घबड़ा गई है कि हम जो कर रहे थे कि पता नहीं वह ठीक है या नहीं। गड़बड़ हो गया है सब। जो आज से चालीस साल पहले पश्चिम में आत्मविश्वास था वह खो गया है। दो महायुद्धों में खो दिया। कोई भी खो देगा। हमने तो कोई युद्ध भी नहीं देखे, हमारा कोई आत्मविश्वास नहीं है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

पहली बात कि आप हैप्पी नहीं हैं, एक बात। और दूसरी बात, ...

प्रश्नः विदाउट मारिजुआना वी आर हैप्पी।

न-न, काहे के हैप्पी हैं आप? गांजा-भांग-अफीम सब कर रहे हैं, वह सब मारिजुआना है पुराने किस्म का। इससे कोई फर्क पड़ता है। मारिजुआना वे हमसे सीख रहे हैं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

और वह जो फिलासफिकली भी जो हमने टेक्नीक निकाली राम-राम जप कर माला फेरने की, वह मारिजुआना जैसा ही है, उसमें कोई फर्क नहीं है। उसमें कोई फर्क नहीं है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

यह जो आप कह रहे हैं न, यह जो आप कह रहे हैं, यह बात पूछने जैसी, समझने जैसी जरूरी है, कि अगर वे थक गए हैं और परेशान हो गए हैं, तो अब हम और किसलिए उसी रास्ते पर जाकर परेशान हों? मेरा कहना यह है कि वे थक गए हैं और परेशान हो गए हैं, उसका कारण उस रास्ते पर जाना नहीं था। उसका कारण इतना ही था कि पूरे वे भी उस रास्ते पर नहीं जा सके। और माइंड कांफ्लिक्ट होता गया, इसलिए थक गए। कांफ्लिक्ट थकाती है। पूरी की पूरी क्रिश्चिएनिटी की ट्रेडीशन हमसे भी ज्यादा इररेशनल है।

तो हुआ क्या है कि पश्चिम में जो रीगन आया वह कोई पूरे वेस्ट माइंड में नहीं आ गया। एक छोटे से टुकड़े में आया। और सारा माइंड लेथार्जिक बना रहा। सारा माइंड पूरा का पूरा एक हजार साल पुराना है। सिर्फ थोड़े से इंटेलक्चुअल क्लास--साइंटिस्ट का, इंटलेक्चुअलस का, लिटररि परसन का, उसने बगावत की। वह छोटा सा वर्ग लड़ा इसके खिलाफ। वह लड़ कर थक गया। और यह वर्ग कभी भी जबरदस्ती खींचा गया। वह कभी राजी से गया नहीं इसकी तरफ। और उसके मन में हमेशा इच्छा रही कि कोई भी मौका मिल जाए हम वापस लौट जाएं। दो युद्धों ने उसे मौका दे दिया कि गलत थे तुम। तुम्हारी सारी प्रोग्रेस गड़बड़ थी। हम पीछे ही ठीक थे।

मेरा अपना कहना है कि हिंदुस्तान में यह कहानी मुक्त होने की जरूरत नहीं है। अगर हिंदुस्तान के पूरे माइंड को राजी किया, और वह राजी किया जा सकता है। क्योंकि वेस्ट कभी भी इस तरह की कांफ्लिक्ट में नहीं था जिसमें हम पड़े हैं। यह बहुत ही डिफरेंट है। वेस्ट में इंटलेक्ट भीतर से पैदा हुई थी, कोई क्राइसिस बाहर से नहीं आ गई थी। हमारे सामने एक बहुत ही फेनामिनल घटना है कि वेस्ट से क्राइसिस आकर खड़ी हो गई है। सारी शिक्षा वेस्टर्न है, सारा माहौल वेस्टर्न है, सारी हवा वेस्टर्न है। आने वाले पच्चीस वर्षों में हम वेस्टर्न होंगे, इससे बच नहीं सकते हैं। और अगर हमारा माइंड इस पूरी क्राइसिस में राजी हो जाए...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

और अगर हम उलटा मुंह करके चलते हैं तो हम बेवकूफ हैं। और इस मौके का अगर पूरा हिंदुस्तान फायदा उठाए, तो मेरी अपनी समझ यह है कि आने वाले पचास वर्षों में हिंदुस्तान दुनिया में सबसे बड़ा इंटलेक्चुअल एक्सप्लोजन पैदा कर सकता है। जितना कभी किसी कौम ने नहीं किया हो। उसके कारण हैं। क्योंकि दो हजार, ढाई हजार साल का डारमेंट माइंड है। और दो हजार साल की एनर्जी बिल्कुल अनयूज्ड पड़ी है। अगर एक बार इसमें इग्नीशन पकड़ जाए तो इतना बड़ा एक्सप्लोजन होगा--जैसे कि किसी खेत को दो हजार साल तक बोया न गया हो और पड़ोस के खेत बोए जाते रहे हों, और दो हजार साल बाद उस खेत में बीज डाल दिए जाएं, तो जो क्राप आए...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, आई एम रोमांटिक। बिना रोमांटिक हुए जीना ही मुश्किल है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, इंडिविजुअल माइंड एकदम इंडिविजुअल नहीं है। इंडिविजुअल माइंड का बहुत छोटा हिस्सा इंडिविजुअल है; बहुत बड़ा हिस्सा सोया है, अकलेक्टिव है। इग्नीशन तो इंडिविजुअल माइंड से ही जाएगी। लेकिन बहुत इंडिविजुअल की चली जाए तो कलेक्टिव माइंड में आकर पड़ जाती है। और वह जो कलेक्टिव माइंड है... बिल्कुल रोमांटिक ही है यह बात, क्योंकि सभी अच्छी बातें रोमांटिक होती हैं। और जो कौम रोमांटिक होना ही बंद कर देती है वह मारे जाती है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, सपने देखना चाहिए। नीत्शे ने कहीं कहा है कि वह कौम नपुंसक है जिसकी प्रत्यंचा पर तीर चढ़ने बंद हो गए हैं। वह कौम नपुंसक है जिसने सपने देखना बंद कर दिए हैं। वह कौम नपुंसक है जो अपने को घृणा करना बंद कर देती है। क्योंकि घृणा करते हैं तो बियांड जाते हैं। तो मुझे पसंद है यह। जैसे नीत्शे का नाम लिया, आप खायल में रखेंगे, वह भी मुझे बहुत प्रीतिकर है वह आदमी।

प्रश्नः दस स्पीक जरथुस्त्रा!

अदभुत किताब है, कोई मुकाबला नहीं है उस किताब का। कोई मुकाबला नहीं है। वह तो हमारे मुल्क में होती तो हम गीता बना देते।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

जरा भी नहीं। मगर मैं तो नहीं मानता, लेकिन ऐसे डिसाइपल भी हो सकते हैं। मैं डिसाइपल कभी नहीं मानता।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

बहुत एफर्ट करने पड़ते हैं। बहुत एफर्ट करने पड़ते हैं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

पहली तो बात यह है, पहली तो बात यह है कि गुरु होने की जो पात्रता है उस सबको मैं अपने में खंडित करता हूं।

प्रश्नः एंटी पर्सनैलिटी।

हां। गुरु होने की पात्रता भी अर्जित करनी पड़ती है। चरित्र बनाना पड़ता है। तो ये सारे पागलपन हम लोग करते हैं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां। दूसरी बात, गुरु होने के लिए--गुरु न होने के लिए बहुत करने की जरूरत नहीं है--गुरुहोने के लिए बहुत कुछ करना पड़ता है। गुरु होना बिल्कुल पाजिटिव एफर्ट है। क्योंकि कोई आदमी दुनिया में शिष्य होना नहीं चाहता बुनियादी रूप से।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

वह सब गुरु की चेष्टा से ही संभव हो पाता है। हजारों साल से गुरु समझाते हैं कि गुरु के बिना ज्ञान नहीं, गुरु के बिना ज्ञान नहीं। गुरु के चरण पकड़ कर ही पार होओगे। यह सब समझाना पड़े, गुरु बनना पड़े। गुरु होने के लिए पूरा पाजिटिव व्यवस्था देनी पड़ती है। तो मैं कोई पाजिटिव व्यवस्था नहीं देता। ...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

यह भी जरूरी है न, फेक होना बहुत जरूरी है गुरु होने के लिए। गुरु होने के लिए फेक होना जरूरी है। गुरु होना बड़ा मुश्किल है। और दूसरी बात, फिर भी इतनी सारी कोशिश के बाद भी डिसाइपल्स आ जाते हैं। उनको सब तरह से निराश करने पर भी आ जाते हैं। बल्कि एक खतरा है, कि जितना उनको निराश करो उनको लगता है कि गुरु के पास ज्यादा होना चाहिए। यह खतरा है पूरे वक्त। क्योंकि जो गुरु इंकार करता है उसके पास जरूर कुछ होना चाहिए।

प्रश्नः यंग पीपल टू प्ले फुटबॉल रादर दैन टू डू मेडिटेशन।

ठीक कहते हैं, ठीक कहते हैं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

बहुत दूर तक ठीक कहते हैं वे, बहुत दूर तक ठीक कहते हैं। लेकिन मेरा कुछ थोड़ा सा फर्क है। मेरा कहना यह है कि फुटबॉल खेलते हुए भी मेडिटेशन की जा सकती है। मेडिटेशन को फुटबॉल से तोड़ने की जरूरत नहीं है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

नहीं-नहीं, क्योंकि विवेकानंद जो हैं एक तो गुरूडम के विश्वासी हैं। जो एकदम खतरनाक बात है। बड़ी खतरनाक बात है। गुरूडम के विश्वासी हैं, ट्रेडीशंस के विश्वासी हैं। वह सब पुराने शास्त्र का अति आग्रह है मन में। और वे जो कुछ भी कह रहे हैं, जो कुछ भी कह रहे हैं, वह सब का सब इस पुराने को ही सिद्ध करने और सही बताने की चेष्टा में कह रहे हैं।

मेरी नजर में जीवन की गति हमेशा जो पुरानी कंटीन्यूटी है उसको तोड़ने से होती है। तो ओल्ड को रोज-रोज मरना चाहिए। उसकी छाती पर बैठे नहीं रहना चाहिए। उसको विदा होना चाहिए।

प्रश्नः वॉय दिस... एंटी-थीसिस एंड थीसिस?

नहीं, यह जो मामला है थीसिस, एंटी-थीसिस और सिंथीसिस का, वह कंटीन्यूटी का मामला है। तो वह जो थीसिस जो है वह एंटी-थीसिस में कंटीन्यू करती है, सिंथीसिस में कंटीन्यू करती है। फिर सिंथीसिस थीसिस

बन जाती है। दैट इ.ज ए प्रोसेस ऑफ कंटीन्यूटी। वॉट आई एम सेइंग, आई बिलीव इन द डिसकंटीन्यूस माइंड। मेरा कहना यह है कि कंटीन्यूटी रोज टूट जानी चाहिए।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, हाइपोथिसिस। अभी तो हाइपोथिसिस ही होगी। लेकिन मेरा कहना है यह, मेरा कहना है यह कि दुनिया में कंटीन्यूस कुछ भी नहीं है, कंटीन्यूटी इ.ज ए एपीएरेंस। और अब वह एपीएरेंस को अगर हम जोर से पकड़ लेते हैं, देन ए स्टैटिक माइंड मिसक्रिएटेटिव। ए माइंड रीच...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

ऑफकोर्स! एवरी मोमेंट यू हैव टू डाई, एवरी मोमेंट डेथ, दैन यू कैन अचीव एवरी मोमेंट्स लिविंग। वह तो ठीक ही है, क्योंकि मरते तो ही हम जी सकते हैं। तो जितनी टोटल से मरते हैं, जितने टोटल मर जाते हैं, जितनी टोटल, उतनी टोटल लाइफ पैदा होती है। आउट ऑफ द टोटल डेथ कम्स ए टोटल लाइफ। और हम चूंकि मरते ही नहीं कभी, इसलिए हम कभी जिंदा नहीं रहते।

तो वह जो विवेकानंद जो कहते हैं वह रजस और तमस का मामला नहीं है। वह रजस-तमस का मामला नहीं है। वह उनको लगता है कि मछली खाओ तो एक रजत आ जाएगा। यह रजत-तमस का मामला नहीं है। मामला है मांग का जो कि कंटीन्यूटी से जकड़ गया है और डिसकंटीन्यूस नहीं हो रहा है। वह रजत... सो मच एनर्जी इ.ज रिलीज्ड, देन ए डिसकंटीन्यूस मोमेंट। जिसका कोई हिसाब नहीं। वह सारी की सारी हमारी एनर्जी है वह कंटीन्यूटी के जाल में जकड़ जाती है, बंद हो जाती है। इतनी कंटीन्यूटी है हमारे माइंड की, भारतीय माइंड की कि इसमें हम पतंजलि और वेद और बुद्ध और नागार्जुन और रामानुज और गांधी ये सब इस तरह बैठे हुए हैं कि हमें होने का कोई मौका ही नहीं देते कि मैं भी हो जाऊं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां-हां, वह जैसे ही बनी वैसे ही खतरनाक हो गई, ... हो गई, वैसे ही मैं दुश्मन हो गया, वैसे ही मैं दुश्मन हो गया। रिवोल्यूशनरी सी.ज, रिवोल्यूशन शुड नॉट। --ड़ेड बनने लगा कि मुझे फेंकना चाहिए उठा कर उसी वक्त। और जो मुझे मानते हैं और प्रेम करते हैं उनको सबसे पहले मुझे फेंक देना चाहिए, उसी वक्त।

एक मुझे झेन फकीर की एक घटना याद आती है। एक झेन फकीर मर रहा है। अस्सी साल का हो गया है। उसके शिष्यों ने हजारों दफा उससे प्रार्थना की कि तुम कुछ लिख दो, और वह हंसता है और वह कहता है कि बहुत लिखा जा चुका, उसको जलाने को मैं कहता हूं, मैं कैसे लिख दूं? पर वे कहते हैं कि तुम इतना जान लिए हो, तुम कुछ तो लिख ही डालो, हम क्या करेंगे।

मरते वक्त कोई एक लाख आदमी इकट्ठे हैं। वह लेटा है, वह अपने तकिए में से एक किताब निकालता है और अपने प्रधान, जो जिसको अपना प्रधान शिष्य समझता था उस झेन फकीर का, वह उससे कहता है कि ले, तुम नहीं मानते तो मैंने लिख दिया है, इसे सम्हाल कर रख ले, क्योंकि यह हजारों साल काम आएगी। इसमें मैंने

वे सूत्र लिख दिए हैं जो लाखों वर्ष तक उपयोगी होंगे। वह शिष्य हाथ में लेता है, नमस्कार करता है उस किताब को और सामने आग जल रही है उसमें ऐसा फेंक देता है बिना खोले। वह गुरु उठ कर उसको छाती से लगा लेता है। एकदम चीख-पुकार मच जाती है कि यह क्या हुआ! सारे लोग रोने लगते हैं। तुमने किताब क्यों फेंक दी? आग थी किताब तो जल गई।

और गुरु कहता है कि अगर तूने किताब बचा ली होती तो मैं मर जाता बेकार और मैं समझता कि एक आदमी भी पैदा नहीं हुआ जो मुझे समझता था। और किताब में कुछ भी नहीं लिखा था। किताब कोरी थी। अगर तू खोल कर भी देखता तो मैं दुखी हो जाता। मरते वक्त मैं खुश जा रहा हूं कि एक आदमी है जो मुझे समझता है क्योंकि वह मुझे आग लगाने को तैयार है।

तो वे तो बिल्कुल ठीक कहते हैं, वे तो बिल्कुल ही ठीक कहते हैं कि वह तो जैसे ही एक पुराना हटा कि वह हमारा जो माइंड है आदी पकड़ने का वह क्लीन करता है, वह उसको क्लीन कर लेगा। तो लड़ाई जारी रहेगी। मैं उसको कहूंगा नहीं कि लड़ाई जारी रखें, जारी रखनी पड़ेगी। यानी मैं तो अपनी पूरी कोशिश करूंगा कि वे मुझे न पकड़ ले। लेकिन मेरी कोशिश के बावजूद, जैसा आप कहते हैं, वह पकड़ेगा। तो वह उसके जो मित्र हैं वे तैयार करना पड़ेगा कि वे मुझसे छुड़ाने की तैयारी रखें।

क्रांतिकारी मर जाने चाहिए, क्रांति जारी रहनी चाहिए। क्रांति कभी नहीं रुकनी चाहिए। और मैं तो यह क्वांटम को बड़े ही खयाल से देखता हूं, बहुत खयाल से देखता हूं।

प्रश्नः अरविंद आइडियॉज अबाउट द सुपरावि.जडम।

बातचीत ज्यादा है। अरविंद के मामले में अरविंद जो हैं वे एक सिस्टममेकर। थिंकर नहीं, सिस्टममेकर। वह सिस्टममेकिंग भी सरल बात है, कि शब्दों को कैसे फैलाते जाओ मकान में, दीवाल पर फैलाते चले जाओ। तो अरविंद के साथ सत्य बहुत कम हैं। अरविंद के साथ वह ओल्ड सिस्टमटाइजर है, जैसे शंकर हुए, और रामानुज, और वल्लभ, वही आदमी हैं।

मेरी अपनी दृष्टि है कि ट्रूथ आलवेज कम्स इन फ्रेग्मेंट्स, इट नेवर कम्स एनी सिस्टम। ये कमियां थीं। मेक ए सिस्टम आउट ऑफ ट्रूथ, बिकाज द मोमेंट सिस्टम इ.ज मेक ट्रूथ डाइज। सिस्टम इ.ज आलवेज डेड। बीकाज सिस्टम मींस ए स्ट्रेक्चर। ट्रूथ इ.ज आलवेज लिविंग, सो इट गोज बियांड एनी सिस्टम।

दुनिया में ये जो सिस्टम्स बने हैं कि जैनियों की सिस्टम, बौद्धों की सिस्टम, हिंदुओं की, जैसे ही सिस्टम बने कि ट्रूथ मर जाता है। ट्रूथ को कभी सिस्टम नहीं बनना चाहिए। तभी वह डिसकंटीन्यूटी जारी रह सकती है। और अरविंद सिस्टममेकर हैं। उनसे तो रमण बहुत अदभुत आदमी हैं। रमण में कुछ बात है। अरविंद में कुछ ऐसा मामला ज्यादा नहीं है। कुछ कीमत की बात नहीं है। अति साधारण हैं। लेकिन हो गए जीनिअस हैं। वही एक सिस्टममेकर जीनिअस। जैसे प्लेटो है, कई इस तरह के लोग हैं। लेकिन वह जेन्यून ऑथेंटिक बात नहीं है जो कि फ्रेग्रेंस में आती है। ट्रूथ... फ्रेग्मेंट, वह कभी नहीं आता ऐसा कि पूरा का पूरा मिल गया और तुमने सारी दुनिया का सब समझा दिया कि यह इस तरह होता है, यह इस तरह होता है, यह इस तरह होता है, यह इस तरह होता है।

उसकी तो झलक मिलती है। और झलक ही मिल जाए तो बहुत है। और उस झलक से कुछ पता नहीं चलेगा। लेकिन होता क्या है, सिस्टममेकर न हो, तो एक तरकीब मिल जाए आपको, बस फिर उस तरकीब को फैलाते चले जाइए और सारे सिस्टम बना लीजिए।

प्रश्नः इफ आई एग्री फॉर इनर क्वेश्चन, यू हैव टॉक अबाउट फ्रेग्मेंट ऑफ ट्रूथ, यू एक्ट एनी मोमेंट, ... रियलाइजेशन ऑफ दैट फ्रेग्मेंट ऑफ ट्रूथ।

जैसे ही, जैसे ही हम कहें कि हां, सिस्टम शुरू हो गई।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

बिल्कुल वह डर है। वह डर है। वहसभी, सभी ट्रेडीशनल माइंड का डर हमेशा यही है कि जो पुराना है वह परिचित है, उसे नष्ट कर दें, नया होगा कि नहीं होगा उसका क्या भरोसा है। पुराना माइंड होता ही सिक्युरिटी लग रही है इसलिए वह पुराना है। और मेरा कहना है कि जो भी आदमी सिक्युरिटी को पसंद करता है, सुरक्षा को पसंद करता है, सुविधा को पसंद करता है, और वह मानता है कि जो परिचित है उसी में रुक जाना, वह आदमी मर गया, वह आदमी जिंदा नहीं है। जिंदगी इनसिक्युरिटी है। मैं नहीं कहता कि नया जो होगा वह पुराने से बेहतर ही होगा। पर मैं इतना कहता हूं कि पुराने को तोड़ने की हिम्मत इतनी बेहतर है, पुराने को मिटाना इतना बेहतर है, और जो पुराने को तोड़ सकता है, पुराने को तोड़ने की हिम्मत जुटा सकता है, उससे जरूर कुछ पैदा होगा। और यह भी फिकर की बात नहीं है कि वह पुराने से बेहतर ही होना चाहिए। मेरा कहना है कि उसका नया होना ही बहुत बहुमूल्य है। वह उसका नावीन्य है। वह थिरक, वह पुलकनये की, वह अज्ञात और अपरिचित मार्गों पर जाना।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

बिल्कुल ही। बिल्कुल ही।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

मैं समझ गया। अगर आप हर बार जिम करना पड़ता है आपको, सोचना पड़ता है, तो डबिंग हो जाए। अगर आप इसको प्लान करते हैं, सोचते हैं, विचार करते हैं और विल करते हैं, और फिर उसको बनाते हैं तो यह जरूर होगा। लेकिन इफ इट बिकमस योर वेरी लिविंग दैन इट इ.ज नॉट वेल। दैन इट इ.ज, इट इ.ज दि ओनली थिंग दैज इ.ज नॉट वेल। क्योंकि वह जो ओल्ड है वह बोरिंग हो जाता है। एक कुर्सी इस कमरे में रखी है, वह कल भी रखी थी, आज भी रखी है, परसों भी रखी है, तो यह जो चलेगा, यह ओल्ड बोरिंग हो जाएगा। वह जो माइंड जो कांस्टेंटली न्यू को क्रिएट करता है, विल नहीं करता, क्रिएट्स, द स्पांटेनिटी।

प्रश्नः मेरा खयाल है कि रोड को जरा-जरा सा चेंज करते रहो।

यह जो हम कहते हैं न कि जरा-जरा चेंज करते रहो, उसी से बोर्डम पैदा होगी। उससे बोर्डम पैदा होगी। क्योंकि बोर्डम का मतलब ही यह है कि हम परिचित के भीतर खड़े हैं जिसमें कुछ भी अपरिचित नहीं है। वह जो परिचित है वह बोर करता है, वह जो अपरिचित है वही रस लाता है। तो वह जो थोड़ा सा आप बदलाहट करते हैं, तो थोड़ी बोर्डम कम होगी, क्योंकि थोड़ी सी बदल गई चीज। लेकिन अगर पूरी बदल जाए तो जिंदगी एक पुलक, एक एडवेंचर, एक थिरक और एक नाच हो जाएगी। और वह जो जिंदगी का नाच है जो रोज बदलता जाता है...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

आइडियल सिचुएशन। अगर वह हो जाए, यानी कई बार ऐसा मन होता है कि अगर आदमी पुराने को छोड़ने राजी नहीं है, तीसरा महायुद्ध हो जाना चाहिए। और हो जाएगा अगर हमने पुराने को बदलने की हिम्मत नहीं जुटाई तो। क्योंकि फिर बदलने का एक ही रास्ता रह जाता है। बोर्डम इतनी हो जाएगी। मेरा अपना मानना है कि आउट ऑफ बोर्डम वॉर इ.ज क्रिएटेड।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

अगर बोर्डम रहती है तो वॉर जरूरी है। क्योंकि वॉर ही थोड़ा सा रस देती है। जैसे पाकिस्तान-हिंदुस्तान बन गया, बड़ा रस आया। सुबह से ही उठ कर लोग पांच बजे से रेडियो खोल रहे हैं, अखबार देख रहे हैं। उनकी चेहरों पर पुलक और रंग और आंखें देखने लायक थीं कि कुछ हुआ।

प्रश्नः रेज ऑफ सुसाइड फॉल डाउन वॉर टाइम।

गिर जाते हैं, बिल्कुल गिर जाते हैं। सुसाइड गिर जाता है, मर्डर गिर जाते हैं, चोरी कम हो जाती है, डाके कम हो जाते हैं। क्योंकि इतना रस आता है वॉर में कि यह काम कौन करे। ये भी रस लाने के लिए ही किए जाते हैं। ये भी आउट ऑफ बोर्डम पैदा होते हैं। तो मैं तो मानता हूं कि बोर्डम ओल्ड के साथ ओल्ड जब तक हजार रहेगी।

प्रश्नः अगर ऐसा है तो हिटलर के बारे में क्या खयाल है आपका?

अडोल्फ हिटलर बिल्कुल ही मरा हुआ आदमी है। कुछ भी जिंदगी नहीं है। पूरे वक्त मरा हुआ आदमी था, और इसीलिए अपील कर गया वह पश्चिम में। इस वक्त पश्चिम में मरे हुए आदमियों की अपील है। वह लड़ कर थक गया पश्चिम है। इसलिए... जारी रह जाती है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

चेंज। चिंतन बंद होती है, एक-एक आदमी चिंतन बंद करवा देता है। वह आपको मौका देता है कि आप थिंक मत करो मैं थिंक करता हूं, हम सब बताते हैं, वे सब सोचना शुरू करते हैं। लोग राजी हो जाता है कि ठीक, चिंतन से मैं घबड़ा गया। कोई भी कर्म, कि हम तुम्हारे लिए कर देते हैं काम, हम तुम्हारा पैर पकड़ लेंगे। पश्चिम थक गया है थिंकिंग से, इसलिए फॉसिज्म और स्टैलिन और हिटलर, और यह इस तरह की सिस्टमस, कम्युनिज्म की डेड सिस्टम, वे सब पैदा हो रही हैं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

वह डिस्ट्राय हो जाए इसीलिए तो वे एक आर्यन ओल्ड टेंसिव ट्रेडीशन के मुकाबले इसको डिस्ट्राय करना चाहता था। यानी ओल्ड को बचाना चाहता था। और लोगों को डिस्ट्राय करना चाह रहा था। लेकिन और जिसको वह ओल्ड मानता था वह उसके करीब नहीं था यह। वह यहूदी को मिटाना चाहता था ताकि वे आर्य बच जाए। लेकिन ओल्ड के लिए नये को डिस्ट्राय करने जा रहा था। मैं ओल्ड को डिस्ट्राय करना चाहता हूं नये के लिए। तो बुनियादी फर्क है। उलटा फर्क है। हिटलर तो बहुत ही प्रिमिटिव माइंड था। उसको हम कंटेम्प्रेरी नहीं कह सकते आदमी को।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

कंटेम्प्रेरी होना बहुत मुश्किल है। यानी मैं लिविंग आदमी के लिए कह रहा हूं, वही कंटेम्प्रेरी हो सकता है। हम सभी पिछड़ जाते हैं। सभी पिछड़ जाते हैं।

प्रश्नः हिप्पी एण्ड द अदर फेलो, हू आर जस्ट ट्राइंग टु वेल टु ट्रेडीशन।

वर्थ वेलकमिंग। वर्थ वेलकमिंग। बड़े अच्छे लोग हैं। हिंदुस्तान का सौभाग्य होगा जिस दिन हम भी हिप्पी और को... एक दिन पैदा कर सकें। वह चेतना का लक्षण है कि कुछ लोग बगावती हैं, हिम्मती हैं, पुरानी धाराओं को तोड़ते हैं, कहते हैं कि नहीं साथ रहेंगे लड़की के लेकिन विवाह क्यों करें, प्रेम काफी है। बड़ी बढ़िया बात है। जिस दिन सारी दुनिया में यह होगा तो बहुत अच्छी बात होगी। हिम्मतवर लोग हैं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

एक दिन जिस दिन बुद्ध जैसा आदमी राजमहल को छोड़ कर निकला था, तो मेरे हिसाब में बिल्कुल हिप्पी जैसा है। अब वह शब्द जरा मुश्किल मालूम पड़ेगा। लेकिन बुद्ध जैसा आदमी राजमहल छोड़ कर गया, हिप्पी है। महावीर हिप्पियों से भी बड़ा हिप्पी है, नंगा खड़ा हो गया राजमहल छोड़ कर। तो उस वक्त लोगों ने कहा होगा, पागल हो। फिर ट्रेडीशन बन गई। अब महावीर का मुनि जो है वह तो मरा हुआ आदमी है, वह भी

नंगा खड़ा होता है। वह ट्रेडीशन की वजह से खड़ा हो रहा है। बस यहीं सब मुश्किल हो जाता है। सब चीज ट्रेडीशन बन जाती है। और नहीं बननी चाहिए, उसकी फिकर करनी चाहिए। उसके लिए कुछ...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

बस पोएट्री जीता हूं लिखता थोड़े ही। जो नहीं जीते वे लिख कर मन समझाते हैं। क्या बात है लिखने की पोएट्री। जिंदगी पोएट्री होनी चाहिए। सुबह-शाम सब पोएट्री हो।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

बिल्कुल, बिल्कुल ही, बिल्कुल ही, यह होता है, यह होता है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

नो, दि वेरी लाइफ इ.ज पोएट्री। इफ यू नो हाउ टू लिव द होल लाइफ ए.ज सच बिकम्स पोएट्री। दि वेरी बीइंग बीकम्स पोएट्री। दि वेरी एक्झिटेंस बीकम्स पोएटिक। और जिनको आप पोएट कहते हैं, और जिसको आप पोएट्री कहते हैं, वह भी पूरी पोएट्री-वोएट्री नहीं होती। दस-पच्चीस लाइनों में एकाध लाइन भी पोएट्री हो तो बहुत है। और वह लाइन हमेशा वहां से आती है जहां लिविंग पोएट्री से जुड़ जाती है। वह लाइन हमेशा वहां से आती है। और बाकी तो सब जोड़-तोड़ है, कंस्ट्रक्शन है, क्रिएशन नहीं है। पूरी रामायण उठा कर देखो आप दो-चार पंक्तियां पोएट्री मिल जाएं तो बहुत मुश्किल है, बाकी तो सब बकवास है, जोड़-तोड़ से ज्यादा कुछ भी नहीं है। वह कोई भी आदमी जो थोड़ा सा बुद्धू हो सकता है बिठा सकता है, बना लेगा पोएट्री।

लेकिन जिसको मैं कह रहा हूंः आउट ऑफ लिविंग पोएट्री, दि पोएट्री इ.ज बार्न। वह कभी एक किसी क्षण में कोई एक पंक्ति उतर आती है जब आप जी रहे होते हैं पूरे, कभी पोएट्री बन जाती है। लेकिन वह भी बनाने का आग्रह, वह जो पोएट्री लिखने का आग्रह है, वह भी इसीलिए है कि मैंने एक सुबह सूरज देखा, तो सुबह के इस क्षण में कुछ मुझमें झलक गया। इसके बाद वह झलक बंद हो गई। अब मैं इस मेमोरी को बांध रखना चाहता हूं शब्दों में, कागज पर, चित्रों में। और अगर दूसरा मोमेंट भी उतना ही पोएटिक हो, तो कौन फुर्सत में है कि उसको बांधे। क्योंकि पोएट्री कभी-कभी झलकती है इसलिए पीछे नुमा में हम उसको बांधते हैं। कोई उसको चित्र में बनाता, कोई मूर्ति में बनाता। ये सब डेड पोएट्स हैं। जो किसी क्षण में पोएट थे फिर नहीं रह गए, अब वह मेमोरी रह गई, अब मेमोरी को उतार कर समयोजित करना चाहते हैं। और अगर हर क्षण पोएट्री हो तो कहां फुरसत।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

रिफ्लेक्शन वह मेमोरी है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

वे कम्युनिकेट भी इसीलिए करना चाहते हैं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

इनकम बनाता ही नहीं। इनकम कुछ है ही नहीं। आज जयंती भाई के घर ठहरा हूं, वे खाना दे देते हैं, कल बकुल जी के घर ठहरूंगा, वे खाना दे देंगे। किसी मित्र को कपड़े फटे दिख जाते हैं, वह कपड़े ला देता है, कपड़े सिल जाते हैं। और कोई किसी दिन कुछ नहीं मिला तो किसी पेड़ में बैठ कर सो गए खतम हुआ। इनकम-विनकम कुछ नहीं, इनकम कुछ भी नहीं। पैसे के नाम पर एक पैसा पास नहीं है। मैं मानता हूं कि...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

वह आप स्टॉप कर ही नहीं सकते। स्टॉप करना एकदम आसान नहीं है बकुल जी। माइंड की जो हल-चलन है, वह जो टेंशन है वह कुछ न कुछ बनाते रहने में उलझा रहता है। वह माइंड के लिए जरूरी है। माइंड कभी स्टॉप कर सकता है सब बनाना जब कि माइंड प्रीमिटियरी इनटिरियर हो तब बनाना...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न, न, न। कैसे पासिबल होगा? कैसे होगा, कुछ तो करना पड़ेगा। और मैं भी कुछ पैदा कर रहा हूं। मैं भी कुछ पैदा कर रहा हूं। मैं ही कुर्सी लगा रहा हूं यह ठीक है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

बेकग्राउंड मस्ट कम थ्रू अंडरस्टैंडिंग, नॉट थ्रू कल्टीवेशन। देन डिसिप्लिन इ.ज नॉट डिक्टेटिव। ए डिसिप्लिन इ.ज इम्पोज... विदाउट देन ए बिकम्स ए कंटीन्युटी। डिसिप्लिन इ.ज बीइंग बार्न मोमेंट टू मोमेंट फ्राम योर इनर अंडरस्टेंडिंग, दैन इट इ.ज नॉट कंटीन्युटी, इट इ.ज इटसेल्फ इ.ज ए डिसकंटीन्युअस प्रोसेस। डिसिप्लिन कमिंग... ए.ज ए अंडरस्टैंडिंग। आपरेशन मस्ट बी ए पार्ट ऑफ अंडरस्टैंडिंग।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

आदमी आमतौर से इमेजिनेशन में जीता है। लेकिन मेरी अपनी समझ यह है कि इमेजिनेशन में...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

मैनकाइंड हैज नॉट शोन एनी क्रिएटिव इमेजिनेशन, हैज नॉट शोन एनी सेंटी ईवन। बट फ्यू ह्यूमन बीइंग्स हैव शोन। एण्ड बीका.ज ऑफ दोज फ्यू ह्यूमन बीइंग्स दि होल वर्ल्ड हैज नोन बीकम ए मैडहाउस। इट इ.ज ए मैडहाउस। बट स्टील इट हैपन बीकम ए मैडहाउस, बीका.ज ऑफ दोज फ्यू ह्यूमन बीइंग्स।

प्रश्नः ... फ्यू बीइंग आर अराइज।

अगर... होने से व्यक्तियों की तरह हो जाएं, तो यह भी मैडहाउस नहीं रह जाएगा। और अधिक लोग हो सकते हैं। क्योंकि उन थोड़े से व्यक्तियों को होने में एक नया आनंद भी छिपा है। इतना आनंद उनमें छिपा है कि कोई कारण नहीं कि कोई आदमी के इतने आनंदित न होने...

नये मनुष्य का धर्म

पांचवां प्रवचन

युवा चित्त का जन्म

पुरानी संस्कृतियां और सभ्यताएं धीरे-धीरे सड़ जाती हैं। और जितनी पुरानी होती चली जाती हैं उतनी ही उनकी बीमारियां संघातक भी हो जाती हैं। उन अभागी सभ्यताओं में से एक है जिनका सब कुछ पुराना होते-होते मृतपाय हो गया है। यदि ऐसा कहा जाए कि जमीन पर हम अकेली मरी हुई सभ्यता हैं तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। दूसरी सभ्यताएं पैदा हुईं मर गईं और उनकी जगह नई सभ्यताओं ने जन्म ले लिया। हमारी सभ्यता ने मरने की कला ही छोड़ दी और इसलिए नये जन्म लेने की क्षमता भी खो दी। जरूरी है कि बूढ़े चल बसें ताकि बच्चे पैदा हों और कभी किसी देश में ऐसा हुआ कि बूढ़ों ने मरना बंद कर दिया तो बच्चों का पैदा होना भी बंद हो जाएगा। हमारी सभ्यता के साथ ऐसा ही दुर्भाग्य हुआ है। हमने मरने से इनकार कर दिया। इस भ्रांति में कि अगर मरने से इंकार करेंगे तो शायद जीवन हमें बहुत परिपूर्णता में उपलब्ध हो जाएगा। हुआ उलटा। मरने से इनकार करके हमने जीने की क्षमता भी खो दी। हम मरे तो नहीं लेकिन मरे-मरे होकर जी रहे हैं। और मरे-मरे जीने से मर जाना हजार गुना बेहतर है। क्योंकि मरने से फिर जन्म हो जाता है, पुनर्जन्म हो जाता है। व्यक्तियों का ही पुनर्जन्म नहीं होता सभ्यताओं, संस्कृतियों का भी पुनर्जन्म होता है।

भारत ने एक अनूठा लेकिन दुर्भाग्यपूर्ण प्रयोग किया है, हम ठहर गए हैं, जड़ हो गए हैं, स्टग्नेंट हो गए हैं। हम इतने जड़ हो गए हैं कि जीने के अंकुर हमसे निकल ही नहीं सकते। जैसे कोई बीज पत्थर की तरह जड़ हो जाए। निश्चित एक सुविधा होगी उस बीज को टूटना नहीं पड़ेगा। अगर कोई बीज पत्थर हो जाए तो फिर टूटेगा नहीं, बिखरेगा नहीं। लेकिन तब उससे अंकुर भी पैदा नहीं होगा।

एक तो पहली बात युवकों के इस सम्मेलन में यह कहना चाहता हूं कि भारत को पुनर्जन्म के लिए, रीबर्थ के लिए तैयार करना है। भारत का पुनर्जन्म हो सके इसकी तैयारी करनी है। और भारत का पुनर्जन्म हो इसके दो अंग होंगे--एक अंग तो पुराने भारत की मृत्यु होगी और दूसरा अंग नये भारत का जन्म होगा। और इन दोनों अंगों में मृत्यु पहले होगी जन्म पीछे होगा। तो एक तो हमें पुराने भारत को किसी तरह दफनाना है ताकि नया भारत जन्म ले सके। और इस दिशा में चिंतन करना है, सोचना है कि हमने पुराने को किस भांति बचा रखा है। हम उसे कैसे दफनाएं।

पहली बात भारत का पुनर्जन्म कैसे हो? इस संबंध में दो-एक सूत्र में आपसे अभी कहना चाहूंगा।

एक तो किसी भी देश का पुनर्जन्म तब होता है जब उसकी आंखें अतीत की तरफ से हट जाती हैं और भविष्य की ओर लग जाती हैं। नया जन्म भी तभी होता है जब कोई कौम भविष्य की तरफ देखने लगती है और अतीत की तरफ से आंखें हटा लेती है। हमारा देश पीछे की तरफ देखने वाला देश है जो हजारों साल से पीछे और पीछे ही देखता रहता है। हमारे भविष्य की कोई कल्पना, कोई कामना, कोई स्वप्न नहीं है। हमारे पास स्मृतियां हैं, कल्पनाएं बिल्कुल नहीं। हमारे पास अतीत के अनुभव हैं लेकिन भविष्य को जन्म देने की योजनाएं बिल्कुल नहीं। और जो कौम भी पीछे की तरफ बंध जाती है। वह कौम आगे चलने में असमर्थ हो जाए तो आश्चर्य नहीं। जन्म होगा भविष्य में लेकिन भविष्य में जन्म तभी हो सकता है जब अतीत के मुर्दाघर से अतीत के मरघट से हमारा छुटकारा हो।

उन्नीस सौ सतरह में रूस के लोगों ने तय किया कि हम पीछे की दुनिया को नमस्कार करते हैं और एक नई सभ्यता को जन्म देंगे। तो पचास वर्षों में रूस ने इतनी शक्ति पैदा की जितनी पांच हजार वर्ष का पुराना रूस कभी पैदा नहीं कर सका था। और उसका राज? उसका राज कम्युनिज्म नहीं है। उसका राज साम्यवाद नहीं है। उसका राज एक छोटी सी बात में है, और वह ये है कि उन्नीस सौ सत्रह में रूस के जवानों ने तय कर लिया कि अब हम पीछे की तरफ न देखेंगे। अब हम आगे की तरफ देखेंगे।

अमरीका जमीन पर सबसे नई कौम है। अमरीका का कुल इतिहास तीन सौ वर्ष पुराना है। और हमें शर्म भी नहीं आती कि हम तीन सौ वर्ष पुरानी सभ्यता के सामने, तीन सौ वर्ष पुराना कहना भी गलत है, कहना चाहिए तीन सौ वर्ष नया। तीन सौ वर्ष में कोई पुराना नहीं होता।

तीन सौ वर्ष पुरानी सभ्यता के सामने हम जो दस हजार वर्षों से जमीन पर हैं। अगर भिक्षा के हाथ फैलाए खड़े हों तो विचारणीय है कि कहीं कोई भूल हो गई है। अमरीका के पास इतनी समृद्धि का जो आकाश टूट पड़ा और इतनी शक्ति अर्जन हो सकी उसका कारण क्या है? उसका कारण सिर्फ एक है कि अमरीका के पास पीछे देखने को कोई इतिहास नहीं है, अतीत नहीं है। अमरीका के पास कोई पास्ट नहीं है। अगर वे बहुत पीछे जाएं तो वाशिंगटन के पीछे नहीं जा सकते। अगर बहुत याद करें तो लिंकन, वाशिंगटन दो चार नाम के सिवाय उनके पास याद करने को भी कुछ नहीं है।

अमरीका के पास पीछे जाने के लिए उपाय नहीं हैं इसलिए आगे उन्हें जाना पड़ा। और रूस के पास पीछे जाने का उपाय था लेकिन उसने वह रास्ता तोड़ दिया और आगे तो उसे जाने का रास्ता... गया।

आज चीन भी दस वर्षों में अदभुत गति किया है। दस वर्षों में चीन ने भी जमीन के बहुत पिछड़े हिस्से से पृथ्वी के प्रमुख हिस्सों में हाथ बंटा लिया है। आज पृथ्वी की अग्रणी शक्तियों में वह खड़ा हो गया है। और उसका भी कोई और कारण नहीं है। सिर्फ कारण एक है, जो कौम भी अपने अतीत के प्रति अपनी आंखों को हटा लेने में समर्थ हो जाती है। उसका भविष्य का द्वार खुल जाता है। और जो शक्ति अतीत के चिंतन में व्यर्थ ही व्यय होती है। वह शक्ति भविष्य के निर्माण में संलग्न हो जाती है।

इस देश के सामने, इस देश के युवकों के सामने पहला काम तो ये है कि भारत को उसके अतीत से मुक्त करवा दें। अगर एक बार हमारी शक्ति पीछे की तरफ से लौट आए और आगे की तरफ गतिमान हो जाए तो कोई नहीं कह सकता कि हम आने वाले बीस-पच्चीस वर्षों में पृथ्वी की बड़ी शक्ति नहीं हो सकें।

कोई भी नहीं सोच सकता था आज से पचास साल पहले कि रूस भी कोई शक्ति हो सकता है। और कोई नहीं सोचता था आज से पंद्रह साल पहले कि चीन भी कोई शक्ति हो सकता है। कोई नहीं सोचता आज कि भारत शक्ति हो सकेगा। लेकिन भारत भी एक शक्ति हो सकता है। लेकिन मनुष्य के मन की जो प्रक्रिया है काम करने की अगर उसके विज्ञान को हम न समझे तो ये नहीं हो सकेगा। हम अब भी पीछे की तरफ ही देखे चले जाते हैं। हमारा सारा का सारा व्यक्तित्व अतीत उन्मुख है, पास्ट-सेंटर्ड। जब कि ध्यान रहे, पीछे की तरफ देखना बुढ़ापे का लक्षण है। कभी आपने नहीं देखा होगा कि बूढ़ा आदमी भविष्य की तरफ देखे। और अगर कोई बूढ़ा आदमी भविष्य की तरफ देखता हुआ मिल जाए तो समझ लेना कि उसे उम्र बूढ़ा नहीं कर सकी।

बूढ़ा आदमी अतीत की तरफ देखता है। आरामकुर्सी पर बैठ कर, रिटायर्ड होकर पीछे की तरफ देखता है। वे दिन जो उसने जीए, वे प्रेम जो आए और गए। यश और पद और पदवियां और अतीत के रास्ते पर उड़ी हुई धूल, लौट कर देखता रहता है।

पीछे देखना बूढ़े आदमी का लक्षण है। बच्चे भविष्य की तरफ देखते हैं। असल में भविष्य की तरफ देखना नये होने, ताजा होने, जवानी होने का सूत्र है। और अगर पूरी कौम पीछे की तरफ देखने लगे तो वह कौम मर ही जाएगी। धीरे-धीरे सड़ती जाएगी और समाप्त हो जाएगी।

दस हजार वर्षों से पृथ्वी पर जिनकी सभ्यता है वे अपनी रोटी-रोजी भी नहीं जुटा सके हैं। कपड़े भी नहीं जुटा सके हैं। वे अपने खाने-पीने का इंतजाम भी नहीं कर सकते हैं। और दूसरी बातें तो करनी बहुत असंभव है, क्योंकि बाकी सब बातें अतिरिक्त ऊर्जा से होती हैं। जब तक कोई कौम रोटी, कपड़े, रोजी न जुटा सके तब तक कुछ और नहीं कर सकती। यह सब हो जाए तभी चेतना ऊपर उठती है, तब वह धर्म और विज्ञान और संगीत और कला और साहित्य में गति करती है। हम अत्यंत दीन-दरिद्र की भांति खड़े हैं। और कल भी क्या हमें ऐसे ही खड़े रहना है, यह सवाल पूछ लेना जरूरी है।

आज अमरीका के चार किसान मेहनत कर रहे हैं तो एक किसान का गेहूं हमें मिल रहा है। अमरीका में चार किसानों में से एक किसान की मेहनत हमें मिल रही है, तब हम किसी तरह जिंदा हैं। लेकिन अमरीका हमें कितनी देर तक ये गेहूं दे सकेगा? अमरीका की खुद जनता चिंता और विचार में पड़ गई है। अमरीका के बड़े विचारकों ने यह सवाल उठाना शुरू किया है कि हम कितनी देर तक भारत जैसे बड़े मुल्क को रोटी दे सकेंगे? उन्नीस सौ पचहत्तर के बाद नहीं। ये अमरीका के एक बड़े चिंतक ने घोषणा की है कि जिस दिन अमरीका ने भारत को गेहूं देना बंद कर देगा। उसी दिन भारत में इतने बड़े अकाल की संभावना है जिसमें दस करोड़ लोग भी मर सकते हैं।

मैं दिल्ली में था, एक बड़े नेता को मैंने कहा, उन्होंने कहा, उन्नीस सौ अठहत्तर बहुत दूर है। अभी तो उन्नीस सौ बहत्तर निबट जाए तो बहुत है। वे उन्नीस सौ बहत्तर की चिंता में संलग्न हैं। भारत के नेता को चुनाव से ज्यादा और कोई महत्वपूर्ण सवाल ही नहीं है।

भारत के युवकों को सोचना पड़ेगा और ठीक भी है। शायद उन्नीस सौ अठहत्तर तक दिल्ली में आज जो भी नेता हैं उनमें से एक भी नहीं होंगे। इसलिए उनके लिए वह सवाल भी नहीं है। वे सब इस चिंता में हैं कि उन्हें राज कैसे मिल सके। उन्हें राज्य के द्वारा दफनाने का उपाय कैसे हो सके वे सब इस चिंता में हैं।

इसलिए कोई बूढ़ा आदमी कुर्सी से हटना नहीं चाहता क्योंकि कुर्सी पर रह कर मर जाए तो राज्य के सम्मान के साथ मरता है। कुर्सी से नीचे हट कर मर जाए तो अखबार में पता भी नहीं चलता कि वह आदमी कब मर गया और जिंदा था भी कि नहीं।

हिंदुस्तान का सारा नेतृत्व बूढ़ा है। और बूढ़े नेतृत्व को कोई चिंता नहीं है हिंदुस्तान के भविष्य की। वह अपने-अपने मरने की व्यवस्थित योजना में संलग्न हैं। कौन-कौन राजघाट पर दफनाए जा सकेंगे इसकी चिंता में संलग्न हैं। लेकिन भारत के युवक को सोचना पड़ेगा। उसे जीना है कल और उस दुनिया के साथ जीना है जो रोज ताकत में होती चली जा रही है।

अमरीका चांद पर उतरा है और एक आदमी के पैर चांद पर पड़ सकें इसके लिए एक सौ अस्सी अरब रुपया खर्च करने पड़े। एक तरफ इतनी समृद्धि है! अब यह बिल्कुल लक्जरी है, चांद पर उतरने का अभी कोई प्रयोजन नहीं है। लेकिन एक आदमी चांद पर उतर सके और पहला झंडा अमरीका का गड़ सके उसके लिए वे एक सौ अस्सी अरब रुपये खर्च कर सकता है।

एक तरफ हम हैं कि हम अपने पेट भरने के लिए भी कुछ खर्च करने की सुविधा हमारे पास नहीं है। और सारी दुनिया के कर्जदार होते चले जाते हैं। सारी दुनिया के सामने भीख मांगते चले जाते हैं। एक युनिवर्सल

बैगर की हमारी हैसियत हो गई है। ... भिक्षु! ऐसे पुराने समय से हमारे महापुरुष भीख मांगते रहे हैं। लेकिन उन महापुरुषों ने भी कभी न सोचा होगा न बुद्ध ने न महावीर ने न विनोबा ने। उनने भी कभी न सोचा होगा कि ऐसा वक्त भी आएगा कि पूरा देश भिखारी हो जाएगा। और पूरा देश भिक्षा मांगने पर जीएगा। वैसे हमारे शास्त्रों में लिखा है कि भिक्षा की वृत्ति श्रेष्ठतम है। बाकी सब वृत्तियों में कभी चोरी-झूठ, बेईमानी भी करनी पड़ती है। भिक्षा की वृत्ति एकदम पवित्र है। ऐसा लगता है कि शास्त्रों की ये बात पूरे देश ने ही स्वीकार कर ली है। हम सारी दुनिया में भीख मांगने का काम कर रहे हैं।

यह कितने दिन चलेगा? यह ज्यादा देर नहीं चल सकता है। चलना भी नहीं चाहिए। मैं तो यह मानता हूं कि जो हमारी सहायता कर रहे हैं वे हमारे मित्र नहीं हैं। सारी दुनिया को हमें सहायता करने से इंकार कर देना चाहिए। मैं तो मानता हूं कि सारी दुनिया को कह देना चाहिए, तुम समझो, तुम्हारा काम समझे। तुम बड़े आध्यात्मिक लोग हो, तुम बड़े ज्ञानी हो, जगतगुरु हो, तुम अपनी व्यवस्था खुद ही करो। तुम्हारी संस्कृति बड़ी महान है, तुम खुद उसे बचाओ।

एक गेहूं का दाना दुनिया से भारत की तरफ आना चाहिए और न सहानुभूति की एक नजर आनी चाहिए तो शायद उस परेशानी में हम कुछ चिंतन करें। और शायद आगे फिर कुछ करें।

लेकिन उनकी दया हमारे लिए महंगी पड़ रही है। हम उनकी दया के नीचे ऐसे निश्चिंत हो गए हैं जैसे धूप में, मरुस्थल में चलने वाला कोई यात्री किसी वृक्ष की छाया के नीचे बैठ कर भूल जाए कि चारों तरफ जलती हुई धूप है और मरुस्थल है। यह छाया बहुत देर टिकने वाली नहीं है, क्योंकि उधार छायाएं बहुत देर नहीं टिक सकतीं। और उधार छायाएं बहुत जल्दी खतरनाक सिद्ध हो सकती हैं।

तो मैं आपसे यह कहना चाहता हूं, युवक क्रांतिदल युवकों के विचार करने के लिए और भारत को अतीत से छुड़वाने के लिए और भविष्य उन्मुख करने के लिए विचार का एक वातावरण सारे देश में पैदा करे। विचार की एक क्रांति जरूरी है। इस देश में विचार की क्रांति कभी हुई ही नहीं है। वैचारिक क्रांति का हमें समझ में ही नहीं आता कि क्या अर्थ होता है।

तो दूसरी बात आपसे कहना चाहता हूं कि वैचारिक क्रांति के लिए एक वातावरण जन्माना है। वैचारिक क्रांति का अर्थ होता है कि जिन विचारों के आधार पर हम अब तक जीते थे। जरूर उन विचारों में कहीं कोई बुनियादी भूल है। अन्यथा हम इतनी बुरी तरह दलित, पीड़ित, दास और गुलामी से न गुजरते। हमारे मूल विचारों की जड़ में कहीं कोई भूल है। हम कहीं न कहीं गलत सोचने के आधार पर अपने देश का भवन खड़ा कर लिए हैं।

एकाध-दो बातें मैं सुझाना चाहता हूं। जैसे भारत हजारों साल से पदार्थ की, मैटर की निंदा कर रहा है, उपेक्षा कर रहा है। जो कौम पदार्थ की निंदा और उपेक्षा करेगी। वह कौम दीन और दरिद्र हो जाएगी। यह सुनिश्चित है। अगर कोई कौम शरीर की निंदा करने लगे तो वह कौम शरीर से कमजोर हो जाए, दीन-हीन हो जाए यह भी आश्चर्य नहीं है। हम हजारों साल से शरीर के विरोध में पदार्थ के विरोध में खड़े हैं। और ध्यान रहे आत्मा का मंदिर शरीर के द्वारा और कहीं खड़ा नहीं हो सकता। और यह भी ध्यान रहे कि अगर आध्यात्म की ऊंचाइयां छूनी हों, तो भी पदार्थ की ही नींव पर तुम ऊंचाइयों को छूने के प्रयास किए जा सकते हैं।

कोई एक मंदिर बनाए और कहे कि हम अपने मंदिर में सिर्फ स्वर्ण-शिखर ही रखेंगे, पत्थरों की नींव नहीं डालेंगे तो वह मंदिर कभी खड़ा नहीं होगा। स्वर्ण-शिखरों से मंदिर खड़े नहीं होते। पत्थरों की नींव भरनी पड़ती है। नींव जमीन में छिप जाती है, दिखाई भी नहीं पड़ती फिर ऊपर स्वर्ण-कलश भी चढ़ाए जा सकते हैं।

अध्यात्म जीवन का स्वर्ण-कलश है। शरीर और पदार्थ जीवन की नींव हैं।

ये देश हजारों साल से शरीर और पदार्थ को इंकार कर रहा है। इसलिए हम विज्ञान को कोई जन्म नहीं दे सके। और जो विज्ञान को जन्म नहीं दे सकेगा वह धीरे-धीरे शक्तिहीन, दीन और दरिद्र हो जाएगा। क्योंकि विज्ञान तरकीब है स्वस्थ होने की, विज्ञान तरकीब है समृद्ध होने की। विज्ञान तरकीब है शक्तिशाली होने की। पदार्थ के इंकार ने हमें अवैज्ञानिक बना दिया है। और पदार्थ के इंकार ने हमें आध्यात्मिक बना दिया होता तो भी ठीक था वह भी नहीं हो सका है। क्योंकि दीन-दरिद्र लोग आध्यात्मिक नहीं हो सकते। अध्यात्म आखिरी लक्जरी है। अध्यात्म समृद्धि का आखिरी विराम। जब जीवन की सब जरूरतें पूरी हो जाती हैं और कोई जरूरत शेष नहीं रह जाती। तब परमात्मा की जरूरत पैदा होती है। वह अंतिम जरूरत है। आखिरी आवश्यकता है जो आदमी की पैदा होती है।

इसलिए मैं आपसे कहता हूं कि रूस आने वाले पचास वर्षों में आध्यात्मिक होने को मजबूर हो जाए। यद्यपि रूस के नेता ऐसा नहीं सोचते। और रूस के नेता सोचते हैं कि रूस पूर्ण भौतिकवादी है। लेकिन आने वाले पचास वर्षों में रूस निरंतर आध्यात्मिक होता चला जाएगा। उसे होना ही पड़ेगा। आने वाले पचास वर्षों में अमरीका में अध्यात्म के नये से नये मंदिर निर्मित होंगे। उसका कारण है कि जब कोई कौम पूरी तरह समृद्ध हो जाती है और जब जीवन के नीचे की जरूरतें पूरी हो जाती हैं तो ऊपर की जरूरतों की याद आनी प्रारंभ होती है। जब कोई पेट भर जाता है तो संगीत भी जन्मता है। और जब तन ढंक जाता है तो आत्मा को ढंकने का ख्याल भी पैदा होता है। और जब जिंदगी की पृथ्वी पर सब सुविधा हो जाती है तो आंखें आकाश की तरफ उठनी शुरू हो जाती हैं।

मनुष्य निरंतर खोजना चाहता है। मनुष्य एक खोज है। और जब पदार्थ की खोज पूरी होने लगती है। तो परमात्मा की खोज शुरू हो जाती है। भारत पदार्थ को, धन को, समृद्धि को इंकार करके आध्यात्मिक नहीं हो पाया। वैज्ञानिक तो हो ही नहीं सकता। इस देश में पुनर्विचार और विचार की क्रांति पैदा करने का अर्थ है हमने अब तक जिन आधारों पर अपने को सोचा और समझा है उन आधारों को फिर से हिला कर देखने की जरूरत है।

तो मैं आपसे कहना चाहता हूं, भारत में भौतिकवाद की एक अनिवार्य लहर आवश्यक है। और ध्यान रहे भौतिकवाद और अध्यात्मवाद में कोई विरोध नहीं है। शरीर और आत्मा में कोई विरोध नहीं है। अगर शरीर और आत्मा में विरोध हो तो दोनों एक क्षण साथ न रह सकें। और परमात्मा और पदार्थ में भी कोई विरोध नहीं है। अन्यथा परमात्मा पागल है कि पदार्थ को जन्म दे! और संसार और मोक्ष में भी कोई विरोध नहीं हो सकता। अन्यथा संसार कभी का मिट जाए सिर्फ मोक्ष रह जाए।

सीढ़ियां हैं विरोध नहीं। शरीर पहली सीढ़ी है, पदार्थ पहली सीढ़ी है परमात्मा दूसरा। शरीर पर यात्रा करके भी आत्मा तक पहुंचना होता है और पदार्थ की यात्रा करके ही परमात्मा तक।

भारत ने एक बुनियादी भूल की है, सिर्फ परमात्मा में जीने की। उसका परिणाम बहुत महंगा हुआ है। हमें अपने विचार के सारे आधार बदल देने पड़े। हमें... पहुंचना पड़ेगा। तो एक भारत में एक भौतिकवादी चिंतन के जन्म की जरूरत है। अध्यात्मवाद के विरोध में नहीं, अध्यात्मवाद की बुनियाद बनाने के लिए।

दूसरी बात भारत हजारों साल से इतने दुख में रहा है, इतनी पीड़ा में रहा है कि उसने धीरे-धीरे दुख और पीड़ा को भी सम्मान देना शुरू कर दिया है। और जब कोई समाज दुख और पीड़ा को सम्मान देने लगे तो उसकी सुख की खोज बंद हो जाती है।

भारत ने इतना दुख सहा है कि धीरे-धीरे उसने दुख को ही जीवन मान लिया है। हम ऐसा समझने लगे हैं कि दुख ही जीवन है। और जब कोई ऐसा समझने लगे कि दुख ही जीवन है। जब कोई ऐसा समझने लगे कि बीमारी ही स्वास्थ्य है, तो फिर स्वास्थ्य के उपाय बंद हो जाएंगे। और जब कोई ऐसा समझने लगे कि दुखी होना पृथ्वी पर अनिवार्य है, पृथ्वी पर सुखी नहीं हुआ जा सकता तो फिर पृथ्वी पर दुख को पैदा करने की श्रम, चेष्टा और संकल्प बनते गए।

निरंतर दुख में रहने के कारण हमने दुख को सम्मान देना शुरू कर दिया है। हमने नये-नये नाम रख लिए हैं दुख के लिए। अगर कोई आदमी दुखी है, दरिद्र है, दीन है और अपनी दीनता, अपने दुख, अपनी दरिद्रता को मिटाने के लिए कुछ भी नहीं करता है बल्कि उसे वरण कर लेता है तो हम कहते हैं परम संतोषी है। इस परम जड़ को हम परम संतोषी कहते हैं।

मनुष्य की बुद्धिमत्ता इसमें निर्भर है कि वह अपने दुख को कितना कम करे, अपने सुख को कितना बढ़ाए। मनुष्य के जीवन की यात्रा निरंतर सुख को बढ़ाने की यात्रा है। पहले दुख से सुख और फिर सुख से आनंद। लेकिन जो दुख को ही जीने लगेगा वह सुख तक नहीं पहुंचेगा और जो सुख तक नहीं पहुंचता वह कभी आनंद तक नहीं पहुंचता।

दुख से जो बचता है एक दिन सुख पर पहुंचता है और जब सुख पर पहुंचता है तो अचानक पाता है कि सुख भी दुख का ही एक नाम है। और तब वह आनंद की यात्रा में आगे बढ़ता है। हम दुख में ही संतुष्ट हो गए हैं। अगर कोई आदमी दुख में संतुष्ट है तो हम उसका बड़ा आदर करते हैं। अगर ऐसे लोगों को आदर मिलेगा तो फिर ठीक है। दुख के बाहर जाने का कोई मार्ग नहीं रह जाएगा।

और यहीं तक नहीं कि लोग दुख में संतुष्ट हों ऐसे लोग भी हैं जो अपने ऊपर स्वेच्छा से दुख आरोपित करते हैं। उनको हम कहते हैं तपस्वी। उनको हम तपश्चर्यावान कहते हैं। जो लोग दुख में जीते हैं और शांति से जी लेते हैं। उनको कहते हैं सहिष्णु, संतोषी और जो लोग उनसे भी आगे बढ़ जाते हैं कि दुख को निमंत्रण दे आते हैं। कांटे बिछा कर बिस्तर बना लेते हैं। नंगे धूप में खड़े हो जाते हैं। भूखे मरते हैं या उपवास करते हैं उनको हम कहते हैं वे तपश्चर्या कर रहे हैं। इनको हम परम आदर देते हैं।

जब कोई कौम ऐसे लोगों को आदर देने लगे जो दुख को बुला कर घर ले आते हैं तो वह कौम पागल हो जाएगी, विक्षिप्त हो जाएगी। यह पागलपन का लक्षण है, और कुछ भी नहीं। स्वस्थ मनुष्य दुख से मुक्त होना चाहता है। अस्वस्थ मनुष्य दुख को और बुला कर घर ले आता है। कोई भी स्वस्थ चित्त व्यक्ति दुख को आमंत्रण नहीं देता। स्वस्थ चित्त व्यक्ति दुख से ऊपर उठने के निरंतर प्रयास करता है। रुग्ण चित्त, साइको चित्त, न्यूरोटिक जिसको हम कहें। जिसके मन में कुछ रोग पैदा हो गया है। वही दुख को निमंत्रण दे आता है।

अगर एक आदमी के पैर में कांटा गड़ता हो तो स्वस्थ आदमी कांटे को निकालेगा। लेकिन ऐसा आदमी हो सकता है जो संतोष रख ले कि कांटा लग गया है तो ठीक है। तो उसे हम आदर देंगे। लेकिन इस देश में धीरे-धीरे आदर इतना ज्यादा दिया है कांटे लगे आदमी को कि कुछ लोग जिनके पैर में कांटा नहीं लगा है वे जाकर कांटा लगा लेते हैं। क्योंकि इस देश में दुखी हुए बिना आदर नहीं मिल सकता।

अगर कोई आदमी पैदल यात्रा करने लगे तो हम बहुत आदर देंगे। पदयात्री को हम बड़ा आदर देंगे कि बड़ा महान कार्य हो रहा है। लेकिन हमें पता नहीं है कि जिस देश में पदयात्री को आदर मिलेगा उस देश में राकेट पैदा नहीं होगा। और जितने पदयात्री हैं वे सब उस देश के दुश्मन हैं क्योंकि वे राकेट को उस देश में पैदा नहीं होने देंगे। आदर मिलेगा पदयात्री को तो चांद पर जाने के लिए कोई पदयात्रा तो हो नहीं सकती। चांद पर

जाने के लिए तो राकेट चाहिए। लेकिन राकेट तो वे लोग विकसित करेंगे जो निरंतर आवागमन के लिए श्रेष्ठतम साधनों का विकास करें। पैर आदमी का निकृष्टतम साधन है जो प्रकृति से मिला है, जिसमें कोई विकास करने की जरूरत नहीं है। अगर पदयात्री को हमने आदर दिया तो हम ये कह रहे हैं कि जैसा आदमी को प्रकृति ने बनाया है। वह आदर योग्य है। फिर विकास का उपाय नहीं रह जाता। विकास का उपाय तो तभी निकल सकेगा जब हम अपने आदर के बिंदु बदलें।

तो मैं आपसे कहना चाहता हूं भारत में दुखी आदमी का आदर हमारे प्राण लिए ले रहा है। सुसाइडल है, आत्मघाती है। भारत में सुख का सम्मान बढ़ना चाहिए। विचार का हमें नियम बदलना पड़ेगा। दुखी आदमी को आदर देना बंद करना पड़ेगा। दुख को वरण करने वाले आदमी को, तपश्चर्या में रत है ऐसा कहना बंद करना पड़ेगा। और मैं आपसे कहता हूं जिस दिन आप आदर देना बंद कर देंगे आपके सौ तपस्वियों में से निन्यानबे एकदम विदा हो जाएंगे। उनका कोई पता नहीं चलेगा कि वे कहां चले गए। आपका आदर उनको अपनी मूढ़ता में थिर रखने में सहयोगी होता है।

मैं तो आपसे कहता हूं कि किसी भी मूढ़तापूर्ण बात को आदर देने लगें। गांव में ऐसे लोग पैदा हो जाएंगे जो वह काम भी करके दिखा देंगे।

गांधीजी के आश्रम में एक सज्जन थे, भंसाली। वे छह-छह महीने तक गाय का गोबर खाकर ही रह जाते। उनको गांधीजी भी आदर देते थे, पूरा आश्रम आदर देता था कि महान तपस्वी हैं। फिर उनका पागलपन बढ़ता ही चला गया। फिर वे गाय का गोबर ही खाने लगे। और जब उन्होंने देखा कि गाय का गोबर खाने के कारण उनकी तपश्चर्या की बड़ी ख्याति पहुंच रही है। और ऐसी हालत आ गई कि गांधीजी के आश्रम में कोई आए तो पहले भंसाली को दर्शन करने जाए क्योंकि वे महान हैं। उतने तो गांधीजी भी उतने त्यागी नहीं हैं। गोबर तो वे भी गऊ का न खाते।

अगर कोई मुल्क समझदार हो तो भंसाली जैसे लोगों को पागलखाने में इलाज करवाना चाहिए। लेकिन मुल्क नासमझ है। और मुल्क ने न मालूम कैसे नियम बना रखे हैं कि वह ऐसे लोगों को आदर दिए चला जाता है। फिर उनका पागलपन बढ़ता चला जाता है। फिर उनकी विक्षिप्तता बढ़ती चली जाती है। फिर वे अपने हाथ से दुख की नई-नई ईजादें करने लगते हैं।

दुख की ईजाद नहीं करनी है। बहुत दुख हम झेल चुके हैं। अब हमें सुख की ईजाद करनी है। और सुख की ईजाद करनी हो तो दुख को, तप को आदर देना बंद करना पड़ेगा। भारत को गरीब बनाए रखने में भारत के तपस्वियों का बुनियादी हाथ है। क्योंकि जब तक कोई पूरी कौम सुख को प्रेम न करे तब तक सुख के साधन पैदा नहीं किए जा सकते। और जब तक पूरी कौम सुख के लिए संलग्न न हो जाए तब तक कभी सुख के साधन निर्मित नहीं हो सकते।

हम सुख से भयभीत लोग। सुख की खोज करने वाला पापी मालूम पड़ताहै। पुण्यात्मा को मालूम पड़ता है कि दुख की खोज करता है। क्या पाप और पुण्य की यह परिभाषा जारी रखनी है कि इस परिभाषा को बदलना है? युवकों को इसे बदलने की दिशा में कदम उठाने पड़ेंगे।

सुखी आदमी को अपने मन में आत्मनिंदा की कोई जरूरत नहीं है। हिंदुस्तान की हालत उलटी है। यहां अगर कोई आदमी सुख खोज लेता है तो अपने आप को निंदित समझता है। वह समझता है कि मैं कमजोर हूं, पापी हूं, वासनाग्रस्त हूं इसलिए सुख खोज रहा हूं। नहीं तो मैं भी तपश्चर्या करता। इसीलिए सुखी आदमी को आप देखेंगे दुखी आदमियों के पैरों में जाकर सिर रखता मिलेगा। हिंदुस्तान के नंगे साधु के पास हिंदुस्तान का

करोड़पति सिर झुकाता हुआ मिलेगा। उसका और कोई कारण नहीं है। ये आत्मनिंदित हैं, ये सेल्फ-कंडेम्ड है ये समझ रहा है कि मैं बड़ा पापी हूं ये बड़ा पुण्यात्मा है। मैं कमजोर आदमी हूं इस जन्म में नहीं अगले जन्म मैं भी तपश्चर्या करूंगा। जब तक नहीं बनता है तब तक तपस्वी के कम से कम पैर तो छूने चाहिए।

हिंदुस्तान में सुख की कोई प्रतिष्ठा नहीं है। सुख अप्रतिष्ठित है। ये सुख हम कैसे पैदा कर पाएंगे? सारी दुनिया सुख को एक तरह की प्रतिष्ठा देगी। और ध्यान रहे ये मैं और भी बात आपसे कहना चाहता हूं। जो लोग दुख को आदर देते हैं धीरे-धीरे दूसरे को दुख देने में रस लेने लगते हैं। सैडिस्ट हो जाते हैं या मैसोचिस्ट हो जाते हैं। या तो खुद को दुख देते हैं या दूसरों को दुख देते हैं। जो आदमी सुख की निंदा करता है वह दूसरे को सुख कभी भी नहीं दे सकता। क्योंकि जिस चीज की निंदा की जाती है वह देना कैसे संभव है! ध्यान रहे जो आदमी खुद सुखी हो सकता है वही आदमी दूसरों के लिए भी सुख का साथी बन सकता है। अन्यथा कभी भी सुख का साथी नहीं बन सकता। तो सारा मुल्क एक-दूसरे को दुख देने में उत्सुक है। और हजारों-हजारों तरकीबों से हम एक दूसरे को दुख देते हैं। हम अपने सुख की उतनी फिकर नहीं करते। जितना कोई दूसरा सुखी हो जाए इसकी चिंता में रहते हैं कि कहीं कोई दूसरा सुखी न हो जाए। हम उसकी चिंता में रत रहते हैं कि किसी आदमी को कैसे दुखी किया जाए। एक तरह का विक्षिप्त रोग पैदा हो गया है सबको दुखी करने का, दुखी देखने का। और उसके पीछे कारण है, मनोवैज्ञानिक कारण हैं। हमने सुख को आदर नहीं दिया इसलिए ऐसी स्थिति पैदा हो गई है।

तो मैं युवकों से कहना चाहता हूं कि वे देश के मन को सुख की दिशा में प्रवाहित करें। सुखी व्यक्ति ही, खुद का सुख खोजने वाला व्यक्ति ही दूसरे के सुख की भी चिंता और विचार करता है।

अब एक फकीर सड़क पर नंगा पड़ा हुआ है। भूखा पड़ा हुआ है, धूप में पड़ा हुआ है उससे जाकर आप कहिए कि हिंदुस्तान बहुत गरीब है। वह कहेगा, कैसी गरीबी! गरीबी का क्या मतलब है! हम तो यहां भी बड़े आनंद में हैं।

एक नंगे पड़े हुए फकीर को यह कभी खयाल में नहीं आ सकता है कि देश नंगा है तो दुख में होगा। जिसने खुद के दुख को स्वीकार कर लिया है वह दूसरे के दुख के प्रति कठोर हो जाता है। इनसेंसिटिव हो जाता है। उसका दूसरे के दुख की संवेदना कम हो जाती है। दूसरे की दुख की संवेदना तभी हो सकती है जब हमें सुख का रस हो और हमें अपने दुख की पीड़ा हो।

हिंदुस्तान में अकाल पड़ता है तो हिंदुस्तान के मन में कोई बहुत पीड़ा पैदा नहीं होती। अमरीका और स्विटजरलैंड और इंग्लैंड में उससे ज्यादा पीड़ा पैदा होती है। उसका कारण क्या है? उसका कारण यह है कि वे सुख का रस ले रहे हैं और सुख की दिशा में गतिमान हो रहे हैं। उनकी कल्पना के बाहर है कि लाखों लोग भूखे मर रहे हैं। हमारी कल्पना में इससे कोई तकलीफ नहीं होती। हम तो भूखे मर रही रहे हैं। वहां भूखे मरने को हमने स्वीकार कर लिया है, जीवन मान लिया हैतो हमारे मन में कोई तकलीफ नहीं होगी।

सड़क पर अगर एक आदमी भीख मांगता दिखता है तो हमारे मन में कोई पीड़ा नहीं होती। पश्चिम के मन को पीड़ा हो जाती है। यह अमानवीय मालूम पड़ता है कि एक आदमी को भीख मांगना पड़े। अगर सुरेंद्रनगर में कोई भीख मांग रहा है तो सुरेंद्रनगर के लोगों को ऐसा नहीं लगता कि यह सुरेंद्रनगर का अपमान है? ऐसा नहीं लगता? भीख मांग रहा है? किसी को कहीं कोई उससे छूता नहीं है हृदय पर। और अगर कोई दो पैसे उस उस भिखमंगे को दे भी देता है, तो दो पैसे देने में पुण्यात्मा होना अनुभव करता है। यह अनुभव करता है कि उसने कोई बड़ा पुण्य किया है।

एक भिखमंगा गांव में जी रहा है इसलिए मैं पापी हूं ऐसा कोई अनुभव नहीं करता। एक भिखमंगे के कारण अनेक लोग दो-दो पैसा करके पुण्यात्मा जरूर हो जाते हैं। लेकिन पूरा गांव पापी है, ऐसा अनुभव नहीं करता, कि गांव में एक आदमी को भीख मांगनी पड़ रही है तो पूरा गांव किसी तरह जिम्मेवार है। यह कोई अनुभव की बात... ।

हमारी संवेदना कम हो गई है। और संवेदना को मारने को हम बड़ी साधना समझते हैं कि आदमी जितना जड़ हो जाए, जितना बोथला हो जाए उसकी सेंसिविटी जितनी मर जाए। धूप उसे धूप मालूम न पड़े, ठंड उसे ठंड मालूम न पड़े, कांटा उसे कांटा न मालूम पड़े; धूप उसे धूप न मालूम पड़े ऐसे आदमी को हम कहेंगे सिद्धपुरुष है, परमहंस है।

लेकिन ऐसे आदमी का क्या मतलब होता है। ऐसे आदमी का मतलब होता है उसकी संवेदनशीलता मर गई। और जिसकी अपने प्रति संवेदनशीलता मर जाती हैउसकी सबके प्रति संवेदनशीलता मर जाती है। इसलिए हिंदुस्तान में करोड़ों वर्षों से संन्यासी हैं, साधु हैं लेकिन उनके मन में हिंदुस्तान की दीनता और दरिद्रता की कोई पीड़ा पैदा नहीं होती। नहीं हो सकती। वे खुद ही पीड़ा के प्रति बिल्कुल सख्त और कठोर हो गए हैं।

हिंदुस्तान के मन को सुख-आकांक्षी बनाना है। दुख से ऊपर उठने की योजना उसे देनी है। सुख का आदर और सम्मान बढ़ाना है। संवेदनशीलता बढ़ानी है, घटानी नहीं है। संवेदनशीलता जितनी बढ़ेगी उतना जीवन सुंदर और सुखी बनाया जा सकता है।

लेकिन हम कहते हैं उस आदमी को परमहंस--जो वहीं पाखाना कर ले और वहीं बैठ कर खाना खा ले, तो हम कहेंगे यह परमज्ञानी। इसे पाखाने में और खाने में कोई भेद नहीं रहा। लेकिन अगर ऐसे परमज्ञानी मुल्क में बढ़ते चले जाएं, तो ध्यान रहे, हमारा खाना और पाखाना करीब-करीब एक जैसा होता चला जाएगा। धीरे-धीरे परिणाम यह हो जाएगा कि हम जो खाएंगे उसे दुनिया में कोई खाने को कोई राजी नहीं होगा। जिसे हम खाना कह रहे हैं उसे पश्चिम की गाय और भैंस भी इंकार कर देगी खाने से।

वहां का... उसको गाय को देने को भी इंकार कर देगा कि यह खाना गाय को देने योग्य नहीं है। लेकिन इसमें हम कभी न खोजेंगे कि हमारे भीतर जो हमने सम्मान दिए हैं वे ही इन सब चीजों पर हमें ले आए। हम जो खाना खा रहे हैं आज पृथ्वी पर उसे कोई खाने को राजी नहीं होगा। उसमें कुछ भी नहीं है। और अगर भोजन ठीक न हो तो शरीर अस्वस्थ हो जाए, शरीर शक्तिहीन हो जाए। और अगर भोजन ठीक न हो मस्तिष्क की प्रतिभा क्षीण हो जाए तो हैरानी क्या है! कोई आश्चर्य नहीं है कि हम आइंस्टीन पैदा नहीं कर पाते। हम आइंस्टीन पैदा कर ही नहीं सकते। आइंस्टीन पैदा करने के लिए जितना प्रबल ऊर्जा मस्तिष्क की चाहिए वह कहां से आए, वह कैसे आए! क्या कभी आपने सोचा आदिवासियों ने अब तक एक बुद्ध, एक महावीर, एक कृष्ण क्यों पैदा नहीं किया? एक बड़ा गणितज्ञ, एक बड़ा वैज्ञानिक पैदा नहीं किया?

मस्तिष्क भी पदार्थ से बनता है। वह जो मस्तिष्क के भीतर ऊर्जा आती है वह भी पदार्थ से आती है। और अगर उसमें ठीक प्रोटीन और ठीक विटामिन और कुछ भी न मिलते हों तो आसमान से मस्तिष्क भी नहीं उतरता।

आत्मा भी बहुत अर्थों में भोजन पर निर्भर होती है। लेकिन इस देश ने कुछ अजीब हालत पैदा कर ली है। इसको तोड़ देना पड़ेगा। और इसके तोड़ने के लिए एक आमूल विचार की जरूरत है। तो युवकों से मैं कहना चाहूंगा कि वे देश के मन से पुरानी जड़ों को उखाड़ें और एक-एक जड़ को पुनर्विचार करने के लिए देश को मजबूर कर दें। और किसी भी चीज को अब बिना विचार किए मानने के लिए राजी न रहें। हो सकता है इसमें

कुछ वे जड़ें भी टूट जाएं जो नहीं टूटनी थीं। लेकिन उनको बचाने के लिए अगर गलत जड़ें बच जाएं तो ज्यादा खतरा है। मैं मानता हूं कि अगर ठीक जड़ें भी टूट जाएं पुराने जाल को तोड़ने में तो भी चिंता नहीं करनी है क्योंकि ठीक को हम फिर-फिर आरोपित कर लेंगे। लेकिन इतना गंदा जाल इकट्ठा हो गया है घर में कि अगर उस सफाई में, उस कचरे को और गंदगी को निकालने में घर का कुछ ठीक सामान भी बाहर चला जाए तो चिंता नहीं लेनी है। एक दफा कचरा साफ हो जाए तो ठीक को पुनर्निमित किया जा सकता है। लेकिन हमारा मुल्क बहुत डरा हुआ है, वह कहता है, कहीं कुछ ठीक न टूट जाए।

मैंने सुना है कि चीन में जैसे ही माओ की सत्ता आई, तो उसने एक नियम बनाया, और वह नियम बड़ा कीमती है। सारी दुनिया में नियम है अदालतों का यह कि चाहे सौ अपराधी छूट जाएं लेकिन एक निरपराध व्यक्ति को सजा नहीं मिलनी चाहिए। सारी दुनिया का कानून यह मान कर चलता है कि चाहे सौ अपराधी छूट जाएं लेकिन एक निरपराध व्यक्ति को दंड नहीं मिलना चाहिए। माओ चीन में आया तो उन्होंने अदालत का पूरा नियम बदल दिया। और उन्होंने कहा कि चाहे सौ निरपराध व्यक्तियों को दंड मिल जाए लेकिन एक अपराधी को हम न छूटने देंगे।

इसका परिणाम हुआ। इसका आमूल परिणाम हुआ। इसका परिणाम ये हुआ कि निरपराधी को सजा देने में चिंता उन्होंने छोड़ दी कोई फिकर नहीं है। निरपराधी सूली पर लटक जाए, लटक जाए लेकिन अपराधी को हम न बचने देंगे। इसके परिणाम बहुत व्यापक हुए। इसका परिणाम ये हुआ कि अपराधी का जिंदा रहना मुश्किल हो गया।

जिंदगी के संबंध में भी हम यही कहते हैं कि कहीं एक ठीक बात न छूट जाए। तो चाहे एक ठीक बात बचाने को सौ गलत बातें बचानी पड़ें तो हम बचा लेते हैं। जिंदगी का ये नियम हमें बदल देना पड़ेगा।

मैं आपसे कहना चाहता हूं सौ ठीक चीजें टूट जाएं तोड़ देना है लेकिन एक गलत चीज को नहीं बचने देना है। तो ही हम गलत चीजों से मुक्त हो पाएंगे अन्यथा नहीं। और ध्यान रहे, ठीक चीज फिर पैदा की जा सकती है। क्योंकि जो ठीक है उसकी हमें रोज जरूरत है, उसके बिना हम रह न सकेंगे। उसे हम पैदा कर ही लेंगे।

हर एक ठीक चीज के पास सौ गलत चीजों का जाल खड़ा हो गया है। और उस एक को बचाने के लिए वह सौ गलत... को बचाना पड़ रहा है। इसकी हमें हिम्मत करनी पड़ेगी। विध्वंस की हिम्मत करनी पड़ेगी। तो ही हम निर्माण कर सकते हैं अन्यथा निर्माण नहीं हो सकता है।

तो मैं युवक क्रांति दल के लिए मेरा एक ही संदेश है कि किसी भी भांति विध्वंस की तैयारी के लिए देश को तैयार करना है। रचनात्मक कार्यक्रम बहुत हो चुके। उनसे अब क्षमा चाहिए। क्योंकि ध्यान रहे, रचनात्मक कार्यक्रम सदा पुराने में जोड़ होता है। रचनात्मक कार्यक्रम सदा पुराने में एडिशन होता है। अब तो देश को विध्वंसात्मक कार्यक्रम चाहिए। कंस्ट्रक्टिव नहीं डिस्ट्रक्टिव प्रोग्राम चाहिए।

विनोबाजी ने इतने दिन तक रचनात्मक कार्यक्रम चलाए। गांधीजी ने इतने दिनों तक रचनात्मक कार्यक्रम चलाए। हमें रचनात्मक शब्द भी बड़ा प्रेमपूर्ण लगता है। हमें लगता है कि कुछ रचनात्मक!

मेरे पास लोग आते हैं, वे कहते हैं कुछ रचनात्मक कार्यक्रम बताइये। क्यों? रचनात्मक का मतलब होता है जो मौजूद है उसमें कुछ जोड़ने वाला। और जो मौजूद है वह इतना सड़ गया हैकि उसमें अब कुछ भी नहीं जोड़ना है। उसमें जोड़ने से उस मौजूद के बचने का इंतजाम पैदा होता है और कुछ भी नहीं होता है। जैसे एक

मकान गिरने वाला है और कोई कहता है, कोई रचनात्मक कार्यक्रम दो तो एक खंभा लगा दीजिए दीवाल में चार ईंटे जोड़ कर और एक सहारा लगा दीजिए कि यह रचनात्मक कार्यक्रम है।

नहीं, मैं कहता हूं, इस देश का भवन इतना जरा-जीर्ण हो गया है कि अब इसकी रचना में एक ईंट भी खर्च करना पागलपन है। क्योंकि ये पूरा मकान तो गिरेगा उसके साथ वह रचना के लिए जितनी ईंटें लगाई थीं वे भी फिजूल चली जाएंगी। अभी रचना नहीं करनी है। पहले एक बार इस मुल्क के मकान को पूरा गिरा देना है। फिर रचना हो सकती है। फिर ही रचना हो सकती है। विध्वंस के लिए मुल्क का मन अगर तैयार हो जाए तो ही रचना हो सकती है। विध्वंस पहला चरण होगा सृजन दूसरा। अब सृजन की बात नहीं करनी है। अब सृजन की बात ही छोड़ देनी है मरे हुए मन को वह बात बहुत अपील करती है। वह मरा हुआ मन कहता है कुछ जोड़ने की बात बताओ, मिटाने की बात मत करो कुछ जोड़ो, कुछ निर्माण करो, कुछ निर्मित करो।

पांच हजार साल से हम वही कर रहे हैं। उसका अंतिम परिणाम ये हुआ है कि पांच हजार साल पहले बनाया गया मकान अब भी जिंदा है। क्योंकि उनमें हम रचनात्मक जोड़ लगाते ही चले गए। अब उन मकानों में रहना मुश्किल है। क्योंकि उन मकानों के गिर जाने का किसी भी दिन खतरा है। उनमें भीतर तो रहना मुश्किल है। लेकिन बाहर हम रचनात्मक कार्यक्रम जारी रख सकते हैं। मकान के भीतर रहना मुश्किल हो गया है। बाहर योजनाएं चलती रहती हैं कि और चार डंडे जोड़ कर लगा दो, और नया रोगन कर दो, और नया पुताई कर दो। फिर दीवाली आ गई अब फिर इसको फिर... ठीक कर दो। फिर ये नया मालूम होने लगे।

लेकिन अब यह आगे महंगा पड़ जाएगा। सारी दुनिया ने अपने मकान बदल लिए हैं सिर्फ हम अपने पुराने मकान से चिपके हुए हैं। या तो हमें ये मकान गिराना पड़ेगा। या इस मकान के साथ हम सबके गिर जाने का डर है। ये मकान तो गिरेगा। कहीं ऐसा न हो कि इसके नीचे हम सब दब कर मर जाएं।

इस संबंध में और बात आपसे सांझ करूंगा। इतना ही कहना चाहता हूं कि युवक अपने मन में विध्वंस के लिए भी एक आदर का भाव ले ले। सृजन के लिए आदर का भाव बिल्कुल स्वाभाविक है। विध्वंस के लिए आदर का भाव लेना बहुत क्रांतिकारी कदम है। और जो भी रेवोल्यूशनरी माइंड है, जो भी क्रांतिकारी विचारक है, वह विध्वंस की पहले तैयारी करेगा। वह कहेगा, हम तोड़ना चाहते हैं। निर्माण करेंगे लेकिन पहले हम तोड़ेंगे। पहले हम इसको मिटाते हैं जिससे हम परेशान हो रहे हैं। फिर हम नये को बना लेंगे।

नये मंदिर बनाने पड़ेंगे। बिना मंदिरों के रहना मुश्किल है। लेकिन पुराने मंदिर गिराए बिना नये मंदिर बनाने की बात भी नहीं उठानी है। क्योंकि नये मंदिर बनाने की बात पुराने को गिराए बिना उठाने पर खतरा यह पैदा होता है कि सब पुराने मंदिर दीवारों पर नया रंग-रोगन पोत कर घोषणा करने लगते हैं कि ये तो नये हो गए अब और नये की क्या जरूरत है।

पुराना नये की तरह कवायद करता है। वह नये की तरह रंग-रोगन बता कर प्रकट करना चाहता है कि नये की कोई जरूरत नहीं है। इस देश की जड़ों में पुरानी जड़ों को खोज लेना है, उन्हें उखाड़ कर फेंक देना है। हो सकता है, पूरा वृक्ष गिर जाए। लेकिन जिंदा कौमें कभी इसकी फिक्र नहीं करतीं कि क्या गिर जाएगा। क्योंकि जिंदा कौमें बनाने की हिम्मत सदा अपने भीतर रखती हैं। सिर्फ मरी हुई कौमें डरती हैं कि कुछ गिर न जाए, कुछ टूट न जाए। क्योंकि फिर हम बना तो न सकेंगे। फिर हम बना तो न सकेंगे। फिर हम बना न सकेंगे। ये डर उन्हें गिराने से रोकता है। और जितना वे डरते चले जाते हैं उतना ही नये को बनाने की जगह नहीं रह जाती। नये को बनाने का उपाए नहीं रह जाता।

और ध्यान रहे, जब तक पुराना बना रहता है तब तक नये को बनाने की जरूरत इतनी पीड़ादायी नहीं हो पाती कि हम नये को बनाने को निकल पड़े। अगर पुराना मकान मौजूद है तो हम किसी तरह गुजारा करते चले जाते हैं।

पुरानी संस्कृति को तोड़ देना पड़ेगा। पुरानी सभ्यता को तोड़ देना पड़ेगा। और अंतिम बात भारत को किसी तरह भारतीयता से मुक्त करने की जरूरत है। जब तक भारत भारतीयता से मुक्त नहीं होता तब तक आधुनिक नहीं हो सकता है। आधुनिक होना हो तो भारतीयता से मुक्त होना पड़ेगा। और भारतीयता से मुक्त होने में प्राणों को बड़ा कष्ट आएगा। क्योंकि हमारा सारा अहंकार भारतीय होने से जुड़ गया है। अब वह अहंकार दुनिया में नहीं टिकेगा।

... चीनी थे, जापानी थे, जर्मन थे, हिंदू थे, मुसलमान थे, ईसाई थे, जैन थे आदमी जैसी चीज पुरानी दुनिया में नहीं है। आदमियत जैसी चीज पुरानी दुनिया में नहीं है। जगत जैसी कोई चीज पुरानी दुनिया में नहीं थी। जगत जैसी कोई चीज पुरानी दुनिया में नहीं थी। जगत हजार खंडों में टूटा हुआ है। लेकिन अब ये असंभव हो गया है कि जगत हजारों खंडों में टूटा रह जाए।

जब तक राजनीतिज्ञों की चाल थोड़े दिन और चल सकेगी। क्योंकि आदमी का मन पुराना है। और राजनीतिज्ञ उस पुराने मन का शोषण किए चले जाते हैं। तब तक राष्ट्र टिकेंगे। लेकिन अब राष्ट्रों का टिकना बहुत महंगा हो गया। अब इनका होना बहुत खतरे से भरा हुआ है। अब इनके न होने में मनुष्यता का हित है। और जब तक धर्मगुरुओं की चाल चलेगी तब तक हिंदू और मुसलमान बचेंगे। लेकिन अब उनकी चाल भी ज्यादा दिन नहीं चल सकेगी। हालांकि वे चालों की नई-नई तरकीबें सोचते हैं। अगर हिंदू-मुस्लिम दंगा हो जाए तो वे यह नहीं कहते कि हिंदू-मुसलमान की वजह से हो गया है। वे कहते हैं, यह गुंडों की वजह से हो गया है। यह गुंडा कौन है इसका पता लगाना बहुत मुश्किल है। यह गुंडा कहां है इसका पता लगाना मुश्किल है। जब कि मैं आपसे कहता हूं सब झगड़े महात्माओं के कारण होते हैं और गुंडों के कारण कोई झगड़ा नहीं होता। गुंडे बेचारे आखिर में फंस जाते हैं। और महात्मा बड़े होशियार हैं। झगड़े के बीज बोते हैं और झगड़ा फैल जाता है तो अमन कमेटियां भी बनाते हैं। शांति-कमेटियां भी बनाते हैं। झगड़े को शांत भी करते हैं।

एक गाय की पूंछ कट जाए किसी गांव में तो हिंदू-मुस्लिम दंगा हो जाएगा। और हम कहेंगे गुंडों ने दंगा कर दिया। जब कि सच बात यह है कि जिन महात्माओं ने यह समझाया कि गाय माता है, वह झगड़े की जड़ में है। अगर गाय माता न हो तो गाय की पूंछ कट जाने से झगड़ा होने वाला नहीं है। सच तो यह है कि गाय माता न हो तो कोई पागल गाय की पूंछ भी न काटे। गाय की पूंछ भी इसीलिए कटती है, महात्माओं की वजह से। और गाय की पूंछ कटने पर झगड़ा भी इसीलिए होता है, महात्माओं की वजह से। लेकिन महात्मा पीछे समझाने भी आ जाते हैं उनकी समझाने की तरकीबें भी बड़ी अच्छी हैं। वे ये नहीं कहते हैं कि हिंदू-मुसलमान की वजह से झगड़ा है। वे यह कहते हैं, असली हिंदू बनो तो झगड़ा नहीं होगा। असली मुसलमान बनो तो झगड़ा नहीं होगा। जब नकली हिंदू और नकली मुसलमानों से इतना उपद्रव हो रहा है तो असली हिंदू, असली मुसलमान कितना उपद्रव करेंगे हिसाब लगाना बहुत मुश्किल है। जब ये सूडो, नकली इतना उपद्रव करते हैं तो असली क्या करेंगे, यह कहना मुश्किल है। लेकिन वे समझाए चले जाते हैं।

गांधी जी जैसे अच्छे आदमी इस देश में हिंदू-मुसलमान को एक करने की कोशिश करते थे लेकिन असफल रहे। असफलता का कारण जिन्ना नहीं हैं, असफलता का कारण हिंदू-मुसलमान नहीं हैं। असफलता का कारण गांधी का पक्का हिंदू होना है।

गांधी जैसे अच्छे आदमी भी ये हिम्मत नही कर सके कि कह दें कि मैं सिर्फ आदमी हूं। अब ये खान अब्दुल गफ्फार समझाते फिरते हैं लोगों को। लेकिन वे पक्के मुसलमान हैं। हिंदू-मुसलमान एक हो जाएं। लेकिन वे यह नहीं कहते कि हिंदू-मुसलमान मिट जाएं। मैं आपसे कह रहा हूं कि हिंदुस्तान के युवकों को हिंदू-मुसलमान एक हो जाएं इस झंझट में पड़ना ही मत। गांधी जैसा अच्छा आदमी एकदम असफल सिद्ध हुआ है।

अब तो हिंदुस्तान के युवक को कहना है कि हिंदू-मुसलमानों को मिटाएंगे। एक नहीं करना है। एक हो ही नहीं सकते वे। असल में उनका होना ही उपद्रव है। उनकी मौजूदगी ही खतरा है। आने वाले युवक को घोषणा करनी चाहिए कि मैं सिर्फ आदमी हूं न मैं हिंदू हूं न मैं मुसलमान हूं। फिर हम देखें कि हिंदू-मुस्लिम दंगा कैसे होता है!

लेकिन तब दोहरे नुकसान होंगे। जो महात्मा झगड़ा करवाते हैं वे भी धंधे के बाहर हो जाएंगे। और जो झगड़े को शांत करवाते हैं वे भी धंधे के बाहर हो जाएंगे। और इन दोनों महात्माओं में आपस में सांठ-गांठ है। झगड़ा कराने वाले और झगड़ा शांत कराने वाले।

मैंने सुना है, एक गांव में दो आदमियों ने एक नया धंधा शुरू किया, खिड़कियां, कांच साफ करने का। तो उनमें से एक आदमी गांव में जाकर पहले रात में सोए हुए लोगों की खिड़कियों पर डामर फेंक आता है।

दो-तीन दिन बाद दूसरा आदमी चिल्लाता हुआ निकलता था, खिड़कियां साफ करवानी हैं। और लोग बाहर आते कि तुम्हारी बड़ी कृपा कि अच्छे आ गए। हम बड़े चिंतित थे कि खिड़कियां कैसे साफ हों? न मालूम कौन दुष्ट डामर फेंक गया है।

वे दोनों पार्टनर थे।

इधर एक महात्मा झगड़ा करवाता है और उधर दूसरा महात्मा शांत करवाता है। वे दोनों धंधे के बाहर हो जाएंगे। हिंदू-मुसलमान को मिटाने की जरूरत है। अब हिंदू-मुस्लिम एकता की बात नहीं करनी है भविष्य में। अब तो हिंदू-मुसलमान न रह जाएं इसकी कोशिश करनी है। अब तो ऐसी कोशिश करनी है कि आदमी रहे-- न हिंदू हो, न मुसलमान; न ईसाई, न जैन; न हिंदुस्तानी, न पाकिस्तानी। हिंदुस्तान के बच्चे नुकसान में हैं, पाकिस्तान के बच्चे नुकसान में हैं। कोई समझ की बात नहीं है कि हिंदुस्तान और पाकिस्तान किसलिए लड़ते रहे हैं? इससे ज्यादा नासमझी की कोई बात नहीं हो सकती। लेकिन हमारी सारी ताकत इसमें लग जाएगी। जब कि हिंदुस्तान और पाकिस्तान के दोनों लोग खुशहाल हो सकते हैं। और दोनों साथ होकर ज्यादा खुशहाल हो सकते हैं। अगर यह सारी जमीन इकट्ठी हो तो आज दुनिया में स्वर्ग निर्मित किया जा सकता है। विज्ञान ने वे सारे साधन दे दिए हैं कि अगर मनुष्य की मूढ़ता न जीती तो हम मनुष्य को यहीं स्वर्ग दे देंगे। अब कहीं आगे स्वर्ग खोजने की कोई जरूरत नहीं है।

सारी बीमारियां मिटाई जा सकती हैं। सारी दीनता-दरिद्रता मिटाई जा सकती है। सारा अज्ञान मिटाया जा सकता है। और आदमी को वह सब दिया जा सकता है जिसकी ऋषि-मुनियों ने स्वर्ग में कल्पना की है। कौन सी चीज बाधा बन रही है? सिर्फ एक चीज बाधा बन रही है राष्ट्रों की सीमाएं, धर्मों की सीमाएं, आइडियालॉजिस्ट की सीमाएं। और ध्यान रहे पुराने धर्म बासे पड़ जाते हैं तो नये धर्म पैदा हो जाते हैं जैसे कम्युनिज्म नया धर्म है। हिंदू-मुसलमान पुराने पड़ गए हैं। अब झगड़े में रस नहीं है तो अमरीका और रूस नई आइडियालॉजी, नये धर्म बना कर खड़े होते हैं। क्रेमलिन भी मक्का है कुछ लोगों के लिए। वे वहां भी यात्रा करने जाते हैं और बड़े प्रसन्न लौटते हैं।

जैसा एक मुसलमान हज करके लौटता है वैसा एक कम्युनिस्ट मास्को होकर लौट आता है। तो वह उसकी इज्जत बढ़ जाती है। वह हाजी हो जाता है। वह मास्को हो आया, वह कम्युनिस्टों के मक्का-मदीना हो आया। वह वहां दर्शन कर आया नये देवताओं के नये भगवान के। नये उपद्रव पैदा हो जाते हैं। क्या आदमी को सारे उपद्रवों से नहीं बचाया जा सकता? इस संबंध में दोपहर मैं आपसे मैं बात करूंगा।

मेरी ये बातें इतनी शांति और प्रेम से सुनीं, उससे बहुत आनंदित हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे हुए परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

छठवां प्रवचन

निःशब्द में ठहर जाएं

मेरे प्रिय आत्मन्!

जैसे कोई मछली पूछे कि सागर कहां है? ऐसे ही यह सवाल है आदमी का कि सत्य कहां है? मछली सागर में पैदा होती है सागर में जीती है और मरती है। शायद इसी कारण सागर से अपरिचित भी रह जाती है।

जो दूर है उसे जानना सदा आसान जो पास है उसे जानना सदा कठिन है। मछली सागर भर को नहीं जान पाती है। रात शायद आकाश के तारे भी उसे दिखाई पड़ते हैं और सुबह शायद ऊगता हुआ सूरज भी दिखाई पड़ता है। सिर्फ एक जो नहीं दिखाई पड़ता मछली को वह वही सागर है जिसमें वह पैदा होती है, जीती है और मरती है।

सत्य कहां है? कहीं दूर होता तो हम पा लेते, खोज लेते। कहीं चांद-तारों पर होता तो हम पहुंच जाते। दूरी बाधा न बन सकती। एवरेस्ट पर्वत पर तो हम चढ़ जाते हैं। और पैसिफिक महासागर में होता तो हम गहरे उतर जाते। लेकिन सत्य इतने भीतर है जितने कि हम भी अपने से निकट नहीं हैं। और यही सबसे बड़ी कठिनाई हो जाती है। जो पास है उसे खोजना मुश्किल ही हो जाता है। क्योंकि खोजने के लिए जगह चाहिए, स्पेस चाहिए जहां हम खोज सकें। इतना भी फासला नहीं है हमारे और सत्य के बीच। इसलिए सबसे बड़ी कठिनाई यही हो गई है कि जो हम हैं उसी को हम नहीं खोज पाते। यह कहना भी उचित नहीं है कि सत्य पास है क्योंकि पास भी दूरी का एक नाम है यही कहना उचित होगा कि हम जो हैं वही सत्य है। अन्यथा हो ही नहीं सकता।

मैंने छोटी सी एक कहानी सुनी है, उससे मैं अपनी बात शुरू करूं।

मैंने सुना है कि ईश्वर ने दुनिया बनाई, और जब तक आदमी नहीं बनाया था तब तक बड़ी चैन थी उसे। आदमी को बना कर ही मुसीबत शुरू हो गई। आदमी को बनाते ही परमात्मा को एक क्षण भी शांति से जीना मुश्किल हो गया होगा ये हम समझ सकते हैं। और उसका मकान बीच में था, पास था और सारे लोग दिन-रात घेरे रखते और न मालूम कैसे-कैसे सुझाव देते और न मालूम कैसी-कैसी शिकायतें करते। कोई कहता कि आज सूरज न निकले और कोई कहता कि आज वर्षा हो जाए। और कोई कहता कि आज सूरज निकले। और आज वर्षा न हो। और जितने लोग थे, जितने मुंह थे उतने सुझाव थे उतनी शिकायतें थीं। उस ईश्वर ने अपने सारे देवताओं को इकट्ठा किया और कहा कि मुझे आदमी से बचने के लिए कोई जगह चाहिए। अन्यथा मैंने आदमी को बनाया। आदमी मुझे मार डालेगा। मुझे कोई ऐसी जगह बता दो जहां आदमी न पहुंच पाए। किसी ने कहा, गौरीशंकर ठीक होगा उस पर चले जाओ। और उसने आंख बंद की और कहा कि नहीं ठीक नहीं होगा थोड़ी ही देर बाद तेनसिंग और हिलेरी वहां चढ़ जाएंगे। तो किसी ने कहा कि चांद पर चले जाएं। और उसने आंख बंद की और उसने कहा कि यह भी नहीं चलेगा, आर्मस्ट्रांग के पैर पड़ने के ही करीब है।

और बहुत सुझाव थे, लेकिन उसे कोई न जंचा। तब एक बूढ़े देवता ने उसके कान में कहा कि फिर तो एक ही रास्ता है। आप आदमी के भीतर छिप जाएं। ईश्वर ने कहा, यह बात जंचती है। क्योंकि आदमी शायद ही वहां जाने की कभी कोशिश करे। इस जगह पर हर आदमी नहीं जाएगा।

यह कहानी पता नहीं कहां तक सच है। लेकिन इसका निष्कर्ष तो सच ही मालूम पड़ता है। ये पूरी कहानी झूठ हो सकती है। लेकिन आखिरी बात तो सच है। आदमियों के भीतर छिपा है वह जिसे हम खोजते हैं। और

खोज का खतरा यह है कि खोज सदा बाहर की तरफ ले जाती है। खोज बाहर की तरफ ले जाती है। जैसे ही हम खोजने की बात, सर्च की और सीकिंग की बात सोचते हैं वैसे ही बाहर चले जाते हैं।

सत्य की खोज के संबंध में कहा गया है कि मैं बोलूं तो पहली तो बात मैं ये बोलूंगा कि सत्य को आप खोज न सकेंगे। क्योंकि खोज का अर्थ ही उसे खोजना होता है जो खो गया हो। सत्य को हमने कभी खोया नहीं। असल में सत्य वही है जिसे खोने का उपाय न हो। जिसे खोया जा सके वह सत्य नहीं हो सकता। सत्य वही है जो हमारा प्राणों का प्राण है हमारे अस्तित्व का अस्तित्व है। उसे हम खो कैसे सकेंगे! इसलिए सत्य की खोज शब्द बहुत कंट्राडिक्ट है। यह खोज सत्य की नहीं होती। खोज सदा ही असत्य की होती है।

इसलिए जितना आदमी खोज में आगे बढ़ता है उतनी असत्य की दुनिया निर्मित होती चली जाती है। खोज से नहीं होगा काम इसलिए भी कि खोज उसकी हो सकती है जो दूर हो। उसकी नहीं हो सकती जो पास हो। और इसलिए भी खोज उसकी नहीं हो सकती है सत्य की क्योंकि खोजने के लिए कम से कम दो चाहिए खोजने वाला और जिसे खोजना हो वह। और सत्य के मामले में दोनों एक ही हैं। वह जो खोज रहा है उसी को खोजा भी जाना है। यहां दोनों ही जैसे चित्रकार बनाने वाला अलग होता है और चित्र बनता है तो अलग होता है। मूर्तिकार अलग होता है मूर्ति बनती है तो अलग होती है। यह सत्य की खोज नर्तक की भांति है, डांसर की भांति है जहां नृत्य और नृत्यकार एक ही होते हैं। जहां दो नहीं होते। यहां सत्य की खोज करने वाला और सत्य एक ही है।

बुद्ध को जिस दिन सत्य मिला भाषा में कहना पड़ेगा मिला। नहीं, उचित तो होगा कहना कि जिस दिन बुद्ध ने ये पाया कि मैंने सत्य कभी खोया नहीं है उसी दिन लोग इकट्ठे हो गए गांव के और उन्होंने पूछा तुम्हें क्या मिला है हमें ठीक से बता दो तो हम भी खोज पर चले जाएं। तो बुद्ध ने कहा कि एक काम भूलकर मत करना खोज पर मत जाना क्योंकि जब तक मैं खोजता रहा तब तक न पा सका। और दूसरी बात ये मत पूछो कि मुझे क्या मिला है क्योंकि मिला मुझे कुछ भी नहीं है जो सदा से मेरे पास था सिर्फ उसका पता चला है। मिलता वह है जो हमारे पास न हो। जो मेरे पास ही था और जिसका मुझे पता नहीं था उसका मुझे पता चल गया है। इसलिए बुद्ध ने कहा, यह मत कहो कि मुझे मिला क्या है यह पूछो कि मैंने खोया है? मैंने असत्य खो दिया है इतना मैं कह सकता हूं। सत्य मैंने पा लिया है ये कहना गलत होगा। क्योंकि सत्य तो था ही। तो लेकिन जो है ही और इतने पास है वह भी हमें पता नहीं है। और हमारे सोचने की और खोजने के जो ढंग हैं हमारी खोज की जो व्यवस्था है वह उसका पता भी न चलने... क्योंकि जैसा मैंने कहा कि खोज का मतलब ही बाहर खोजना होता है। खोज का मतलब ही दूर खोजना होता है। खोज का मतलब ही पराए को खोजना होता है। खोज का मतलब ही जो नहीं हूं मैं जो नहीं है मेरे पास उसको खोजना होता है और सत्य का मतलब ही यही होता है कि जो है दैट व्हीच इ.ज। वह नहीं हो जो होगा, हो सकता है। नहीं जो है ही। इसी क्षण अभी और यहां और ऐसा कोई क्षण न था जो नहीं था जो है ही सदा। उसे खोजने की बात सोचनी पड़ेगी बहुत पहलुओं से। एक पहलू से हम बात शुरू करें।

सुना है मैंने, एक फकीर औरत है राबिया। एक सांझ अपने झोपड़े के बाहर कुछ खोजती है। पास-पड़ोस के लोगों ने सोचा, बूढ़ी औरत है कुछ सहायता कर दें। पुराने जमाने की बात है ये अब तो कोई नहीं करेगा। बहुत पहले की बात है। अब तो बूढ़ी औरत की कौन सहायता करेगा? पड़ोस के लोग आ गए और उन्होंने कहा कि क्या खोजती हो, हम सहयोगी हो जाएं। उसने कहाः मेरी सुई खो गई है। तो वे सारे लोग खोजने लगे। नासमझ लोग रहे होंगे क्योंकि उनमें से किसी ने भी ये न पूछा कि सुई खोई कहां? सुई जैसी छोटी चीज बड़ा

रास्ता सांझ सूरज का ढलता हुआ वक्त। इतनी छोटी चीज को जब तक ये पता न हो कि वह कहां खोई है, खोजना मुश्किल है। लेकिन वे ही नासमझ न थे, हम सभी नासमझ हैं। हम सभी खोज पर निकल जाते हैं कोई आनंद खोजता है, कोई सत्य खोजता है, कोई ईश्वर कोई शांति। बिना यह पूछे कि खोया कहां है? और वह रास्ता बहुत बड़ा न था। जिस अस्तित्व में हम खोजते हैं वह बहुत बड़ा है। कहां खोया है, इसका ठीक पता न हो तो खोजना बहुत मुश्किल है। फिर एक आदमी को खयाल आया जब सूरज बिल्कुल ढलने लगा और अंधेरा उतरने लगा तो उसने कहा, अंधेरा उतरने के करीब है, सुई जैसी छोटी चीज मिल न सकेगी। ये बूढ़ी औरत, यह बता दे कि खोई कहां है?

उसने कहा, यह दुख की बात है। यह मत पूछो तो अच्छा। खोजो तो ठीक, यह सवाल मत उठाओ। वे सारे लोग रुक गए और उन्होंने कहा, यह सवाल तो हमें पहले ही पूछ लेना चाहिए था। सुई खोई कहां है? अगर तू न बताती हो तो हम खोजना बंद करें। हमें व्यर्थ परेशान न कर। उस बूढ़ी औरत ने कहा, सुई तो मैंने घर के भीतर खोई है, लेकिन वहां उजाला नहीं है, मेरे पास दीया नहीं है। तो मैंने सोचा, जहां उजाला है वहीं तो खोजा जा सकता है। अंधेरे में तो खोजना संभव नहीं है। इसलिए मैं बाहर खोजती थी वहां सूरज की रोशनी है। और घर में अंधेरा है। अंधेरे में कैसे खोजोगे! और लोगों ने कहा, पागल है तू औरत! पागल हो गई है! जहां खोई है चीज वहीं खोजनी पड़ेगी प्रकाश से क्या होगा! उस बूढ़ी औरत ने कहा, लेकिन अंधेरे में कैसे खोज सकते हैं? तो उन सारे लोगों ने कहा कि इस पागल को खोजने दो। हम अपने घर लौट जाएं। जब वे लौटने लगे तो वह बूढ़ी बहुत हंसने लगी। उसने कहा कि तुम मुझे पागल कहते हो! तब तो सारी दुनिया ही पागल है क्योंकि मैंने सारे लोगों को बाहर खोजते देखा है उसे जो भीतर है।

हमारे भी बाहर खोजने का कारण वही है जो उस बूढ़ी राबिया का है। वह कारण यही है कि हमारी आंखों की रोशनी बाहर पड़ती है। हमारे हाथ की रोशनी बाहर पड़ती है। हमारी सारी इंद्रियां बाहर की तरह देख पाती हैं और भीतर अंधेरा है। तो हम बाहर खोजना शुरू कर देते हैं जहां उजाला है वहीं तो खोज सकते हैं। बाहर बहुत रौशनी है और बाहर हमारा कान भी सुनता है आंख भी देखती है, हाथ भी फैलता है पैर भी चलता है। हमारी सारी इंद्रियां बहिर्मुखी हैं। वे बाहर की तरफ तो जाती हैं भीतर की तरफ नहीं जातीं। तो जहां इंद्रियां जा सकती हैं जहां पैर ले जाएंगे वहीं तो खोजेंगे न, और जहां आंखें देखेंगे वहीं तो खोजेंगे न, और जहां कान सुनेंगे वहीं तो खोजेंगे न। न जहां आंख देखती हो, न कान सुनता हो, न हाथ खोज सकता हो, न पैर चल सकते हों, वहां खोजेंगे कैसे? तर्क हमारा भी वही है जो उस बूढ़ी औरत ने मजाक किया है। हम भी बाहर खोजने निकल जाते हैं।

बाहर खोज कर जो हम पा लेंगे बाहर खोज कर जरूर बहुत कुछ पा लेंगे। बाहर खोज कर शक्ति पाई जा सकती है। विज्ञान भूल में है वह सोचता है कि हम सत्य पा रहे हैं वह सिर्फ शक्ति पा रहा है। विज्ञान के पास कोई शक्ति नहीं है विज्ञान के पास सिर्फ शक्ति का आविष्कार है। और इसलिए विज्ञान को अपने सत्य रोज बदलने पड़ते हैं। सत्य रोज बदल सकता है। न्यूटन के वक्त में विज्ञान का सत्य दूसरा होता है, आइंस्टीन के समय में दूसरा होता है। विज्ञान का सत्य रोज बदलता है इसलिए विज्ञान कहता है सत्य नहीं। अब उसने ठीक भाषा बोलनी शुरू की है उसने कहा कि हम अप्रॉक्सिमेट ट्रुथ करीब-करीब सत्य की बात करते हैं। लेकिन सोचने जैसा मजा है करीब-करीब सत्य हो सकता है? अप्रॉक्सिमेट ट्रुथ हो सकता है? अप्रॉक्सिमेट लव हो सकता है? या तो सत्य होगा या नहीं होगा अप्रॉक्सिमेट जैसी कोई चीज नहीं हो सकती। अप्रॉक्सिमेट ट्रुथ झूठ का ही नाम होगा। जो सत्य के जैसा अभिनय करता है।

नहीं लेकिन विज्ञान कुछ खोजता है वह जिंदगी के नियम खोज लेता है और नियमों की मालकियत खोज लेता है। और मालिक होकर शक्तिशाली हो जाता है लेकिन... नहीं है।

सत्य नहीं उसके हाथ में आ जाता है। शक्ति उसके हाथ में आ जाती है। और ऐसे आदमी के हाथ में शक्ति का आना जिसके पास सत्य नहीं है बहुत खतरनाक है क्योंकि तब सारी शक्ति असत्य के उपयोग में नियोजित होगी हो रही है होती रही है। विज्ञान की खोज शक्ति की खोज है इसलिए विज्ञान कांकरिंग की भाषा में सोचता है जीतने की भाषा में सोचता है। प्रकृति को जीतो वह जो दूसरा है उससे सदा लड़ा ही जा सकता है। वह जो दि अदर है उससे लड़ने के सिवाए और कोई उपाय नहीं है। इसलिए लड़ो और जीतो और ताकत को बढ़ाओ। अणु की खोज हो या विज्ञान की कोई और खोज वे सब शक्ति को पा लेने की खोज हैं।

लेकिन सत्य उससे उपलब्ध नहीं है। सत्य है भीतर और भीतर का जो डायमेंशन है, भीतर का जो आयाम है वह जो आंतरिक है वह जो इनवर्ट है वहां विज्ञान की कोई गति नहीं क्योंकि विज्ञान का मतलब ही ये है कि जो बाहर है उसे खोजने की व्यवस्था। इसलिए विज्ञान सत्य को न खोज सके लेकिन विज्ञान की शक्ति की खोज ने हमें बहुत मुश्किल में डाल दिया है। हमें ऐसा लगता है कि विज्ञान के पास खोजने के सब आयाम उपलब्ध हो गए। इसलिए भीतर के आयाम की बात ही मंदी और धीमी हो गई है। इसलिए पिछले हजार वर्षों में बुद्ध और महावीर और क्राइस्ट के हैसियत के लोग पैदा नहीं किए जा सके। क्योंकि वे भीतर की आयाम की यात्रा में पैदा होते थे। इनर डायमेंशन की खोज में जो लोग जाते थे वहां पैदा होते थे। इसलिए पिछले तीन सौ वर्षों में मनुष्य की प्रतिभा ने आइंस्टीन पैदा किया, न्यूटन पैदा किया प्लांक पैदा किया और और तरह के लोग पैदा किए जो बाहर की खोज की यात्रा पर मिली हुई प्रतिभा के चरण हैं। लेकिन भीतर की खोज की प्रतिभा जो थी उसके चरण पिछले निरंतर हजार वर्षों में क्षीण होते चले गए।

धीरे-धीरे हमें ऐसा लगा विज्ञान से सब मिल जाएगा। इसलिए भीतर की बात ही फिजूल है। बाहर ही सब मिल जाएगा। विज्ञान राबिया की भूल कर रहा है। और आज नहीं कल विज्ञान पर सारी दुनिया वैसे ही हंसेगी जैसे राबिया पर उस दिन उस गांव के लोग हंसे और उन्होंने कहा, पागल! अगर भीतर खोया है तो भीतर ही खोजना पड़ेगा। रोशनी बाहर होने से कुछ भी नहीं होता। सूरज और चांद और तारे और रौशनी बहुत है बाहर प्रकृति की शक्तियां हैं बहुत बाहर परमात्मा का फैलाव है बहुत बाहर लेकिन सत्य का पहला अनुभव भीतर ही होता है। ये भीतर पहला पहलू है सत्य का। इनवर्टनेस सत्य की पहली क्वालिटी। सत्य का पहला लक्षण और पहला गुण भीतरी होना है। सत्य की तरफ एक दूसरी तरफ से भी हम सोचें।

मनुष्य बहुत कुछ निर्माण कर सकता है। लेकिन सत्य निर्माण नहीं कर सकता। क्योंकि सत्य को निर्मित करने का कोई उपाय नहीं है। सत्य वह है जो है ही। मनुष्य जो भी निर्माण करेगा वह एक अर्थ में असत्य होगा। वह इस अर्थ में असत्य होगा क्योंकि वह निर्मित है, क्रिएटेड है, बनाया गया है। सत्य वह है जो अन-क्रिएटेड है, बनाया नहीं गया, है। इजनेस जिसका गुण है, होना जिसका गुण है, जो है। जब सब बनाई गई चीजें नहीं थीं तब भी था और जब सब बनाई गई चीजें मिट जाएंगी तब भी होगा।

मनुष्य बहुत कुछ बना सकता है और मनुष्य ने बहुत कुछ बनाया। बनाने की वजह से उसे एक भ्रांति पैदा हुई कि वह सत्य को भी बना सकता है और तब उसने सत्य के बहुत से सिद्धांत बनाए। शास्त्र बनाए, सिस्टमस बनाए सारी फिलासफी सत्य को बनाने की नासमझी है।

वह चाहे पूरब में हो और चाहे पश्चिम में हो। सारे दुनिया के दार्शनिक और विचारक सत्य को कंस्ट्रक्ट करने की कोशिश में लगे हैं। लेकिन कंस्ट्रक्शन कभी सत्य नहीं हो सकता। आदमी की बनाई गई चीज कभी सत्य

नहीं हो सकती। सत्य वह है जो आदमी के होने के भी पहले मौजूद है, और आदमी के न हो जाने पर भी मौजूद होगा। सत्य का मतलब हैवह जो एक्झिटेंस है वह जो है ही। इसलिए हम सत्य को बना नहीं सकते हैं। लेकिन पिछले पांच हजार वर्षों में निरंतर आदमी सत्य को बनाने की कोशिश किया है। सत्य तो नहीं बना लेकिन सिद्धांत बहुत बन गए। और सिद्धांतों ने आदमी के मन को इस बुरी तरह जकड़ लिया कि सत्य की खोज बंद हो गई। अब जब हम सत्य की खोज पर जाते हैं तो अक्सर हम सिद्धांत को लेकर घर लौट आते हैं। सत्य को खोज करने जाते हैं गीता खरीद कर घर आ जाते हैं। सत्य को खोजने जाते हैं कुरान ले आते हैं। सत्य को खोजने जाते हैं कोई गुरु मिल जाता है, गुरुवाणी मिल जाती है, कोई सिद्धांत कोई सिस्टम कोई अरविंद कोई रसल कोई मिल जाता है हम घर लौट आते हैं। सिद्धांत लेकर घर लौट आते हैं और सोचते हैं कि सत्य मिल गया। इन्हीं सिद्धांतों के कारण इतने ज्यादा सत्य दिखाई पड़ते हैं। अन्यथा सत्य एक ही हो सकता है। हां, असत्य बहुत हो सकते हैं।

इस समय जमीन पर तीन सौ धर्म हैं। सत्य के तीन सौ दावेदार हैं। और फिर प्राइवेट किस्म के दावे बहुत हैं उनकी संख्या लगाना बहुत मुश्किल है। लेकिन तीन सौ तो बहुत संगठित दावेदार हैं, आर्गनाइज्ड दावेदार हैं जो कहते हैं सत्य यहां है और बाकी सब जगह असत्य है। ये सत्य के जो दावेदार हैं ये एक-दूसरे को निरंतर लड़ाते हैं। हिंदू मुसलमान को लड़ा रहा है, मुसलमान हिंदू को लड़ा रहा है। ईसाई जैन से लड़ रहा है, जैन बौद्ध से लड़ रहा है। ये सब सत्य के दावेदार संघर्ष में पड़े हुए हैं। जहां सत्य है वहां शांति होगी संघर्ष नहीं। जहां सत्य है वहां कलह न होगी सुलह होगी। जहां सत्य है वहां प्रेम होगा घृणा न होगी। लेकिन ये सारे धर्म ये सारे शास्त्र ये सारे सिद्धांत सिवाय आदमी को लड़ाने के और कुछ भी नहीं करते हैं। निश्चित ही इनके गहरे में असत्य है। और असत्य क्या है? असत्य ये है, वह जो आदमी ने कंस्ट्रक्ट किया है बुद्धि से उसने निर्मित किए हैं सत्य। आदमी के पास बुद्धि है वह निर्मित कर सकता है वह कल्पनाएं खड़ी कर सकता है। वह कल्पनाओं के बड़े व्यवस्थित खेल बना सकता है जैसे ताश के पत्तों के घर बनाए जाते हैं ऐसे शब्दों के घर बना सकता है। और शब्दों के घर बनाकर उन घरों में सोच सकता है कि सत्य मिल गया। हां सत्य पाना कठिन बनाना बहुत आसान है। थोड़ा सा कनिंग और कैल्कुलेटिव माइंड हो तो सिद्धांत बना सकता है। थोड़ा चालाक और थोड़ा हिसाब लगाने वाला आदमी हो तो अपने घर का सत्य बना लेता है। और होममेड सत्यों के कारण बहुत तकलीफ है। एक-एक घर में सत्य बन जाते हैं और झगडे का कारण बनते हैं।

एक बात जो इस दूसरे आयाम में आपसे कहना चाहता हूं वह ये कि सत्य बनाया नहीं जा सकता। सत्य तो मौजूद है इसलिए उस सत्य को जानने के लिए बनाए गए आदमी के जितने सिद्धांत हैं उनको मस्तिष्क से छोड़ना जरूरी है अन्यथा उसे हम न जान सकेंगे जो है, हम उसी को थोपते रहेंगे इंपोज करते रहेंगे जो हमने मान रखा है। इसलिए दुनिया में अपने-अपने सत्यों को हम थोप रहे हैं। हम वह नहीं देख रहे जो है हम वही देख रहे हैं जो हम कहते हैं कि होना चाहिए। हम वही देख रहे हैं जो हम थोप रहे हैं। आदमी अपने ही मन को प्रोजेक्ट किये चला जाता है। कोई कृष्ण को देख रहा है, कोई राम को देख रहा है, कोई हनुमान को देख रहा है, कोई स्वर्ग और मोक्ष देख रहा है। और अपना ही बनाया हुआ सिद्धांत हम प्रोजेक्ट करते चले जाते हैं। आदमी के मन में बहुत बड़ी प्रोजेक्टिंग शक्ति है। वह जो भीतर तय कर ले उसे बाहर देख सकता है।

मैंने सुना है कि मजनू को उस गांव के राजा ने बुला कर कहा कि तू पागल तो नहीं हो गया है? यह लैला बहुत साधारण लड़की है। सुंदर भी नहीं कही जा सकती है। तू इसके पीछे पागल क्यों है? मैंने बहुत सुंदर लड़कियां बुलाई हैं, तू उन्हें देख और किसी को भी पसंद कर ले। उसने मजनू ने कहाः आप पागल हो गए हैं।

आपके पास लैला को देखने के लिए मजनू की आंख कहां? मैं जिस लैला को देखता हूं मेरे अतिरिक्त और कोई देख भी नहीं सकता। क्योंकि लैला को देखने के लिए मजनू की आंख चाहिए। और जिन लड़कियों को आपने खड़ा किया है मुझे वे लैला ही दिखाई पड़ती है उनमें। कोई उनमें मुझे दूसरी लड़की दिखाई नहीं पड़ती।

मजनू ने बड़ी कीमत की बात कही। कीमत की बात उसने ये कही कि वह जो उसे दिखाई पड़ रहा है उसमें उसके आंख का हाथ ज्यादा है। उसका हाथ बहुत कम है जो बाहर है। जो बाहर है वह परदे का काम कर रहा है सिर्फ। जो दिखाई पड़ रहा है वह हम प्रोजेक्ट कर रहे हैं। इसलिए हिंदू के सत्य हिंदू देख लेता है, मुसलमान के सत्य मुसलमान देख लेता है। ईसाई के सत्य ईसाई देख लेता है और तीनों जब अपने सत्य देख लेते हैं तब वे कैसे मानें कि उनका सत्य गलत है और कैसे मानें कि उनसे विपरीत सत्य सही हो सकता है। आदमी सत्य की खोज में दूसरी मुसीबत जो उसके लिए खड़ी है वह आदमी के ही बनाए हुए सत्य। इसलिए जिसे सत्य की खोज पर जाना है उसे आदमी द्वारा मेन मेड ट्रुथ से बचने की जरूरत है। उसे ध्यान रखना पड़ेगा कि वह आदमी के बनाए हुए जाल में न पड़ जाए। चाहे वह जाल कितने ही बड़े तीर्थंकर ने बनाया हो और चाहे कितने ही बड़े अवतार ने बनाया हो चाहे कितने ही बड़े विचारक ने बनाया हो। अगर आदमी को सत्य को जानना है तो उसे आदमी के बनाए गए सारे ख्यालों को हटा कर खड़े होना पड़ेगा नग्न, मौन शांत ताकि वह कोई प्रोजेक्ट न कर सके कुछ और वही देख सके जो है।

मैंने सुना है, एक गांव में एक गरीब आदमी था। और गरीब आदमी ने राजा की गाय खरीदी। अब राजा की गाय है और गरीब आदमी है मुश्किल में पड़ गया। मुश्किल में यह पड़ गया कि उसके पास तो हरी घास भी नहीं है। उसके पास तो सूखा भूसा है। वह गाय को रखता है गाय तो आंख बंद करके मुंह फेर लेती है। वह बहुत कहता है कि तू गौ-माता है, हम तेरे लिए आंदोलन करते हैं, दिल्ली में गोली भी खाते हैं। लेकिन तू हमारा इतना भी नहीं! अब बेटे के पास जो रूखा-सूखा है स्वीकार कर लो।

लेकिन वह गौ-माता बेटे की तरफ बिल्कुल देखती ही नहीं। असल में किसी गौ ने कभी कहा नहीं आदमी हमारा बेटा है। मैं नहीं समझता कि कोई गऊ आदमी को बेटा मानने के लिए राजी भी हो सकती है कि आदमी की इतनी भी योग्यता है कि वह गऊ उसको बेटा माने। लेकिन आदमी थोपे चले जाता है कि तू हमारी माता है। बहुत उसने कहा लेकिन बहुत क्रोध आ गया। माता को पीटा भी। लेकिन फिर भी माता नहीं मानी। फिर उसने कहा, बड़ी मुसीबत हो गई। राजा की गाय खरीद कर दिक्कत में पड़ गया। गांव में एक बूढ़े आदमी के पास सलाह लेने गया कि मैं करूं क्या?

गरीब आदमी, उसने कहा, तू बिल्कुल पागल है। जाकर एक हरा चश्मा खरीद ला और गाय की आंख पर चढ़ा दे। उसने कहा, क्या गाय को ऐसा धोखा देना आसान होगा! उस बूढ़े आदमी ने कहा, आदमी तक को धोखा देना आसान है गाय को तो देना बिल्कुल ही आसान है। तू हरा चश्मा खरीद।

वह चार आने का चश्मा खरीद लाया गाय पर चढ़ा दिया। गाय सूखे भूसे को हरा समझ कर खा रही है। उस ब्राह्मण ने कहा, माता, बेटे को तूने न माना लेकिन हरे चश्मे को तूने मान लिया।

उस बूढ़े को धन्यवाद देने गया कि आपका गायों के संबंध में बड़ा अनुभव मालूम होता है। उस बूढ़े ने कहा, गाय से हमारा कोई लेना-देना नहीं है। आदमी के संबंध में अनुभव है। उसी आधार पर कहा है।

हम सब की आंखों पर चश्मे हैं सिद्धांतों के, शास्त्रों के, संप्रदायों के, पंथों के, गुरुओं के वे चश्मे इतने हैं इतने हैं कि जो है वह दिखाई ही नहीं पड़ सकता। चश्मों के ऊपर चश्मे हैं। सत्य की खोज में उन्हें गिरा देना पड़ता है।

गुरु से बचना शास्त्र से बचना संप्रदाय से बचना सत्य के खोजी के लिए अनिवार्य जरूरत है। लेकिन इसका ये मतलब नहीं है।

और मैं तीसरा बिंदु आपसे बात करूं। कि आप गुरु से बच जाएं, शास्त्र से बच जाएं सिद्धांत से बच जाएं संप्रदाय से बच जाएं। अब तीसरी बात आपसे कहता हूं जो और भी मुश्किल है अपने से भी बचना पड़े। क्योंकि इन सबसे बच कर हमारा माइंड भी जो है वह बहुत इमेजिनेटिव है। हमारा जो मन है वह भी बहुत कल्पनाशील है। हम भी जो है उसको नहीं देखते जो होना चाहिए उसे देखते रहते हैं। हम सब कल्पनाओं में जीते हैं।

इसलिए सत्य से हमारा कभी संबंध नहीं हो पाता। हम सब कल्पनाओं में जीते हैं। हम सब ने कल्पनाएं बना रखी हैं। हम सभी उन्हीं कल्पनाओं में रस लेते हैं। और उन्हीं कल्पनाओं का एक जाल हमें घेरे रहता है ड्रीम्स का।

ऐसा नहीं कि सोने में ही घेरे रहता है, जागने में भी घेरे रहता है। जरा आंख बंद करके आरामकुर्सी पर बैठे और आपको पता चलेगा कि स्वप्न आकर चारों तरफ खड़े हो गए।

जब आप आंख बंद नहीं किए हैं तब भी भीतर स्वप्न चल रहे हैं। यह स्वप्न की हमारी जो क्षमता है यह सत्य के लिए सबसे बड़ा अवरोध है। ऐसा चित्त सत्य को जान सकता है जो स्वप्नों से मुक्त हो जाए। जो कल्पना न करता हो। कल्पना करता ही न हो तभी हम उसे देख पाएंगे जो है अन्यथा हम वह देख लेंगे जो हम देखना चाहते हैं। हम निरंतर वही देखते रहते हैं जो हम देखना चाहते हैं। इसलिए हम बड़ी मुश्किल में पड़ जाते हैं। क्योंकि जब असलियत खुलती है तो डिसइलुजनमेंट होता है। तब लगता है कि अरे! इसलिए जिन लोगों ने सत्य को जाना उन्होंने कहा कि सब माया है। जो जगत है उसको माया नहीं कहा। जो उनका जगत था जो उनका... थी उसे उन्होंने कहा, माया है। क्योंकि पाया कि वह सब सपना है। सपने हम बहुत अदभुत रूप से देख रहे हैं। सब चीजों के बाबत देख रहे हैं। सब चीजों के संबंध में हम सपने निर्मित कर रहे हैं।

अभी आज से पचास साल पहले किसी घर में कैक्टस नहीं मिल सकता था। लेकिन अब सुशिक्षित घर में कैक्टस जरूर होगा। गुलाब बाहर कर दिया गया है। कैक्टस भीतर आ गया है। पहले गुलाब ब्राह्मण हुआ करता था, कैक्टस शूद्र हुआ करता था। अब कैक्टस ब्राह्मण की जगह आ गए हैं। ब्राह्मण शूद्र की जगह बाहर पहरे पर खड़े हो गए हैं। यह कैक्टस घर में घुस आया, यह कभी था नहीं घर में। यह धतूरा कभी गांव के बाहर लगता था, कोई अपने खेत-वेत के किनारे लगा देता था। कोई इसको देखता नहीं था। कोई कालिदास ने, कोई भवभूत ने कभी इसकी प्रशंसा नहीं की। अचानक क्या हो गया? अचानक हो क्या गया? यह कैक्टस इतना प्रीतिकर कैसे हो गया?

आदमी ऊब गया गुलाब से, गुलाब की कल्पना उसने हटा ली उसने अब नई कल्पना का... शुरू किया। इसलिए रोज हमें फैशन बदलनी पड़ती है। कल्पना से भी हम ऊब जाते हैं। हम नई कल्पना बना लेते हैं। एक कल्पना से ऊब जाते हैं करते करते हम दूसरी कल्पना बना लेते हैं। सिर्फ सत्य है ऐसी बात जिससे कोई कभी नहीं ऊबता। कल्पना से तो ऊब ही जाना पड़ेगा क्योंकि अपनी ही कल्पना है कब तक उसको घसीटिएगा। फिर परेशान हो जाते हैं फिर नई कल्पना चाहिए।

इसलिए सत्य की दुनिया में भी फैशन चलते हैं। कभी कोई मार्ग चलता है, कभी कोई महर्षि चलते हैं, कभी कोई योगी चलता है, कभी कोई गुरु चलते हैं वे सब फैशन चलते हैं। जैसे अब महेश योगी हैं उनका फैशन गया। आया था फैशन जोर से लेकिन फैशन जाने के लिए ही आते हैं। वे आते हैं और चले जाते हैं। उनका रुकना

बहुत मुश्किल होता है। इसलिए कि उनसे हम ऊब जाते हैं हमारी ये कल्पना होती है उसको थोपते हैं फिर थोड़े दिन में ऊब जाते हैं। कहते हैं, चुप रहो, अब दूसरी कल्पना चाहिए। मन नये सेंशेसन चाहता है। नई इमेजिनेशन चाहता है। तो वह रोज नई कल्पना करता है। गुलाब से ऊब गया ऐसा नहीं कि गुलाब नहीं लौट आएगा गुलाब बदला लेगा। लौटेगा। थोड़े दिन में कैक्टस से ऊब जाइएगा कैक्टस बाहर जाएगा। गुलाब वापस लौट आएगा। वह चलता रहता है हमारा मन रोज नई कल्पनाएं गूंथता रहता है पुरानी हटाता रहता है। लेकिन ऐसा कभी नहीं करता कि गैप पड़ जाए। पुरानी कल्पना चली जाए और नई न आए वह इंटरवल आ जाए। बीच में जगह खाली छूट जाए, डिसकंटीन्यूटी हो जाए। तो उस खाली गैप से ही सत्य की झलक मिलती है। लेकिन हम बहुत जल्दी करते हैं पुराना वस्त्र उतारते जाते हैं और नया पहनते जाते हैं। एक क्षण को नग्न नहीं हो पाते। कमीज बदल लेते हैं पुरानी तो नई डाल लेते हैं फिर पाजामा बदलते हैं तो नया डाल लेते हैं। लेकिन शरीर कभी भी नग्न नहीं रह पाता। ऐसे ही हमारा चित्त कभी नग्न नहीं रह पाता। खाली नहीं रह पाता, एंप्टी नहीं रह पाता। एक गया हमने दूसरा थोपा असल में जब हम दूसरे का ठीक-ठीक हाथ पकड़ लेते हैं तभी पहले को जाने देते हैं। कल्पनाशील मनुष्य के चित्त ने निरंतर कल्पना करके अपने को उलझा रखा है। इसलिए जो है वह उसे कभी दिखाई नहीं पड़ता।

मैंने सुना है, जब पंडित नेहरू हिंदुस्तान में थे, तो हिंदुस्तान के पागलखाने में नहीं तो कम से कम सात-आठ लोग बंद थे जिनको पंडित नेहरू होने का खयाल था। हिंदुस्तान के जेलों के बाहर, पागलखानों के बाहर तो और भी बहुत थे। कई ऐसे थे जो कहते थे, कई ऐसे थे जो कहते नहीं थे, मन में ही समझते थे। लेकिन थे बहुत।

एक पागलखाने में पंडित नेहरू गए और उस पागलखाने से एक पागल छूटने को था, तो पागलखाने के अधिकारियों ने उसे रोक रखा था कि कल पंडितजी आते हैं, तो उन्हीं के हाथों से विदा करवाएंगे। उस पागल को उन्होंने विदा करवाया। पंडितजी ने कहा कि पागल भी ठीक हो जाते हैं यहां पागलखाने में? तो उस पागल ने कहा कि बिल्कुल ठीक हो जाते हैं। मैं ठीक ही हो गया। तीन साल पहले आया था, अब बिल्कुल ठीक हो गया। फिर वह पागल चलने लगा, फिर उसने पूछा कि महाशय, मैं पूछना भूल गया कि आप हैं कौन? तो उन्होंने कहा, मुझे नहीं जानते? मैं जवाहरलाल नेहरू। तो उस पागल ने कहाः आप घबड़ाए मत, तीन साल रह जाएं, आप भी ठीक हो जाएंगे। यह ही बीमारी मुझे भी थी तीन साल पहले। आप बिल्कुल मत घबड़ाएं। यही बीमारी मुझे भी तीन साल पहले... मैं भी यही समझता था कि मैं जवाहरलाल नेहरू हूं। मगर अब मैं बिल्कुल ठीक हो गया हूं।

हिटलर जब जर्मनी में हुकूमत में था तो सैकड़ों लोग थे जिनको हिटलर होने का खयाल था।

दूसरा महायुद्ध शुरू हुआ तो सारी दुनिया में जिस मुल्क में जो नाम बड़ा था उस उस मुल्क में उस नाम के अनेक लोग एकदम पैदा हो गए। क्या इनको हो क्या गया है? इनको हो कुछ भी नहीं गया है। इन्होंने किसी बड़ी कल्पना में अपना सारा प्राण डुबो दिया। एक कल्पना जो प्रीतिकर है।

अब नेहरू होने की कल्पना प्रीतिकर थी। उस कल्पना में इन्होंने अपने को पूरा डुबा दिया। तो ध्यान रहे जो प्रीतिकर है जरूरी नहीं है कि सत्य हो इसलिए। प्रेय से भी बचने की भी फिकर करना अन्यथा कल्पना से मुक्त होना बहुत मुश्किल है। कल्पना प्रीतिकर होती है। जरूरी नहीं है कि सत्य प्रीतिकर ही हो। सत्य अक्सर अप्रीतिकर होगा क्योंकि हमने जो कल्पनाओं का जाल बनाया है वह उसे तोड़ देगा। सत्य बहुत कठोर है और सत्य बहुत कठिन धार है वह हमें काट डालेगा। क्योंकि हमने जो जाल बनाया है सपनों का वह सब टूट जाएगा सुबह जब नींद खुलेगी तो जागने पर सपने बचेंगे कैसे? सपने टूटेंगे। इसलिए सुबह अगर कोई आपसे कहे भी कि

पांच बजे उठा देना तो उठाना मत। उठ भला आए लेकिन गाली देता हुए उठेगा क्योंकि सब सपने टूट जाते हैं। फिर वही दुनिया शुरू हो जाती है यथार्थ की, तथ्य की कहां सपने, सुंदर सपने वह सब देखता है, वह सब टूट जाता है।

... होने का सपना सुखद है एक आदमी देख सकता है। भगवान होने का सपना भी सुखद है। वह भी एक आदमी देख सकता है। सत्य पा लेने का सपना और भी सुखद है वह भी एक आदमी देख सकता है। इसलिए इसकी फिकर मत करना कि कौन दावा करता है कि मैंने सत्य पा लिया है। ध्यान रखना कि दावा करने वाले ने नहीं ही पाया होगा। क्योंकि दावा भी असत्य की दुनिया का हिस्सा है।

जो कहे कि मैंने पा लिया जानना कि कुछ गड़बड़ हो गई, कहीं चूक हो गई। यह आदमी कहीं भटक गया। नहीं दावा नहीं है वहां क्योंकि जहां सत्य मिलता है वहां मैं ही खो जाता है दावा कौन करेगा?

लेकिन कल्पना के साथ दावे जुड़े हैं। इसलिए सत्य के दावेदार आंख-कान बंद करके अपने दावे में जीते हैं। क्योंकि आंख-कान से कहीं से खबर आ जाए कि दावा गलत है तो वे सब तरफ से द्वार बंद कर देते हैं और भीतर अपना दावा करके जीते रहते हैं।

हजारों-हजारों साल से सत्य की खोज चलती है, सत्य नहीं मिलता। बहुत कम लोगों को कभी उसकी किरण दिखाई पड़ती है या कभी बहुत कम लोगों को उसकी आग से गुजरना पड़ता है। अधिक लोग सपने में खो जाते हैं और अपना सपना बना लेते हैं, और जी लेते हैं। सपने में जीना बहुत आसान भी है लेकिन वह सत्य की यात्रा नहीं है। और जब कोई सपना बहुत गहरे बैठ जाए तो उसे तोड़ना बहुत मुश्किल है। मुश्किल इसलिए है कि उस सपने के साथ हमारे बहुत सुख जुड़ जाते हैं। जिंदगी में तो सुख हमारे हैं नहीं सपनों में ही सुख होते हैं। जिंदगी में तो दुख होते हैं, सपनों में सुख होते हैं। इसलिए धीरे-धीरे हम जिंदगी से एस्केप करते चले जाते हैं और सपनों में प्रवेश करते चले जाते हैं।

ये हमारे संन्यासी, हमारे भागे हुए लोग, ये सब जिंदगी से भागते हैं और किसी एकांत अंधेरे कोने में बैठ कर किसी सपने में प्रवेश कर जाते हैं। वहां सपने देखते रहते हैं। और उस ड्रीमिंग को समझ लेते हैं कि सत्य के करीब हैं। उस सपने में वे चाहें तो कृष्ण को नाच नचा लेते हैं। उस सपने में वे चाहें तो क्राइस्ट को सूली चढ़ा लेते हैं। उस सपने में वे चाहें जो कर लेते हैं। राम धनुषबाण लेकर खड़े हो जाते हैं। उस सपने में सब चलता रहता है।

लेकिन यह सत्य का इससे कोई संबंध नहीं है। वह आदमी ही सत्य जान सकता है जिसके चित्त में कुछ भी नहीं चल रहा है। चित्त जहां ऐसे ठहर गया जैसे झील पर एक भी लहर न हो। चित्त ऐसा हो गया कि दूसरा ही न हो कोई सपना नहीं रह गया। फिल्म टूट गई है और परदा खाली छूट गया है। आप अकेले ही रह गए कांशसनेस भर रह गई, चेतना भर रह गई। चेतना के लिए कोई ऑब्जेक्ट नहीं रह गया। सिर्फ सब्जेक्टिविटी रह गई, सिर्फ होना मात्र रह गया है आपका। ऐसा एक क्षण भी जीवन में उपलब्ध हो जाए तो तीनों घटनाएं घट जाती हैं। ऐसे क्षण में आप इनवर्ट हो जाते हैं आपको होना नहीं पड़ता। आप अचानक पाते हैं कि आप भीतर खड़े हैं। एक एक्सप्लोजन की तरह।

जैसे एक आदमी को नींद से हिला कर उठा दिया गया हो और वह पाए कि वह जाग कर खड़ा है। ऐसे ही इस क्षण में मौन, शून्य शांत क्षण में चेतना के आप भीतर खड़े हो जाते हैं। जहां आप कभी खड़े नहीं हुए। इस शांत, शून्य क्षण में आप उसे जानते हैं जो सदा से है, रहेगा था होगा। जिसके लिए अतीत भविष्य वर्तमान का

कोई फासला नहींहै। जो नॉन-टेंपरल है। जो बियांड टाइम है समय के बाहर है जो है ही। वह आपको पता चलेगा।

और वह आपको ऐसा पता न चलेगा कि दूसरा है। ऐसा पता चलेगा कि वह और मैं एक हैं। उसमें दो भी नहीं हैं वहां जानने वाला और जाना गया नोअर एंड नोन ऐसे भी दो नहीं हैं।

सुनी है मैंने एक कहानी कि एक समुद्र के तट पर एक बड़ा मेला लगा है। दो नमक के पुतले भी उस मेले में चले गए। तट पर बड़ी भीड़ है और बड़ा शास्त्रार्थ छिड़ा हुआ है। कई पंडित कह रहे हैं कि समुद्र की इतनी गहराई है। कई कह रहे हैं नहीं है। कई पंडित कह रहे हैं कि गहराई और-और है। कोई और कह रहा है, कोई और कह रहा है। बड़ा विवाद है, बड़े शास्त्र खुले हैं। बड़ी भीड़ इकट्ठी है। लेकिन कोई भी उस समुद्र में उतर कर गहराई का पता लगाने नहीं जा रहा। वहीं तर्क कर रहे हैं किनारे पर बैठ कर।

सब पंडित किनारों पर बैठ कर तर्क करते रहते हैं कि गहराई कितनी है। गहराई कितनी है ये गहराई में जाने वाला जानता है। यह तट पर बैठने वाले नहीं जानते। लेकिन नमक के पुतले ने कहा कि सांझ होने के करीब आ गई और विवाद का कोई अंत नहीं होता है। तो तुम ठहरो, मैं कूदता हूं सागर में और पता लिए आता हूं। असल में नमक का पुतला कूदने को राजी भी सिर्फ इसीलिए हो गया कि सागर और उसके बीच एक आत्मीयता है वह सागर का ही हिस्सा है। भय कुछ भी नहीं है। सिर्फ वे ही कूद सकते हैं सत्य में जिन्हें यह अभय का खयाल आ जाए कि हम भी तो उसी सत्य से निकले हैं और उसी में जाएंगे तो भय क्या है? छलांग लगाई जा सकती है। जिससे हम आए हैं और जिसमें हम जाएंगे जिसमें हम हैं उससे भय क्या है उसमें छलांग लगाई जा सकती है। वह नमक का पुतला कूद गया।

भीड़ किनारे पर इकट्ठी होकर राह देखती रही, वह नमक का पुतला चला नीचे नीचे गहराई में तो वह उतरने लगा। गहराई में तो होने लगा, गहराई में तो जाने लगा। लेकिन एक बड़ी मुश्किल कि पिघलने भी लगा। बड़ा घबड़ाया कि खबर कैसे दूंगा? यह तो बड़ी मुश्किल हो गई आखिर पहुंच गया नीचे तक गहराई में लेकिन पहुंचते-पहुंचते पिघल कर सागर के साथ एक हो गया। पूरे सागर के साथ एक हो गया। पुतला तो छोटा था लेकिन जब सागर के साथ एक हुआ तो पूरे सागर के साथ एक हो गया। सागर की लहर-लहर से चिल्लाने लगा कि आओ, जानना है तो तुम्हें भी यहां आना पड़ेगा। और आओ, मैं न बता सकूंगा क्या मैंने जाना। क्योंकि जानने में मैं खो गया।

लेकिन सागर की लहरों की कौन सुनता है आवाज? अपनी आवाज बंद हो तो सागर की कोई आवाज सुने। और हमारे भीतर तो इतनी आवाज है कि हिसाब लगाना मुश्किल है।

मैंने सुना है कि नियाग्रा की आवाज दस-बीस मील तक सुनाई पड़ती है। दस-बीस मील तक नियाग्रा की आवाज सुनाई पड़ती है। पांच-सात महिलाएं नियाग्रा देखने गई थीं, वे किनारे खड़ी हैं, तो गाइड ने उनसे कहा कि देवियो, अब मैं कुछ नियाग्रा के संबंध में तुम्हें बताना चाहता हूं। इसकी आवाज बीस मील तक सुनाई पड़ती है, लेकिन तुम अगर चुप हो जाओ तभी सुनाई पड़ सकती है। बीस मील तक सुनाई नहीं पड़ती हो, बीस हजार मील तक सुनाई पड़ती हो, तो भी क्या फर्क पड़ता है। लेकिन जिसको सुनना है वह तो चुप होना चाहिए।

वे लहरें चिल्लाती रहीं सागर की लेकिन कुछ पता नहीं चला बाहर तट पर खड़े लोगों को। असल में जो तट पर खड़े हैं वे गहराई की भाषा नहीं समझ पाते। गहराई की भाषा कुछ और है और तट की भाषा कुछ और है।

दूसरे पुतले ने कहा कि मैं अपने मित्र को खोज लाऊं रात ज्यादा होने लगी। वह दूसरा पुतला भी कूद गया। लेकिन न पहला लौटा, न दूसरा लौटा। दूसरा जैसे-जैसे मित्र को खोजने लगा, वैसे-वैसे खोने लगा। खोज लिया उसने मित्र को लेकिन तभी खोज पाया जब खोकर सागर के साथ एक हो गया। तब वह भी चिल्लाता रहा तट के लोगों से कि लौट जाओ, मित्र को मैंने पा लिया। लेकिन सागर की आवाज कौन सुने? अपनी ही आवाज बहुत है।

हम सब अपने सपनों अपने सिद्धांतों अपनी आवाजों अपने विचारों से भरे हुए लोग हमें अपने से सावधान होना पड़ेगा। अन्यथा हम सत्य को न जान पाएं न देख पाएं। यह मेरा जो मेरा होना है इस मेरे होने को किसी गहरे अर्थों में चुप होना पड़े।

एक ही बात, अंत में सत्य की खोज का अर्थ हैः शांति के आयाम में प्रवेश। इन दि ट्रूथ ऑफ साइलेंस। एक शब्द का आयाम है जिसमें हम जीते हैं। हम प्रेम करते हैं तो शब्दों का उपयोग करना पड़ता है। हम क्रोध करते हैं तो शब्दों का उपयोग करना पड़ता है। मित्र से मिलते हैं तो शब्दों का उपयोग करना पड़ता है। शत्रु से मिलते हैं तो शब्दों का उपयोग करना पड़ता है। जागते हैं तो शब्दों का उपयोग करते हैं, सोते हैं तो सपने में शब्दों का उपयोग करते हैं।

हम एक डाइमेंशन में जीते हैं जो शब्द का डायमेंशन है। सत्य उस डाइमेंशन पर कहीं भी न मिलेगा। उस डाइमेंशन पर शास्त्र मिलेंगे, जो शब्दों का संग्रह है। सिद्धांत मिलेंगे जो शब्दो के कंस्ट्रक्शन हैं। गुरु मिलेंगे जो शब्दों के दुकानदार हैं। दावेदार मिलेंगे जो शब्दों के कुशल प्रयोगकर्ता हैं। लेकिन उस डाइमेंशन में शब्द के डाइमेंशन में सार्त्र ने अपनी आत्मकथा लिखी तो उसको नाम दिया वर्डस, शब्द। हम भी अपनी आत्मकथा लिखें तो शब्दों से ज्यादा क्या है! लेकिन शब्दों की आत्मकथा में सत्य कहीं भी नहीं होगा। एक और भी आत्मकथा है और वह है शांति की, शून्य, साइलेंस की निशब्द की जहां सब शब्द हो गए।

अगर सत्य की खोज पर निकलना है तो इस शून्य की और शांति के डाइमेंशन को खोजना। कहीं भी सागर के तट के किनारे पड़े हो थोड़ी देर शब्द से बचना। लेकिन हम इतने भयभीत हैं कि कहीं शून्य न उतर आए, कहीं सत्य पास न आ जाए। हम जरूरत न हो तो भी शब्द चलाए चले जाते हैं। अगर दो आदमियों से कहा जाए कि घंटे भर चुपचाप बैठे रहो तो कितनी बेचैनी होती है वे कितनी करवटें बदलते हैं कितनी मुश्किल पड़ जाती है। सांस घुटने लगती है गर्दन दुखने लगती। ऐसा लगता है कि मरे। क्योंकि एक ही भोजन था उनका शब्द वही उनकी जिंदगी थी बड़ी मुश्किल में पड़ गए हैं।

दो आदमियों को अगर घंटे भर शांत बैठने को कहा जाए पास-पास बड़े घबड़ा जाते हैं। पागल हो जाएंगे आप अगर आपको शांति में रोक दिया जाए। शब्द ही हमारा सब कुछ है। लेकिन सत्य की खोज में वह कुछ भी नहीं है। बाधा जरूर है। लेकिन कभी-कभी अगर मौन उतरता है जैसे किसी को हम प्रेम करते हैं तो थोड़ा सा मौन उतरना है। लेकिन जल्दी से हम शब्दों से भर देते हैं। हम कहते हैं कि मैं तुम्हें प्रेम करता हूं। गई वह बात गई वह क्वालिटी गई वह सुगंध जो मौन से उठी होती पहचानी जाती लेकिन हमने जल्दी से हम डरे। क्योंकि खतरनाक है वह आयाम जहां से मौन आता है वहां खतरा है वहां झूठ जाने का मिट जाने का, समाप्त हो जाने... फौरन कहा कि मैं तुम्हें प्रेम करता हूं और तब ये शब्द ऐसे नहीं मालूम पड़ते कि हमने कहे, ऐसे लगते हैं कि किसी फिल्म के डायलाग में सुने हों।

पराए हो गए। शब्द सदा बासा है शब्द सदा झूठा है। बहुत मुंह में घूमा है बहुत लोगों ने उसका प्रयोग किया है। कितने लोगों ने नहीं कहा है किसी से कि मैं तुम्हें प्रेम करता हूं और प्रेम कभी बासा हो सकता है।

लेकिन प्रेम शब्द तो बहुत बासा है। कितने होंठों का थूक उस पर लगा, कितने कीटाणु उसको छुए और गए। कितनी अनंत-अनंत सदियों में कितने-कितने लोगों ने कहा, मैं तुम्हें प्रेम करता हूं।

नहीं, प्रेम जो कि सदा ताजा है, सदा निर्दोष है। जिसे कभी किसी ने नहीं छुआ। प्रेम जो सदा वर्जिन है, कुवांरा है वह शब्द से नहीं प्रकट होगा। लेकिन प्रेम भी किसी से हो तो फौरन शब्द बीच में खड़ा हो जाता है। अगर दो प्रेमी भी बैठेंगे तो कहेंगे कि गीत गाओ, बोलो कुछ, चुप क्यों हो। अगर प्रेमी चुप बैठेगा तो प्रेयसी समझेगी कुछ गड़बड़ है, कुछ प्रेम खो गया है। नहीं चुप्पी के हम दुश्मन हैं क्योंकि शब्दों के हम यात्री हैं।

सत्य की खोज में ये शब्द की हमारी जो इतना आग्रहपूर्ण पकड़ है यह छोड़ देनी पड़े और निशब्द में रुक जाना पड़े। मौन में ठहर जाना पड़े और इसके लिए आयास करेंगे, प्रयास करेंगे, आयोजन करेंगे तो उतना आसान न होगा। अनायास कभी किसी सागर के तट लेटे हैं हो जाएं चुप। अनायास एफर्टलेसली कभी आकाश को देखते हैं हो जाएं चुप। कभी किसी वृक्ष के तने से टिके बैठे हैं हो जाएं चुप। कभी अपनी पत्नी की आंख में झांकते हैं हो जाएं चुप। कभी अपने बेटे को गले लगाया है हो जाएं चुप। कभी अनायास, चौबीस घंटे में किसी क्षण हो जाएं चुप। शब्द को छोड़ें और निशब्द में ठहर जाएं। सत्य दूर नहीं है बहुत पास है। लेकिन सिर्फ उनको जो निशब्द में ठहरने की कला सीख लेते हैं।

और जो जानेंगे उस मौन में उसे न तो आप कह सकेंगे न मैं कह सकता हूं न कोई और कह सका है। जो जानेंगे उस मौन में वह गूंगे का गुड़ हो जाता है। जान तो लेते हैं स्वभावतः क्योंकि जिसे शब्द को छोड़ कर जाना है उसे शब्द में कैसे कहा जा सकेगा। जिसे शब्द को मारकर जाना उसे शब्द में कैसे कहा जा सकेगा। जिसे शब्द से विपरीत जाकर जाना उसे शब्द में कैसे लाया जा सकेगा। इसलिए आज तक कोई नहीं कह सका कि सत्य क्या है! सत्य कैसे मिल सकता है इसकी तो चर्चा हुई है बहुत लेकिन सत्य क्या है? वहां सब चुप हो गए हैं। जीसस सूली पर लटके हैं और पायलट ने जिसने उन्हें सूली की आज्ञा दी थी आखिरी क्षण में उनसे पूछा है, वॉट इ.ज ट्रूथ? खूब मौका चुना उसने भी पूछने का। सूली पर लटकाया जा रहा वह जीसस, फंदे कस गए हैं, हाथ ठोंक दिए गए हैं, क्रास पर लटका है और पायलट उससे पूछता है, वॉट इ.ज ट्रूथ? लेकिन जीसस चुप रह जाते हैं।

ईसाइयों के पास जवाब नहीं है कि जीसस चुप क्यों रह जाते हैं। क्योंकि अगर वे समझ जाएं कि जीसस चुप रह गए, तो फिर ईसाई मिशनरी इतना बोल कर सारे जगत को ईसाई कैसे उपाय करते। वे कैसे कहें कि ईसाइयत में सच है। क्योंकि जीसस तो चुप रह गए जब पूछा गया कि सत्य क्या है!

लेकिन बिल्कुल चुप नहीं रह गए। चुप्पी से भी उन्होंने कुछ कहा। काश, पायलट समझ लेता। लेकिन वह नहीं समझ पाया। वह भाषा दूसरी थी। जब जीसस चुप रह गए तो उन्होंने कहा, चुप रह जाओ और जान ले। लेकिन इसे कहना उचित न था। क्योंकि चुप रह जाओ और जान ले, इसे भी शब्द से कहना पड़े! तो वे चुप ही रह गए। लेकिन पायलट नहीं समझा। फांसी हो गई। पायलट शायद यही समझा होगा कि जीसस को सत्य का पता नहीं है। बुद्ध से जब भी कोई आकर पूछता कि सत्य क्या है? तो वे कहते इसको भर छोड़ दो और सब पूछो। वह कहता लेकिन मैं सत्य को ही जानने आया हूं तो बुद्ध कहते फिर सभी पूछना छोड़ दो और चुप हो जाओ।

वह कहता लेकिन मुझे पता कैसे चलेगा? बुद्ध कहते, कुछ दिन चुप रह जाओ फिर मैं तुमसे पूछूंगा कि पता चला कि नहीं।

एक आदमी आया मोग्गलान उसने कहा, मैं तो खोजने निकला हूं सत्य, कहां है? बुद्ध ने कहाः रुको कुछ दिन, चुप रहो कुछ दिन, पूछो मत कुछ दिन फिर मैं तुमसे पूछूंगा साल भर बीतने पर। उसने कहा लेकिन मुझे अभी पता करना है। बुद्ध ने कहा, अभी अगर पता करना है तो अभी चुप हो जाओ। साल भर इसीलिए कहता हूं कि तुम्हें साल भर लग जाएगा। रफ्तार में हो, मूमेंटम में हो रुकते-रुकते साल लग जाएगा। अन्यथा अभी हो सकता है सत्य तो यहीं है चारों तरफ है ये रहा! ये रहा!

कहां है? कुछ दिखाई तो पड़ता नहीं।

बुद्ध ने कहाः तुम दौड़ में हो। रुको तो दिखाई पड़ जाए। साल भर रुको। एक भिक्षु किनारे बैठा था हंसने लगा जोर से।

मोग्गलान ने उससे कहाः क्यों हंसते हो। उसने कहा कि धोखे में मत पड़ना बुद्ध के। मैं भी आया था कुछ समय पहले पूछता हुआ कि सत्य कहां है, क्या है। इन बुद्ध ने कहा कि चुप हो जाओ साल भर, फिर पूछ लेना। अगर पूछना हो तो अभी पूछ ले। हम चुप रह गए साल भर। अब पूछने को भी कुछ नहीं बचा है। अब उलटा ये बुद्ध मुझको सताते हैं। कहते हैं, बोल, अब पूछ। क्या पूछूं? पूछने को भी नहीं बचा। मिल गया अब, पूछूं क्या? अगर पूछना हो, तो अभी पूछ ले; नहीं तो साल भर बाद धोखे में पड़ जाएगा। बुद्ध ने कहाः मैं वायदे पर पक्का रहूंगा, तू पक्का रहना। पूछेगा साल भर बाद, हम जवाब देंगे। साल बीता, भीड़ है इकट्ठी एक दिन सुबह और बुद्ध ने कहाः मोग्गलान कहां है? वह भाग गया है। मोग्गलान कहां है? उसे खोजो, क्योंकि साल पूरा हो गया है। और मुझे पूछना है कि उसे कुछ पूछना है? मोग्गलान को पकड़ कर लोग लाए वह एक वृक्ष के पीछे छिपा था। बुद्ध ने कहाः पूछ लो साल पूरा हो गया, वचन की याद भूल गए? मैंने कहा था साल भर बाद चुप रह कर पूछना, तो मैं जवाब दूंगा। मोग्गलान ने कहाः अब क्या पूछना? आप हैं जो आपको दिखाई पड़ता है वही मैं भी हूं, वही मुझे भी दिखाई पड़ता है। अब पूछने वाला गया। अब तो जानने वाला आ गया है।

ध्यान रहे, जब तक पूछने वाला है तब तक जानने वाला नहीं आता। इस दरवाजे से पूछने वाला गया उस दरवाजे से जानने वाला आ जाता है। पूछना छोड़ें, रुकें, ठहरें, अनायास किसी क्षण में चुप रह जाएं, किसी दिन उसकी झलक मिल जाएगी। किसी भी दिन, कभी भी मिल सकती है। कोई प्रिडिक्शन नहीं हो सकता कब मिल जाएगी। और कोई पूर्व भविष्यवाणी नहीं हो सकती है कि ऐसे मिल जाएगी। सत्य के रास्ते बहुत अपरिचित, अनजान हैं सत्य कहीं से भी किसी भी क्षण कैसे उतर आएगा नहीं कहा जा सकता।

एक ही बात ध्यान रखें कि आपका दरवाजा बंद न हो जब सत्य द्वार खटखटाए तो आपका दरवाजा खुला हो, आप खाली हों शून्य को देखने को राजी हों। खुले हों, मुक्त हों आ सके तो आप कह सकें आओ, द्वार खुला है। आपका द्वार भर खुला रहना चाहिए। साइलेंस उस द्वार के खुलने का नाम है। अगर ऐसा ही कहना हो तो मैं कहूंगा, मौन ही सत्य है। शून्य ही सत्य है।

ये थोड़ी सी बातें मैंने कहीं, इन बातों को सत्य मत समझ लेना। बातें सत्य नहीं होतीं। इस बोलने वाले को सत्य मत समझ लेना। बोलने वाले से सत्य का क्या संबंध है? लेकिन इस बोलने वाले के भीतर एक न बोलने वाला भी है और आप सुनने वाले के भीतर एक न सुनने वाला भी है, वहां जाने की बात है।

इतनी शांति और प्रेम से मेरी बातें सुनीं, उससे बहुत अनुगृहीत हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे प्रभु को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

आपने बड़ी सुंदर वाणी आज आचार्यजी से सुनी, अगर आप कोई सवाल पूछना चाहते हैं, तो आप पूछ सकते हैं।

मित्र पूछ रहे हैं कि कहा जाता है कि अरविंद को शून्य का, वैक्यूम का अनुभव हुआ। क्या वह सत्य की खोज थी?

अरविंद के संबंध में पूछना ही फिजूल है, क्योंकि जब भी हम दूसरे के संबंध में पूछते हैं कि उसे जो शून्य हुआ वह क्या था? तब हम अपने को ज्यादा से ज्यादा शब्दों से ही भर सकेंगे। अरविंद भी एक शब्द बनेगा और अरविंद का शून्य भी एक शब्द बनेगा। और उन्हें मिला या नहीं मिला ये भी शब्द बनेंगे। न दूसरे के संबंध में हम शब्द से कभी मुक्त ही नही हो सकते। दूसरे के संबंध में शब्द अनिवार्य है। सिर्फ अपने संबंध में हम शब्द से मुक्त हो सकते हैं। तो फिकर इसकी न करें कि अरविंद को क्या हुआ क्या नहीं हुआ। फिकर इसकी करें कि आपको क्या हो सकता है!

और अगर मैं कहूं कि अरविंद को हुआ, तो आप किसी दूसरे से पूछेंगे कि मैंने ऐसा अरविंद के संबंध में कहा, वह सही है या गलत? ... पूछेंगे। इसका अंत कहां होगा? यह इनफिनिट ट्रिगरेस है। जो हम पूछते चले जाते हैं।

मैंने सुना है, एक आदमी एक गांव में जाने को है और उसने पूछा है कि अ नाम का आदमी कहां रहता है? तो किसी ने कहा कि ब नाम के आदमी के पड़ोस में रहता है। उसने कहाः मुश्किल में मत डालो मुझे। यह ब नाम का आदमी कहां रहता है? तो वह स नाम के आदमी के पड़ोस में रहता है। उसने कहाः लेकिन मुझे स आदमी का कोई पता नहीं है!

अरविंद के संबंध में पूछेंगे कुछ मुझसे, अरविंद भी दूसरे मैं भी दूसरा। दोनों आपके लिए बेकार--अरविंद भी, मैं भी। दूसरे होने की वजह से बेकार हैं। असली सवाल सत्य की खोज का सदा अपने से। मैं वैक्यूम में हो पाता हूं? नहीं यह सवाल महत्वपूर्ण है। और इतना जरूर कहूंगा कि जिस दिन आप शून्य में हो पाएंगे। उस दिन आप ही देख पाएंगे कि कौन-कौन शून्य में हो गया है। तब आप कभी न पूछेंगे कि कौन हुआ, कौन नहीं हुआ। लेकिन जब तक आप नहीं हुए हैं कोई दूसरा दावा करे कि हो गया। कोई दूसरे के संबंध में कहे कि नहीं हो गया। क्या होगा? बातचीत हो जाएगी इससे कोई अर्थ नहीं है। बचें, यही तो मैंने कहा, गुरुओं से बचें। अरविंद को अगर मैं कहूं कि हां, हो गया है तो आप कहेंगे कि चलो अरविंद को गुरु बना लिया। अगर कहूं कि नहीं हुआ तो कहेंगे चलो मुझको ही बना लें। ये हमारी गुरु की तलाश है। हम पता लगाते हैं बुद्ध को ज्ञान हुआ? अगर हुआ हो तो चलो इनके पैर पकड़ लें। महावीर तीर्थंकर असली थे कि नकली चलो चलो इनके पैर पकड़ लें अगर पक्का हो जाए। लेकिन कैसे पक्का होगा। कौन करेगा पक्का? और जरूरत क्या है पक्का करने की। क्योंकि मैं कह ही यह रहा हूं कि दूसरे से बचना। नहीं तो अरविंद ऑथेरिटी बंद जाएंगे। बैठ कर उनकी किताबें आप पढ़ेंगे और क्या करेंगे। अरविंद को मानने वाला उनकी बैठ कर किताबें पढ़ रहा है। बैठा है, माताजी का आशीर्वाद मिल जाएगा, तो सब हो जाएगा। यह सब अंधों की दुनिया पैदा होती है।

गुरु जो हैं वे अंधों की दुनिया के राजा हैं। वह अंधों की दुनिया उनसे पैदा होती है। नहीं, कोई की फिकर न करें क्योंकि फिकर की जरूरत नहीं है। कोई ऑथेरिटी बनानी है, कोई... बनाना है। शून्य में जाना है आप चले जाएं। अब यह बड़े मजे की बात है कि जहां हमें जाना होता है वहां हम कभी नहीं पूछते यह सवाल। जैसे मुझसे

कोई कभी नहीं पूछता आकर कि मजनूं का प्रेम सच था? वह अपने ही प्रेम में चला जाता है। कोई पूछता ही नहीं। फरिहाद का प्रेम सच था? कोई नहीं पूछता। वह खुद ही चला जाता है।

प्रेम में हम खुद चले जाते हैं और हम कभी नहीं पूछते हैं कि किसका सच किसका झूठ। सत्य में हम स्वयं नहीं जाते इसलिए हम सदा पूछते रहते हैं किसका सच, किसका झूठ, किसको मिला, किसको नहीं मिला। एक ही बात ध्यान रखें कि जब तक आपको नहीं मिला तब तक किसी को नहीं मिला। और जिस दिन आपको मिल गया उस दिन सबको मिल गया कोई मतलब नहीं, कोई प्रयोजन नहीं। इररिलेवेंट हैं अरविंद या मैं या कोई भी। आपसे कुछ लेना-देना नहीं। ये फिजूल के लोग हैं इनसे बचना चाहिए। जहां गुरु दिखाई पड़े वहां से एकदम भाग खड़े होना चाहिए वहां से, उस तरफ जाना नहीं चाहिए भूल कर। क्योंकि वह अनिवार्य रूप से दूसरे में आपको उलझा देता है। और दूसरे से बचना सत्य की खोज का अनिवार्य हिस्सा है।

आप पूछते हैं शून्य में जाने की विधि क्या है?

शून्य में जाने की विधि नहीं हो सकती है। और विधि से जाइएगा तो कम से कम विधि तो साथ रह ही जाएगी। शून्य न हो पाएगा। क्योंकि फिर विधि को कैसे छोड़िएगा! फिर विधि को छोड़ने की विधि पूछिएगा। अब वे विधि पकड़ गई अब इसको कैसे छोड़ें? ऐसा हो जाता है कोई कहता है राम-राम, राम-राम, राम-राम जपो। इससे शून्य में चले जाओगे। राम-राम जप पकड़ जाता है। अब वह कहता है, अब यह राम-राम को कैसे छोड़ें, अब इसकी कोई विधि चाहिए। असल में एक विधि को छुड़ाने के लिए फिर दूसरी फिर दूसरी को तीसरी। नहीं, इस चक्कर में पड़िए मत।

शून्य में जाने को विधि मत बनाइए। फिर आप कहेंगे लेकिन हम कैसे जाएं? शून्य में जाने को विधि न बनाएंगे तो हम तो बिना विधि के कहीं जा ही नहीं सकते। वह तो अच्छा हुआ कि हमको श्वांस लेने की, लेते रहते हैं बचपन से इसलिए हम विधि नहीं पूछते।

मैंने सुना है, एक सेंटीपेड था, सौ पैर वाला एक जानवर था। वह जा रहा था एक रास्ते से। एक मकौडे ने देखा, वह बहुत हैरान हुआ कि सौ पैर! किस विधि से उठाता होगा पैर? पहले कौन सा उठाता होगा, दूसरा पीछे कब उठाता होगा? मर गए! वह बहुत घबड़ाया, उसने कहा, कितना बड़ा गणितज्ञ होगा यह सेंटीपेड? सौ पैरों का हिसाब रखना कि कब कौन सा उठाना और चलना, फिर हिसाब भी रखना। चार पैर में दिक्कत हुई जाती है। उसने कहा, सुन भाई, रुक! जरा इतना तो बता जा कि किस विधि से चलता है? सौ पैर कैसे उठाता है? पहले कौन सा, दूसरा कब, तीसरा कब। गड़बड़ा नहीं जाता? उस सेंटीपेड ने कहाः मैंने कभी खयाल नहीं किया, मैं खयाल करता हूं। उसने खयाल किया वह गिर पड़ा। गड़बड़ा गया, कि सौ पैर, कौन सा पैर आगे, पीछे। उसने कहा कि... में पड़े। अब किसी सेंटीपेड से ऐसा सवाल मत पूछना। जान कर मुसीबत आ गई। अभी तक चलते चले जाते थे बिना विधि के।

शून्य विधि नहीं है, सिर्फ शब्द की व्यर्थता को समझ लें। सिर्फ शब्द की व्यर्थता को समझ लें। विचार की व्यर्थता को समझ लें। उस व्यर्थता का परिणाम सहज रूप से शून्य बनता है।

यहां हम बैठे हैं मकान में आग लग गई और मैं कहता हूं, मकान में आग लग गई है और लपटें आपको दिखाई पड़ती हैं। फिर कोई यहां नहीं पूछेगा कि बाहर निकलने की विधि क्या है? आप पाएंगे कि बिना विधि के लोग निकले जा रहे हैं। सब शिष्टाचार छोड़ कर कि स्त्री को धक्का लग रहा है कि नहीं लग रहा है। कि अपनी

पत्नी साथ है कि नहीं धर्मपत्नी... सब छोड़ कर बिल्कुल बिना विधि के लोग बाहर निकले जा रहे हैं। जहां दरवाजे हैं वहां से और जहां दरवाजे नहीं हैं वहां से। सब तरफ से निकले जा रहे हैं। क्या हो गया है? लपट का दिखाई पड़ जाना निकलने की विधि बन जाती है। शब्द की व्यर्थता दिखाई पड़े शास्त्र की व्यर्थता दिखाई पड़े बाहर की व्यर्थता दिखाई पड़े ये है सवाल असल में। अगर यह... दिखाई पड़ जाए कि यह शब्द बातचीत सिद्धांत शास्त्र बेकार हैं, व्यर्थ हैं। अगर यह दिखाई पड़ जाए ये चौबीस घंटे शब्दों में ही विचारों में ही जीना व्यर्थ है। ये व्यर्थता जितनी तीव्रता से दिखाई पड़ जाए आप अचानक पाएंगे कि आप बाहर हो गए। और ये बाहर होना बिल्कुल बिना विधि के, बिना मेथड के हो जाएगा। और अगर विधि से बाहर हुए तो आप एक बहुत चक्कर में पड़ेंगे क्योंकि विधि कभी भी अंत नहीं आता उसका फिर दूसरी विधि फिर तीसरी विधि और चलता रहता है।

नहीं, विधि से नहीं होगा। शून्य में जाना है तो विधि से नहीं होगा। इसलिए निगेटिव मेथड कहना चाहिए जो मैं कह रहा हूं उसको।

पत्नी के पास बैठे होंगे समुद्र के तट पर, या मित्र के साथ, या प्रेयसी के साथ, या अकेले। अगर वहां तट पर बैठ कर आपको ऐसा लगता है कि क्या अर्थ है यहां सोचने का? सागर है, आकाश है। कोई नहीं सोच रहा, न सागर सोचता, न आकाश सोचता, न वृक्ष सोचते, न हवाएं सोचतीं, कोई नहीं सोचता। मैं भी बिना सोचे पड़ा रहूं। बहुत तो सोचता हूं, चौबीस घंटे सोचने से सिवाए सिर थकाने के कहीं पहुंचता नहीं हूं।

तो आप ठीक कह रहे हैं कि ऊपर से तो मौन हो जाता है लेकिन भीतर चलता रहता है। चलने दें। मैंने कहा, मूवमेंटम है। वह ऐसे ही है जैसे कोई साइकिल चलाता है एक आदमी। अब उससे हम कहते हैं रुक जाओ। तो वह पैडल रोक देता है। वह कहता है, पैडल तो रुक गए लेकिन चके चल रहे हैं। अब चके चलेंगे न। दो मील से आप चलते आ रहे हैं तो पैडल रोक देने से भी थोड़ी देर चके चलेंगे। लेकिन आप ये मानकर कि जब बिना पैडल चलाए चके चल रहे हैं तो पैडल चलाए ही जाओ। फिर पैडल चलाना शुरू कर देते हैं।

नहीं तट पर पड़े हैं, घर पर पड़े हैं, बिस्तर में रात सो गए हैं अंधेरा है सुखद है। रेशम की तरफ चारों तरफ से घेरे है। चुप हो जाएं। भीतर विचार चलेंगे क्योंकि दिन भर चले हैं तो उनका मूवमेंटम है। जिंदगी भर चले हैं जो जानते हैं वे कहेंगे जन्मों से चले हैं जन्मों-जन्मों से। उनका मूवमेंटम भारी है। उनको चलने दें लेकिन आप पैडल न मारें। भीतर जो विचार हैं उनको आप पैडल भी मारते हैं एक विचार आता है और आप तत्काल दूसरे पर उसको ले जाते हैं, तीसरे पर ले जाते हैं, चौथे पर ले जाते हैं। आप कहें कि जितना अपने से चलना हो चलो हम पैडल नहीं मारते हैं। हम जरा चुपचाप हो जाएं। आप पड़े रहें। इसलिए मैंने कहा कुछ कह नहीं सकता, कब हो जाएगा। किसी दिन आप अचानक पाएंगे कि कोई क्षण है जब कोई विचार नहीं है। खाली रह गया आकाश। तो उस खाली आकाश में जब आपको आनंद की प्रतीति होगी तो वह आनंद की प्रतीति विधि बन जाएगी फिर आपके लिए। फिर आपका मन खुद ही उस आनंद की तरफ बहने लगेगा। मन का नियम ये है कि वह आनंद की तरफ बहता है।

अभी मैं यहां बोल रहा हूं और कोई पास के बगीचे में सितार बजाएं, तो आप किस विधि से आपका मन उसके सितार को सुनने पहुंच जाता है। कभी खयाल किया आपने? इधर मैं बोल रहा हूं, वह खत्म हो गया मेरा बोलना। मैं बोलता रहूंगा, आपका सुनाई पड़ना यहां बंद हो गया। आप अचानक गए। आप यहां नहीं हैं। सितार बजने लगा है बाहर, वह सितार ने आपके मन को पकड़ लिया। आपका मन गया बाहर।

मन आनंद की तरफ बाहर चला जाता है। अपने आप बिना किसी विधि के जैसे नदियां सागर की तरफ बहती हैं बिना किसी नक्शे को हाथ में लिए। ऐसे मन आनंद की तरफ बहता है। कभी जब अनायास वह क्षण आप में घटित हो जाएगा चलते-चलते, रुकते-रुकते किसी दिन आपको आनंद की प्रतीति होगी। सत्य की थोड़ी सी झलक भी मिल जाएगी तो फिर मन लौट-लौट कर वहां जाने लगेगा। अपने-आप जब भी आप खाली होंगे चुप हो जाएगा। ये विधि नहीं है लेकिन हमारा मन चूंकि बिना विधि के कुछ भी नहीं करता। हम पूछते हैं विधि इसलिए फिर हमारा शोषण करने वाले लोग पैदा हो जाते हैं वे कहते हैं, आओ हम देते हैं विधि। लो साढ़े तीन रुपये में मंत्र ले लो, कान फूंके देते हैं अब और किसी से मत लेना ये पक्की हमने विधि दे दी। इससे तुम चलते रहो।

सारी दुनिया के आदमी को हर तरह के शोषण हैं। और आध्यात्मिक शोषण सबसे बड़ा शोषण है। और गुरु कर रहे हैं उसको सब तरफ। अब इस वक्त पश्चिम में बहुत अशांति है, तो वे विधि चाहते हैं, इसलिए पूरब के जितने उपद्रवी हैं वे सब पश्चिम जा रहे हैं। वे वहां लोगों को विधि दे रहे हैं। उनको इकट्ठा करके बता रहे हैं कि हम तुमको मंत्र दिए देते हैं ये कंठी लो हाथ में ये माला जपते रहो। हमारा शोषण हो जाता है क्योंकि हमें ख्याल नहीं है कि मामला विधि का नहीं है।

अंतिम बात आपसे कह दूं, फिर हम उठें।

विधि से कभी भी विधि से बड़ी चीज नहीं मिल सकती। और परमात्मा इतना बड़ा है कि हमारी कौन सी विधि से मिल सकता है। आप दो पैसे से खरीदने जाएंगे तो दो पैसे की चीज मिल सकती है। परमात्मा को आप खरीद नहीं सकते हैं, क्योंकि कितने पैसे से आप खरीदेंगे? आपको पहाड़ पर चढ़ना है, तो सीढ़ियां बनाई जा सकती हैं, लेकिन जितनी बड़ी सीढ़ियां होंगी उतने बड़े पहाड़ तक पहुंचा देंगी। अब परमात्मा के अंतहीन इस शिखर पर चढ़ने के लिए कैसे सीढ़ियां बनाइएगा?

यहां तो मेथडलेसली यहां तो बिना विधि के जो कूदने के लिए तैयार है वे ही इस अनंत में और अनादि में प्रवेश कर पाते हैं। अन्यथा लोग बैठे हुए विधि का हिसाब करते रह जाते हैं।

एक छोटी सी कहानी से मैं आपको कहूं।

सुना है मैंने, एक सम्राट का वजीर मर गया। बड़ा था वजीर। उस राज्य का नियम था कि जब भी कोई बड़ा वजीर मर जाए तो सारे राज्य में चुनाव किया जाए, परीक्षाएं की जाएं और श्रेष्ठतम बुद्धिमान आदमी खोजा जाए।

परीक्षाएं की गईं। तीन आदमी खोजे गए। वे राजधानी लाए गए अंतिम परीक्षा के लिए। अंतिम परीक्षा तीनों रात भर परेशान होने चाहिए। लेकिन एक चादर ओढ़ कर एकदम सो गया। दो ने कहा कि यह आदमी क्या ड्राप कर गया? क्या हुआ? इसको परीक्षा नहीं देनी, तैयारी नहीं करनी और। कल परीक्षा क्या होगी, यह अनजान थी परीक्षा, कुछ खबर नहीं थी। पर गांव भर में खबर थी, हर आदमी कह रहा था कि परीक्षा तय है। तो गांव में गए तो पता चल गया। पूरे गांव में चर्चा थी कि परीक्षा यह है। राजा ने एक कमरा बनाया है और उसमें एक अदभुत ताला लगाया है और ताला एक मैथेमेटिकल प.जल है। वह पजल उस पर खुदी हुई है। जो उसको हल कर लेगा वह ताला खोल लेगा। इन तीनों को कल बंद किया जाएगा और जो ताला खोल कर बाहर आ जाएगा वह जीत जाएगा, वह वजीर हो जाएगा। वे दोनों भागे, न तो वे चोर थे कि ताला खोलना जानते हों न गणितज्ञ थे कि गणित जानते हों न पहेलियां हल करने के शौकीन थे। बड़ी मुश्किल में पड़ गए।

गांव भर में जो गणित जानता था उसके पास गए ताले खोलता था उसके पास गए इंजीनियर के पास गए कई किताबें लाए। ... जिंदगी भर का मामला है अब रात सोओ मत। रात भर जागे हैं सब पढ़ा-लिखा सांझ से भी हालत सुबह तक बुरी हो गई। जैसा कि परीक्षार्थियों की हो जाती है। सांझ को दो और दो चार बता सकते थे। सुबह आप उनसे पूछो, दो और दो चार, तो उन्हें कुछ सूझता ही नहीं था कि आप पूछ क्या रहे हैं? जवाब तो बहुत दूर है, पहले प्रश्न ही समझ में आना मुश्किल हो गया सुबह।

लेकिन वह एक आदमी रात भर सोया रहा, वे दोनों खुश हुए कि अच्छा हुआ कम से कम एक खत्म हुआ। अब दो ही प्रतियोगी बचे। लेकिन जब वे सुबह थके-मांदे थे तब वह भी उठा गीत गाता हुआ, स्नान किया। उन्होंने तो स्नान भी नहीं किया। उन्होंने कहा, अब आज तो सब छोड़ो। वे दोनों चले, वह भी पीछे गीत गाता चला। उन दोनों ने सोचा, यह पागल किसलिए आ रहा है, कुछ तैयारी तो की नहीं। गए तीनों।

सच थी अफवाह। दरवाजे के भीतर सम्राट ने किया और कहा यह है पहेली का ताला इसे खोल कर जो बाहर आ जाए। इसकी कोई चाबी नहीं है। यह पहेली जो है बस यही चाबी है। जो बाहर आ जाए वह जीत गया। अब तुम भीतर जाओ मैं बाहर जा रहा हूं। दरवाजा लगाया। राजा बाहर हो गया। वह जो तीसरा आदमी रात भर सोया रहा था फिर वह एक कोने में आंख बंद करके बैठ गया। उन्होंने कहाः यह आदमी क्या कर रहा है? लेकिन उन्होंने कहाः इसकी फिकर छोड़ो, फुरसत किसे है इसकी फिकर की। वे अपनी किताबें छिपा लाए थे अपने कपड़ों के अंदर। कोई आजकल के विद्यार्थी चोर हैं ऐसा नहीं, विद्यार्थी सदा से चोर हैं। क्योंकि जहां ज्ञान स्मृति से समझा जाता हो वहां चोरी अनिवार्य है। चोरी कई तरह से हो सकती है। वे बेचारे ले आए थे छिपा कर। जल्दी हिसाब-किताब लगाने लगे। लग गए अपनी मुश्किल में। पसीना चुआ जा रहा है। हिसाब कुछ सूझता नहीं है।

तभी अचानक राजा भीतर आया, उसने कहा, बंद करो यह हिसाब-किताब, जिसको निकलना था वह निकल चुका। उन्होंने कहाः कौन निकल चुका? हम दोनों तो यहीं हैं। कहाः वह तीसरा आदमी निकल चुका है।

देखा, कोना खाली है, वह आदमी नदारद है। राजा ने कहाः वह बाहर है। लेकिन उन्होंने कहाः निकला कैसे वह? क्योंकि हिसाब तो उसने कुछ किया नहीं। उस राजा ने कहाः हिसाब का सवाल न था। ताला लगा ही नहीं था, सिर्फ दरवाजा अटका था।

दरवाजा सिर्फ अटका था। और बुद्धिमान आदमी का पहला लक्षण यह है कि पहले वह यह देख ले कि सवाल भी है या नहीं? अगर जवाब खोजने में लग जाए तो मुश्किल में पड़ जाता है। वह निकल गया बाहर।

उस आदमी से पूछा कि तुझे क्या हुआ? उसने कहा, मैंने सोचा रात कि जिस परीक्षा का अपने को पता ही नहीं उसकी तैयारी करनी खतरनाक है। क्योंकि कहीं तैयारी न मालूम क्या-क्या हो जाए। तो उसके लिए तो अनप्रिप्रेयर्ड होना ही अच्छा है। प्रिप्रेयर्ड होना खतरनाक है जिसका अपने को कुछ पता ही नहीं। तो मैं अनप्रिप्रेयर्ड आया रात भर मैंने कहा कि बिल्कुल अनप्रिप्रेयर्ड हो जाओ जो पहले की तैयारी है वह भी भूल जाओ ताकि सुबह कम से कम खाली साफ-सुथरा तो खड़ा हो जाऊं कि क्या है। जब इस कमरे में आकर बैठा तो मैंने कहा कि ताले तो अपने बापदादों ने कभी नहीं खोले अगर वे खोल ही लेते तो राजा हो जाता उनका बेटा वजीर क्यों होता! अपना तो काम नहीं है ये लेकिन अब आंख बंद करके बैठ जाएं, कुछ सूझ जाए तो हो जाए। आंख बंद करके मैं बैठा तब मुझे खयाल आया कि पहले यह तो देख लें कि ताला लगा भी है कि नहीं? गया और ताला खोल कर बाहर निकल गया। ताला तो लगा नहीं था, दरवाजा अटका था।

परमात्मा का दरवाजा भी लगा हुआ दरवाजा नहीं है कि कोई विधि की और चाबी की जरूरत हो। बिल्कुल अटका है। मगर आप अपनी किताब खोले बैठे हैं कि क्या विधि से निकलें। उधर परमात्मा उस तरफ प्रतीक्षा कर रहा है कि छोड़ो किताब आ जाओ बिना ही विधि के चलेगा। जिंदगी में जो भी महत्वपूर्ण है वह सब बिना विधि के होता है। न प्रेम विधि से होता है, न सत्य विधि से होता है, न काव्य विधि से होता है, न संगीत विधि से होता है।

जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है विधि के बाहर है। और जीवन में जो भी क्षुद्र है विधि के भीतर है। विधि से पाना हो तो क्षुद्र मिलेगा और बिना विधि के कूदने की क्षमता हो तो विराट मिल जाता है।

सातवां प्रवचन

राजनीति का सम्मान कम हो

अभी हुआ क्या है कि आज से पहले शिक्षा थी कम, काम था ज्यादा। भले आदमियों ने अनिवार्य शिक्षा कर दी। अनिवार्य शिक्षा करके शिक्षित तो ज्यादा पैदा कर रहे हैं और काम हम पैदा नहीं कर पा रहे हैं। शिक्षित बढ़ता जा रहा है काम बिल्कुल नहीं है। वह बिल्कुल परेशानी में पड़ गया है।

उससे जब हम बातें करते हैं ऊंची तो उसे हम पर क्रोध आता है बजाए हमारी बातों को पसंद करने के। और जब हमारा नेता उसे समझाने जाता है तो उसका मन होता है इसकी गर्दन दबा दो।

कुछ भी नहीं होगा समझाने से। और वह गर्दन दबा रहा है जगह-जगह। और दस साल के भीतर हिंदुस्तान में नेता होना अपराधी होने के बराबर हो जाने वाला है।

एक चोर का तो जुलूस निकल सकेगा, नेता का नहीं निकलेगा। ... क्योंकि नेता दुश्मन मालूम पड़ रहा है। खुद तो कब्जा करके बैठ गया है किसी जगह पर और दूसरों को त्याग इत्यादि के उपदेश दे रहा है। खुद तो मजे से बैठा है अपनी सीट को बिल्कुल सिक्योर करके और दूसरों को कह रहा है, तुम त्याग करो देश के लिए। और खुद तो कोई त्याग कर नहीं रहा है। और कठिनाई इसकी भी होती है जो नेता है इसको हमने, इसके साथ भी हमारी भ्रांति हो गई है।

गांधी जी की वजह से बड़ी भ्रांतियां हुईं। एक तो गांधी जी ने हिंदुस्तान में जो आजादी का आंदोलन चलता था। उस आंदोलन में ऐसे आदमी पैदा किए जिनको त्याग की धारणा दी। असल में जब भी कोई आंदोलन शक्ति पाने के लिए चलता तब त्याग करना सदा आसान है। एकदम आसान है क्योंकि आगे शक्ति पाने का लक्ष्य सामने खड़ा होता है, सपना आगे होता है। जो आदमी हिंदुस्तान में लड़ रहा था आजादी के लिए उसके सामने शक्ति पाने का, सामने साफ सीधा मौका था। उसके सामने एक भविष्य था। भविष्य के मौके पर त्याग करना सदा आसान है। जिसकी भविष्य में कोई...

तो आजादी इतना बड़ा... पड़ती थी। सारी शक्ति हमारे हाथ में आने को थी। सारे देश की ताकत हजारों साल के बाद लौटने को थी तो हम संघर्षरत हम त्याग कर सकते थे, जेल जा सकते थे, भूखे रह सकते थे, भूखे मर सकते थे। लेकिन न गांधीजी को खयाल में न उनके और साथियों को खयाल था कि यह बात आजादी के पहले की है। आजादी मिलते ही सब बदल जाएगा।

आजादी मिलते ही वह जो त्यागी था वह एकदम कहेगा कि मुझे वाइसराय की जगह चाहिए। वाइसराय का भवन चाहिए। कहेगा ही। और फिर उससे आप त्याग की अपेक्षा न कर सकेंगे। क्योंकि त्याग उसने किया था किसी--किसी बड़ी आकांक्षा, वह आकांक्षा तो अब समाप्त हो गई। अब त्याग का कोई सवाल नहीं। अब वह त्याग भंजाएगा। अब उसने जो नोट त्याग के इकट्ठे कर लिए हैं वह इनका बाजार में बदला चाहेगा। वह बदला ले रहा है। वह बदला ले रहा है। और दूसरे युवकों को कह रहा है, त्याग करो। और उन युवकों के सामने कुछ भी पाने योग्य नहीं है जिसके लिए त्याग किया जाए।

तो इस वजह से एक कठिनाई स्वभावतः होने वाली थी, अब यह जो, यह जो स्थिति है इस स्थिति को हम कहां से तोड़ना शुरू करें। इस स्थिति को मैं मानता हूं कि बराबर तोड़ा जाए। लेकिन हमें कुछ आकांक्षाएं जो

हजारों साल से सप्रेस की हैं उनको मुक्त कर देना पड़ेगा। अब यहीं तक कठिनाई है हमारे युवक की कि वह अपने मन की पत्नी भी तो नहीं पा सकता।

आप उसको जीवन में क्या भरोसा दिलाने जा रहे हैं। वह एक लड़की को प्रेम भी तो नहीं करने की स्वतंत्रता है उसको। और सब मामला और दूर है। एक आदमी जिंदगी में शायद मैं समझता हूं कि नब्बे प्रतिशत प्रेम की तृप्ति मांगता है। और दस प्रतिशत ये जो मांगता है वह उसके प्रेम के आस-पास होती है। वह दस प्रतिशत भी वह प्रेम की ही... हो सकता है। लेकिन उसकी भी अभीप्सा हम युवक में पैदा नहीं कर पाते हैं। अगर हिंदुस्तान में सिर्फ प्रेम का ही हम मार्ग खुला छोड़ दें तो भी हिंदुस्तान का युवक और अधिक सक्रिय हो जाए।

वॉनगाग की जिंदगी में एक पेंटर हुआ डच। उसकी जिंदगी में एक बड़ी अदभुत घटना है। वह कुरूप था कोई लड़की उससे कभी प्रेम नहीं कर पाई, करना मुश्किल था। अतिकुरूप था। न वह कपड़े ढंग के पहनता था न वह स्नान करता था न वह किसी से कभी कुछ बोलता था न वह ठीक से खाना खाता था। वह एकदम पागलों की भांति घूमता रहता। एक दुकान पर काम करता था वहां भी वैसे गंदे और बेवक्त और कभी भी पहुंच जाता। और दुकान उसको अलग करने का ही सोच रही थी कि उसे अलग कर दिया जाए।

लेकिन अचानक एक दिन दुकान का मालिक हैरान हुआ कि वह अच्छे कपड़े पहन कर, नहा कर बाल-वाल कटा कर दा.ढ़ी-वा.ढ़ी साफ करके इत्र-वित्र लगा कर हाजिर हो गया।

उस मालिक ने पूछा कि चमत्कार! हम तो विश्वास ही नहीं कर सकते कि तुम और स्नान करोगे और बाल कटा लोगे, और तुम कभी कपड़े धुला कर पहनोगे! हो क्या गया है? तो उसने कहा कि मत पूछिए, एक लड़की मेरी जिंदगी में आ गई है।

यह जो आदमी की जो सामान्य दुनिया है उसमें प्रेम एक तत्व है जो उसे व्यवस्था देता है। हमने इतने अच्छे कपड़े ईजाद किए, वे हमने किसी को अच्छे लगेंगे इसलिए ईजाद किए। हमने अच्छे मकान बनाए उसमें जिसको हम प्रेम करते हैं वह रहेगा इसलिए बनाए। हमने सुगंधें ईजाद की, स्नान ईजाद किया, सब ईजादें। इसलिए अगर एक संन्यासी नहाना बंद कर देता है, तो कोई बहुत आश्चर्य की बात नहीं है। वह नहाए किसके लिए। सच बात ये है कि आदमी अपने लिए नहाता भी नहीं। वह भी किसी के लिए नहाता है। एक संन्यासी अगर कुरूपता में जीने लगता है तो बहुत स्वाभाविक है। क्योंकि अब सुंदर होने का प्रयोजन भी क्या है!

हिंदुस्तान के युवक को प्रेम का जो कि युवक के लिए सबसे बड़ा सपना है। वह भी नहीं है। वह भी उसका बाप तय कर रहा है। वह भी जन्म-कुंडली मिलाई जा रही है। तो ठीक था कि दस साल के लड़के का आप जन्म-कुंडली मिला देते तो उसको पता नहीं था कि आप क्या कर रहे हो। पच्चीस साल के लड़के की जन्म-कुंडली मिला रहे हो। तुम उसको मुश्किल में डाल रहे हो। तुम अपने खिलाफ उसको खड़ा कर रहे हो। और उसकी जिंदगी में जाल बो रहे हो जो उसको नुकसान पहुंचा देंगे। और उसकी जिंदगी में में फ्रस्ट्रेशन डाल रहे हो। न प्रेम है उसकी जिंदगी में न धन है उसकी जिंदगी में न ही इतनी समझ है कि अगर धन न हो और प्रेम हो तो भी आदमी जीता है, जी सकता है।

लेकिन प्रेम भी नहीं है और धन है नहीं। कोई महत्वाकांक्षा पूरी होती दिखाई नहीं पड़ती। तो इधर हमें कुछ चीजों पर बुनियादी चोट करनी चाहिए।

जैसे मेरा मानना है कि हिंदुस्तान में प्रेम-विवाह के लिए हमें जगह बनानी चाहिए। उस साधारण अरेंज-मैरिज की व्यवस्था तोड़नी चाहिए। युवक को कहना चाहिए कि यह पाप है, गुनाह है कि तुम अरेंज-विवाह करो। यह उसी को कहना चाहिए कि गुनाह है, पाप है यह। है भी पाप। क्योंकि जिसको तुमने प्रेम नहीं किया

उसके साथ जिंदगी भर रहना तुम अपनी जिंदगी और दूसरे आदमी की जिंदगी बिगाड़ने की तैयारी कर रहे हो। हमारा जो बाल-विवाह था उसमें सुविधा थी। सुविधा इसलिए थी कि पत्नी भी उसी भांति मिलती थी उस विवाह में जैसे बहन मिलती है, मां मिलती है गिवन। उसमें चुनाव की कोई बात न थी। उसमें पति और पत्नी एक साथ बड़े होते थे। जब वे होश में आते थे तब वे पाते थे कि पत्नी भी मिली है, मां भी मिली है, बहन भी मिली है। जैसे हम मां का कोई चुनाव नहीं करते और बाद में इससे पीड़ित भी नहीं होते कि मुझे दूसरी मां क्यों नहीं मिली। इसी तरह हमें दूसरी पत्नी क्यों नहीं मिली ये भी पीड़ा नहीं होती थी क्योंकि पत्नी हमारी उसके पहले मिल गई होती थी।

लेकिन यह संभव नहीं रहा। अब होश आ गया है और पत्नी दी जा रही है। और हमने इतनी महत्वाकांक्षाएं जगा दी हैं उनको पूरा करने का हमारे पास कोई उपाय नहीं दिखाई पड़ता है तो हम उन महत्वाकांक्षाओं को जगाएं जो हम पूरी कर सकते हैं। जैसे मेरी समझ में यह है कि आजादी के बाद हिंदुस्तान में सिर्फ राजनीति एक मात्र महत्वाकांक्षा का द्वार रह गई। इस एक द्वार से कितने लोग निकल सकेंगे? ये पचास करोड़ का मुल्क है इसमें पचास करोड़ मिनिस्टर तो नहीं हो सकते? हालांकि कोशिश मेरी यही है और कुछ हैरानी न हो कि भारत ऐसा इंतजाम कर ले कि पचास करोड़ मिनिस्टर हो जाएं। यह अगर ठीक से न हो सके तो रोटेशन में होना पड़े, इसलिए रोटेशन चल रहा है। इसलिए हर पंद्रह दिन में मिनिस्टरी बदलनी चाहिए क्योंकि रोटेशन जितना होगा उतने लोग मिनिस्टर होने का सुख लेने में भी कोई हर्ज नहीं है, पांच दिन मिनिस्टर हुए तोभी हुए तो।

यह जो एक ही द्वार रहा अगर हमारे सामने तो हमारा युवक सक्रिय नहीं हो सकता, सृजनात्मक नहीं हो सकता। मेरी अपनी समझ में यह साहित्य है, कला है, संगीत है, ये सबके सम्मानित द्वार हमें खोलने चाहिए। अब यह मेरी समझ में ऐसा आता है कि रूस में पिछले चालीस, तीस, चालीस-पचास साल में अगर विद्रोह का स्वर पैदा नहीं हो सका जो कि स्टैलिन जैसी हुकूमत में... हो गया होता है, तो उसका एक मात्र कारण है कि रूस ने अपने साहित्यकार को इतना सम्मान दिया जितना कि दुनिया में कहीं भी नहीं मिला। और सारी क्रांतियां साहित्यकार से शुरू होती हैं, सारा उपद्रव उससे आता है। क्योंकि जो विचारते हैं, वे उपद्रव पैदा करते हैं। असल में विचार जो है वह विद्रोह है।

जो कौम अपने साहित्यकार को तृप्त कर देती है उस कौम में बगावतें बहुत मुश्किल हो जाती हैं। हिंदुस्तान में पांच हजार साल तक नहीं हुई क्योंकि हमने अपने ब्राह्मण को तृप्त किया हुआ था। कोई शूद्र बगावत नहीं करते हैं और न कोई क्षत्रिय बगावतें करते हैं। क्षत्रिय लड़ते हैं युद्ध, क्रांतियां नहीं करते। क्रांतियां ब्राह्मण करवाते हैं करते वे नहीं। लड़वाते हैं वे क्षत्रियों को। लड़ेगा शूद्र, लड़ेगा वैश्य। लेकिन क्रांति का स्वर ब्राह्मण पैदा करेगा। वह जो दिमाग है वह बगावत पैदा करता है। हिंदुस्तान में बड़ी तरकीब की कीमिया होती है। उसकी कीमिया ये थी कि ताकत थी क्षत्रिय के हाथ में आदर था ब्राह्मण के हाथ में। हमने एक डिवीजन ऑफ रिस्पेक्ट... आदर का एक बहुत गहरा विभाजन किया था। ताकत दे दी थी क्षत्रिय के हाथ में वह ताकत से तृप्त था। उसके पास सब कुछ था। लेकिन सिर उसका रखवा दिया था ब्राह्मण के पैरों में।

एक ब्राह्मण भी राजा के महल नहीं जाता। जाना पड़ता है राजा को ब्राह्मण के झोपड़े पर। फिर ब्राह्मण अपने झोपड़े में भी आनंदित था। उसका झोपड़ा महल से ऊपर था नीचे नहीं था। ब्राह्मण की जो अकड़ थी वह किसी बादशाह की भी नहीं थी। वह सड़क पर जिस शान से चलता था सिकंदर भी नहीं चल सकता था।

हालांकि वह कुछ भी नहीं था। ब्राह्मण दीन था दरिद्र था न पैसा था न खाना था न मकान था लेकिन कुछ और तृप्ति थी जो इससे भी गहरी थी और इसके लिए वह राजी था।

तो हिंदुस्तान को अपने-अपने विभाजन करने पड़े सम्मान के। राजनीतिज्ञ अकेला अगर सम्मान का हकदार है तो हिंदुस्तान में सृजन नहीं होने वाला। तब हिंदुस्तान में नक्सलाइट पैदा होंगे। हजार तरह के नक्सलाइट पैदा होंगे। ये हिंदुस्तान का ब्राह्मण है, जो दिक्कत डालेगा। और आज ब्राह्मण युनिवर्सिटी में है स्वभावतः वहां सब ब्राह्मण पैदा हो रहे हैं। और एक-एक युनिवर्सिटी में बीस-बीस हजार लड़के इकट्ठे हो गए हैं जो इंटेलिजेंसिया हैं।

दुनिया में इतने ब्राह्मण कभी भी इकट्ठे नहीं थे। पांच ब्राह्मणों का इकट्ठा करना मुश्किल था... तो जहां बीस हजार बुद्धिशाली लोग इकट्ठे हो जाएं वहां से उपद्रव के सूत्र पैदा होने शुरू हो जाएंगे।

और उनकी कोई आकांक्षा की तृप्ति नहीं होने वाली है। तो ऐसा मुझे लगता है कि हम अगर साहित्य को, संगीत को, कला को, चित्रकला को, मूर्तिकला को इनको हम इतना सम्मान दें कि राजनीतिज्ञ नंबर दो हो जाना चाहिए नंबर एक नहीं। राजनीतिज्ञ को नंबर दो होने में तृप्त होना चाहिए। क्योंकि उसके पास नंबर एक की ताकत है। उसको नंबर दो होने में परेशान नहीं होना चाहिए क्योंकि है वह नंबर एक। ताकत उसके पास नंबर एक की है। इसलिए उसे नंबर दो का नंबर लगाकर लेने में हर्ज नहीं होना चाहिए, दिक्कत नहीं होनी चाहिए। उसके नंबर दो में खड़े रहने में ही सुविधा है उसकी। नंबर एक की ताकत है उसके पास। वह चाहे तो सभी साहित्यकारों के गर्दन कटवा दे और वह चाहे तो सभी चित्रकारों को जेल में डाल दे। और वह चाहे तो सबको नुकसान पहुंचा दे। ताकत उसके पास नंबर एक है। और इसलिए नंबर एक के आदमी को नंबर एक का तमगा नहीं चाहिए। नंबर एक का तमगा उसको दे दो जिसके पास नंबर एक की ताकत नहीं है।

फिर तो हम तृप्ति को विभाजित करते हैं। और ये तृप्ति जितने बड़े पैमाने पर विभाजित हो जाएगी उतना फ्रस्ट्रेशन कम होगा। उतनी सक्रियता बढ़ जाएगी।

और जैसा आपने कहा, ये जो हमारा युवक है इसके अगर हम सिर्फ बुद्धि के ही विकास पर जोर दे रहे हैं तो हम बड़े गहरे खड्डे को अपने हाथ से खोद रहे हैं। जिसमें मुल्क बुरी तरह गिरेगा। क्योंकि अकेली बुद्धि जो है वह बहुत महंगी चीज है अकेली बुद्धि। उसके साथ हृदय का विकास चाहिए नहीं तो बुद्धि खतरनाक सदा हो जाती है। क्योंकि बुद्धि के पास कोई दया और ममता नहीं होती। बुद्धि बहुत क्रूर है। इसलिए ब्राह्मण जितना क्रूर हो सकता है उतना क्षत्रिय नहीं हो सकता। एक दफा उसके हाथ में ताकत हो तो उसकी नजर में जितनी तलवार होती है, उतनी क्षत्रिय की नजर में नहीं होती। क्षत्रिय के हाथ में होती है। लेकिन ब्राह्मण की नजर में होती है। ब्राह्मण की गर्दन में तलवार होती है। ब्राह्मण जितना क्रूर हो सकता है उतना कोई क्षत्रिय कभी नहीं होता। अकेली बुद्धि जो है बड़ी कठोर हो सकती है क्योंकि उसके पास सोचना विचारना...

अब जैसे मेरा मानना है कि स्टैलिन इतना कठोर हो सका क्योंकि वह ब्राह्मण है। स्टैलिन जो है वह कठोर हो सकता है, वह ब्राह्मण है। उसकी सब भाषा ब्राह्मण की है। पंडित को जो भाषा बोलनी चाहिए वह भाषा बोलता है। ... स्क्रप्चर कोट करता है। उसको लेनिन और मार्क्स... कंठस्थ हैं। वह जो भी बोल रहा है वह हमेशा थ्योरेटिकल है। वह बहुत कठोर हो सका। इतना कठोर लेनिन शायद नहीं हो सकता था। और कोई भी ये जानता है कि... इससे भी ज्यादा कठोर हो सकता है। क्योंकि और भी बड़ा ब्राह्मण था।

ये जो सिर्फ बुद्धि है ये बहुत कठोर हो सकती है। इसके पास कोई हृदय नहीं है। तो हम हृदय को कैसे विकसित करें। इसकी हमें चिंता लेनी पड़े और हृदय के विकास के भी वैसे ही नियम हैं जैसे बुद्धि के विकास के नियम हैं।

लेकिन हम अपने युवक के हृदय को विकसित करने के लिए कुछ नहीं कर पाते हैं। न हम उसे बागवानी सिखा रहे हैं न हम उसे फूलों का प्रेम सिखा रहे हैं। न हम उसे वीणा का संगीत सिखा रहे हैं। जहां कि हृदय जन्मता है। न हम उसे प्रेम करने दे रहे हैं। जहां से हृदय का द्वार खुलता है। हम उसके हृदय को सब भांति बंद कर देते हैं। हृदय उसके पास रह जाता है तीन-चार साल के बच्चे का। बुद्धि हो जाती है पच्चीस साल के जवान की। दोनों के बीच कोई तालमेल नहीं रह जाता। हृदय पड़ा रह जाता है, बुद्धि दिन-रात उसको कठोरता में, चालाकी में, कनिंगनेस में ले जाती है। अकेली बुद्धि चालाक हो जाती है।

तीसरी बात, जैसा आपने कहा, वह भी ध्यान देने की है कि हमें हमारे युवक के शरीर पर बहुत सम्हालने की जरूरत है। हमारे युवक के पास शरीर नहीं हैएक अदभुत। शरीर का हमारा हमें खयाल नहीं है। शरीर का खयाल न होने का भी... कारण है। क्योंकि हम शरीर विरोधी कौम हैं। हम शरीर सौष्ठव, शरीर सौंदर्य उसकी हमें ज्यादा फिकर नहीं है।

इधर हिंदुस्तान से काउंट केसरलिंग वापस लौटा। उसने अपनी किताब में लिखा कि हिंदुस्तान में जाकर मुझको पता चला कि बीमार होना अध्यात्म है। ठीक पता चला उसको। अगर हमारा साधु और संन्यासी पीले चेहरे का न दिखाई पड़े तो हमें शक होगा कि कुछ गड़बड़ है। ठीक से खाता होगा, ठीक से सोता होगा, ठीक से पीता होगा। इतना खून साधु-संन्यासी में देख कर हम बरदाश्त नहीं कर सकते। वह पीले चेहरे का चाहिए तभी हमें त्यागी मालूम पड़ेगा। वह हरा पत्ता नहीं पीला पत्ता चाहिए। मरता हुआ पत्ता चाहिए।

हिंदुस्तान हजार साल से शरीर का दुश्मन है इसलिए आप देखें जिस कौम ने शरीर का, आनंद का उस कौम ने जिसे शरीर... ये यूनान ने पैदा किए।

अब यूनान की मूर्तियों को देख कर तबीयत खुश हो जाती है क्योंकि वे उन लोगों ने बनाई थीं जो शरीर को इंच-इंच प्रेम करते थे। और शरीर के एक-एक अनुपात को प्रेम करते थे। यानी किसी आदमी का जरा भी शरीर अनुपात के बाहर गया था तो सारे गांव की नजर उस पर चली जाती कि वह अनुपात के बाहर चला गया शरीर। यानी वह आदमी एक आदमी एक अर्थ में अप्रतिष्ठित हो जाता। तो बुढ़ापे तक आदमी फिकर करता था कि उसके शरीर का सौष्ठव न खो जाए। उसके शरीर का गठन न खो जाए, उसके शरीर का अनुपात न खो जाए। उसके शरीर का सौंदर्य न खो जाए। लोग एक दूसरे के शरीर की वैसे ही प्रशंसा करते थे जैसे एक-दूसरे की बुद्धि की करते हैं। अगर आप किसी से कहें कि बहुत बुद्धिमान हो तो इसमें कोई कठिनाई नहीं होती। लेकिन किसी से हम कहें बहुत सुंदर हो तो जरा बेचैनी शुरू होती है कि बात क्या है, ऐसा क्यों कहा गया? पुरुष से तो अलग है बात अगर हम किसी स्त्री को कहें कि बहुत सुंदर हो तो वह भी चौंक कर खड़ी हो जाती है! हैरानी की बात है!

एक स्त्री सुंदर है तो किसी को उसे जरूर कहना चाहिए। और इसमें उसके पति का ठेका नहीं है कि वही उसको कहे। जिसको भी दिखाई पड़ती है, उसका भी हक है कि वह कहे कि तुम सुंदर हो। और ये कहना उसे सुंदर बनाने में सहयोगी होगा। और ये चारों तरफ की नजर उसके सौंदर्य को बचाने में सहयोगी होगी नहीं तो... क्या होता है।

जब तक शादी न हो लड़की सुंदर होती है। शादी के बाद कुरूप होना शुरू हो जाती है। क्योंकि अब सुंदर की कोई जरूरत नहीं, वह बिक गई। इसलिए शादी के बाद में मुश्किल से देखते हों कि कोई स्त्री सुंदर रह जाती

हो। पति को तो सुंदर बताने का कोई कारण नहीं है, यह तो कांट्रेक्ट हो चुका। और किसी को सुंदर बताने की कोई वजह नहीं क्योंकि कोई और सुंदर कहे तो झगड़ा हो सकता है।

इसलिए मैं देखता हूं कि स्त्रियां, पत्नियां, पतियों के सामने भूत-प्रेत बनी बैठी रहती हैं। कोई... क्योंकि उससे कोई मतलब नहीं है वह तो अब जैसी भी है, बरदाश्त करेगा। और पुरुष को तो सुंदर होने की कोई जरूरत ही नहीं है। पुरुष को तो सौंदर्य का कोई बोध ही नहीं है कि पुरुष को भी सुंदर होना चाहिए। क्योंकि स्त्री उसका धन पूछती है, उसकी पदवी पूछती है, उसके सौंदर्य को कभी पूछती नहीं। कोई स्त्री इसकी फिक्र नहीं करती कि उसका पति सुंदर है। वह इसकी फिकर करती है उसकी जेब गरम है? नहीं है गरम। उसे कोई मतलब नहीं है इस बात से। उसके पास बड़ा मकान है, बड़ी कार है? चलेगा। वह आदमी है या नहीं इससे कोई मतलब नहीं है।

तो स्त्रियां पुरुष के शरीर को नहीं पूछतीं इस मुल्क में और अगर पूछें तो पुरुष भी बेचैन होता है क्योंकि हम शरीरवादी नहीं हैं। हमको खयाल है हम अध्यात्मवादी हैं। और अध्यात्म में कोई सौंदर्य नहीं होता। अध्यात्म में निराशा। उसका कोई आकार नहीं होता, उसका कोई अनुपात नहीं होता। उसमें कोई मोटी और पतली आत्मा नहीं होती। उसमें कोई स्वस्थ और बीमार आत्मा नहीं होती क्योंकि उसकी कोई चिंता की बात नहीं आत्मा सबके पास है।

तो सौंदर्य का बोध न होने से शरीर के संबंध में हमने बड़ी कठिनाई पैदा कर ली है। हमें यह बोध फिर से पैदा करना पड़ेगा। हमें मूर्तियां गढ़नी पड़ें, हमें इसकी प्रतियोगिताएं निर्मित करनी पड़ें, हमें शरीर को फिर से सोचना शुरू करना पड़े कि शरीर का भी अपना मूल्य है। और जब शरीर पैदा हो तो वह किसी की बपौती नहीं हो जानी चाहिए। वह किसी की बपौती नहीं है।

अभी-अभी एक मित्र ने मुझे कहा कि वे इटली गए हुए थे। बहुत घबड़ा गए। एक स्त्री ने आकर एकदम उनके गालों पर हाथ रख दिया और कहा कि इतने अच्छे फीचरस मैंने कभी देखे नहीं। एक अपरिचित स्त्री ने सड़क पर। और उसने कहा कि क्या मजाक! ...

परिचित हाथ हो तो घबड़ाहट होती है। अपरिचित हाथ... वह तो बहुत घबड़ा गया। उसने कहा, ये क्या कर रही हो-- उसने हाथ फेर लिए थे तो वह आंख बंद किए उसके चेहरे पर हाथ फेर लिए। अपने रास्ते पर चली गई, उनको धन्यवाद दे गई कि मैंने इतना सुंदर चेहरा कभी नहीं देखा! उस पर मैं हाथ फेरना चाहती थी।

अब मैं मानूंगा कि ये एक सुसंस्कृत स्त्री का लक्षण हुआ। ये आदमी असंस्कृत सिद्ध हुआ उस स्त्री के सामने। ... नहीं है। ये उसको धन्यवाद भी नहीं दे सका कि उसे धन्यवाद देता। बल्कि हो सकता है कि ये गिल्टी अनुभव किया हो कि शक्ल जरा खराब होती तो अच्छा होता। तो जरूर कहीं न कहीं इसके अंतःगृह में लगा होगा कि ये तो बड़ा गड़बड़ है।

यह हमें, इस मुल्क को शरीर का प्रेम पैदा करवाना पड़े। और हमारे युवक और युवतियां एक अर्थ में हमारी पिछली किसी भी पीढ़ी से ज्यादा सुंदर संभव है, उनकी संभावना है। तो उसका हमें अब जैसे कि आज भी, आज भी हिंदुस्तान में शरीर सौष्ठव की, सौंदर्य की न कोई प्रतियोगिताएं हैं बड़ी।

अब मैं इधर देखता हूं कि हिंदुस्तान से जो भी प्रतियोगिता होती है स्त्रियों के शरीर-सौंदर्य की उसमें अक्सर साधारण औरतें दिखाई पड़ती हैं। और कुछ ही औरतें भाग लेती हैं जिनको हम बाजारू ढंग की स्त्रियां कहें, उसमें अच्छे घरों की कोई स्त्री भाग नहीं लेती। हिंदुस्तान में बहुत सुंदर स्त्रियां हैं। लेकिन हिंदुस्तान से जो स्त्री हिंदुस्तान का प्रतिनिधित्व करने जाती है अमरीका, वह बहुत साधारण होती है। वह कभी विजेता नहीं

बनकर लौटती विश्व-सौंदर्य में। वह नहीं बन सकती क्योंकि अमरीका में अच्छे घर की लड़की वहां आती है यहां से तो बाजारू ढंग की लड़की जाती है। उसमें प्रतियोगिता में कोई जोड़ नहीं बैठता।

हमारा बोध जो है उस बोध को जगह-जगह से अगर हम बदल सकें और... तोड़ा जा सकता है, बदला जा सकता है इसे खयाल...

तो आप जो करना चाह रहे हैं बिल्कुल ही करें, मेरा जो भी सहयोग चाहिए मैं सहयोग दूंगा। और एक व्यापक अभियान चलाएं और उस अभियान को बहुत से पहलुओं से लें। और सारे पहलुओं पर चिंतन चलाएं और उस पर नये-नये... और नये-नये खयाल।

काम तो बहुत बड़ा हो सकता है। और अब करना जरूरी है। अगर हम दस-पंद्रह-बीस साल में हम नहीं कर पाए तो हम हमारा इस पृथ्वी पर अस्तित्व बिल्कुल अन-अस्तित्व जैसा हो जाएगा, हम आदिवासी हालत में हो जाएंगे। ...

आठवां प्रवचन

क्या मनुष्य एक रोग है?

मेरे प्रिय आत्मन्!

क्या मनुष्य एक रोग है? इ.ज मैन ए डि.जी.ज? इस संबंध में सबसे पहले जो बात मैं आपसे कहना चाहूं, मनुष्य अपने आप में तो रोग नहीं है, लेकिन मनुष्य जैसा हो गया है वैसा जरूर रोग हो गया है। अपने आप में तो इस जगत में सभी चीजें स्वस्थ हैं लेकिन जो भी स्वस्थ है उसे रुग्ण होने की संभावना है। जो भी स्वस्थ है वह बीमार हो सकता है। जीवित होने के साथ दोनों ही मार्ग खुले हुए हैं। सिर्फ मरा हुआ ही व्यक्ति बीमारी के भय के बाहर हो सकता है जिंदा व्यक्ति का अर्थ ही यही है कि वह बीमार हो सकता है इसकी पासिबिलिटी है, इसकी संभावना है। और मनुष्य बीमार हो गया है।

मनुष्य का पूरा इतिहास उसकी बीमारियों का इतिहास है। और मनुष्य की पूरी सभ्यता उसकी बीमारियों को छिपाने का प्रयास है। मनुष्य किसी भांति जी लेता है लेकिन जीने का नाम जिंदगी नहीं है। और हम किसी भांति जन्म से लेकर मृत्यु की यात्रा कर लेते हैं इसलिए अपने को जीवित समझ लेना काफी नहीं है।

मैंने सुना है, एक आदमी मरा और तभी उसे पता चला कि वह जीवित था। बहुत लोगों को मरने के क्षण में ही पता चलता है कि जीवन हाथ से निकल गया है। जीवन का सीधा कोई अनुभव ही नहीं होता। जैसा मनुष्य है रुग्ण, अस्वस्थ, तनाव से भरा हुआ। उसमें जीवन का अनुभव हो भी नहीं सकता है। लुइस... ने एक किताब लिखी है नाम उसका बहुत प्यारा है नाम है बी ग्लैड दैट यू आर न्यूरोटिक। प्रसन्न हों कि आप मानसिक रूप से बीमार हैं। मजाक उसकी गहरी है। कहना वह यह चाह रहा है कि इसलिए प्रसन्न हों क्योंकि मानसिक रूप से बीमार होना बहुमत में होना है, मैजारिटी में होना है। अधिक लोग मानसिक रूप से बीमार हैं। और... का खयाल है कि जैसे-जैसे आदमी आगे बढ़ रहा है, मानसिक बीमारी बढ़ रही है। और बहुत जल्द वह वक्त आ जाएगा जब मानसिक रूप से जो बीमार नहीं होगा उसकी गिनती नार्मल में नहीं हो सकेगी।

इसलिए वे लोग जो मानसिक रूप से बीमार हैं, उन्हें प्रसन्न होना चाहिए। क्योंकि मनुष्य की भविष्यता के वे साथ हैं। मनुष्य का भविष्य पागलों और बीमारों का ही भविष्य है। शायद बहुत जल्दी वह वक्त आ जाए कि हमें पागल लोगों के लिए पागलखाने न बनाने पड़ें बल्कि जो लोग पागल होने से बच जाएं उनकी रक्षा के लिए हम इंतजाम करना पड़े और अलग उनके ठहरने की व्यवस्था करनी पड़े। जिसे हम सामान्य रूप से स्वस्थ आदमी कहते हैं उसका केवल इतना ही मतलब होता है कि जितने सब लोग बीमार हैं मानसिक रूप से वह उतना ही बीमार है, उनसे ज्यादा नहीं। मानसिक रूप से विक्षिप्त और साधारण रूप से स्वस्थ आदमी में जो अंतर है, वह अंतर गुण का नहीं केवल मात्रा का है। वह केवल डिग्रीज का ही अंतर है। जैसे निन्यानबे डिग्री पर पानी गरम होता है, लेकिन भाप नहीं बनता। सौ डिग्री पर भाप हो जाता है। लेकिन सौ डिग्री गरम पानी में और निन्यानबे डिग्री गरम पानी में कोई गुण का भेद नहीं है। कोई क्वालिटेटिव फर्क नहीं है। जो फर्क है वह केवल डिग्रीज का है। एक डिग्री और, और पानी भाप बन जाएगा।

जिन्हें हम साधारण रूप से स्वस्थ लोग कहते हैं, उनमें और मानसिक रूप से बीमार आदमी में जो फर्क है वह डिग्री का ही है। एक डिग्री और, और कोई भी आदमी पागल हो सकता है।

विलियम जेम्स एक बड़ा मनोवैज्ञानिक था। जिंदगी भर उसने लोगों के मन के संबंध में विचार किया। मरने के कोई बीस वर्ष पहले वह एक पागलखाने को देखने गया। और पागलखाने से लौट कर एकदम उदास, परेशान सा हो गया। उसके मित्रों ने बहुत पूछा कि इतनी उदासी की क्या बात है? तो विलियम जेम्स ने कहा कि मैं इसलिए उदास हो गया हूं कि पागलखाने में पागलों को देख कर और अपने को देख कर। मुझे कोई बहुत बुनियादी फर्क नहीं मालूम होता। थोड़ा बहुत फर्क है लेकिन मैं निश्चित नहीं हो सकता हूं अब कि वह फर्क किसी भी दिन समाप्त हो जाए।

उसके मित्रों ने समझाया कि तुम पागल नहीं हो, तुम क्यों पागलपन में पड़ते हो। विलियम जेम्स ने कहा कि जिन लोगों को मैं देख कर आया हूं वे भी कल तक पागल नहीं थे और आज पागल हो गए हैं। मैं आज तक पागल नहीं हूं लेकिन कल पागल हो सकता हूं। क्योंकि जैसा मैं आदमी हूं ठीक ऐसे ही आदमी वे लोग भी कल तक थे जो आज पागल हो गए हैं। जो उनके भीतर चल रहा था वह मेरे भीतर भी चल रहा है। जो फर्क है वह इतना ही है कि जो मेरे भीतर चल रहा है वह उनके बाहर भी आना शुरू हो गया है। अगर आप आंख बंद करके दस मिनट के लिए अपने भीतर देखें तो ये सवाल बहुत अजीब नहीं मालूम पड़ेगा कि क्या आदमी एक बीमारी है? अगर दस मिनट कोई मौन होकर अपने भीतर झांके तो उसे पता चलेगा कि जिन-जिन बातों के लिए वह किसी को भी पागल कहेगा वे उसके भीतर मौजूद हैं और चल रही हैं। अगर आप द्वार बंद कर लें और एक कागज पर आपके मन में जो चलता हो उसे लिख डालें ईमानदारी से हालांकि हम दूसरों के साथ चाहे ईमानदार हो जाते हों अपने साथ ईमानदार होने वाले लोग बहुत कम हैं। ईमानदारी से लिख डालें जो आपके मन के भीतर चलता हो, तो अपने निकटतम मित्र को भी वह कागज बताना पसंद न करेंगे। क्योंकि आपको खुद ही हैरानी होगी कि यह सब मेरे भीतर चलता है, तो फिर मुझमें और पागल में अंतर क्या है?

मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि शायद ही ऐसा आदमी खोजने से मिले जिसने जिंदगी में दो-चार बार आत्महत्या करने का विचार न किया हो। शायद ही ऐसा आदमी खोजने से मिले जिसने कभी किसी क्षण में किसी दूसरे की हत्या का विचार न किया हो। शायद ही ऐसा आदमी खोजने से मिले कि जिन बातों को हम पागलपन कहते हैं, अपराध कहते हैं, पाप कहते हैं, इन सब बातों को किसी न किसी क्षण में अपने मन में उसने न कर लिया हो। यह बात दूसरी है कि वह बाहर तक उन बातों को लाने की हिम्मत न जुटा पाया हो लेकिन इससे कोई बहुत बुनियादी फर्क नहीं पड़ता है।

कामू ने अपने बहुत प्रसिद्ध ग्रंथ की शुरुआत इस बात से की है कि जहां तक मैं समझता हूं, कामू ने कहा है, आदमी की जिंदगी में सबसे बड़ा सवाल आत्महत्या है, सुसाइड है। और कामू का खयाल है जो लोग भी बुद्धिमान हैं उनकी जिंदगी में आत्महत्या का विचार आता ही है। जिस आदमी को हम मानसिक रूप से रुग्ण और बीमार कहते हैं इस आदमी में और हम में कोई बहुत बुनियादी फर्क है। हालांकि हमें डर लगेगा यह बात सोचने में क्योंकि यह बात सोचना भी बहुत भयकारी है कि हमारे बीच और पागल के बीच कोई फर्क नहीं है।

दूसरे महायुद्ध में जितने लोग युद्ध में मरे उससे ज्यादा लोग सड़कों पर कारों के एक्सीडेंट में मरे। और अब मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि कार एक्सीडेंटों में मरने वाले साठ से अस्सी प्रतिशत लोग बेकार ही मर जाते हैं। वे चलाने वालों के पागलपन की वजह से मर जाते हैं।

हिटलर और फेसिस्ट मिल कर जितने लोगों को मार सके हैं उतने लोगों को साधारण लोग अपनी भीतरी विक्षिप्तता को एक्सीलेरेटर पर दबा कर मार डालते हैं। आपको भी खयाल होगा अगर आप क्रोध में हैं तो एक्सीलेरेटर जोर से दबने लगता है, साइकिल का पैडल जोर से चलने लगता है। आपके भीतर के रोग किन्हीं-

किन्हीं रास्तों से निकलना शुरू कर देते हैं। साठ से लेकर अस्सी प्रतिशत अगर सड़क पर मरने वाले हमारे पागलपन के शिकार हैं तो जिन लोगों को हमने पागलखानों में बंद किया है उनके साथ शायद हम ज्यादती कर रहे हैं, और अन्याय कर रहे हैं।

यह जो आदमी है हमारा इस आदमी की तरफ अगर गौर से देखें तो न तो इस आदमी की जिंदगी में कोई खुशी है, न कोई आनंद है न कोई नृत्य है न कोई गीत है। इस आदमी की जिंदगी उदास मरुस्थल है। जिसमें फूल कभी खिलते हुए मालूम नहीं पड़ते। हां सिर्फ फूल के सपने चलते हैं। भविष्य में मालूम होते हैं फूल खिलते हुए। आज की उदासी को हम कल के फूलों के लिए झेल लेते हैं। और आज की मुसीबत को हम भविष्य की सुख और सुविधा के लिए बसदाश्त कर लेते हैं। लेकिन वह भविष्य कभी आता हुआ नहीं मालूम पड़ता है, कभी आता नहीं दिखाई पड़ता। क्योंकि जिनकी जिंदगी में वर्तमान में फूल नहीं खिलते उनकी जिंदगी में कभी भी फूल नहीं खिल सकते। हां लेकिन एक सुविधा हो जाती है हम कल की आशा में आज को जी लेते हैं। आज के आंसू हम झेल लेते हैं कल की मुस्कुराहट की आशा में। नहीं, आप कहेंगे हम आज भी मुस्कुराते हैं। लोग सब जगह मुस्कुराते हुए दिखाई पड़ते हैं। लेकिन जितनी ही लोगों की मुस्कुराहट में गहरा झांका जाए उतनी ही हैरानी होती है। मुस्कुराहटें ऊपर से चिपकाई हुई और झूठी हैं। नीत्शे निरंतर हंसता रहता था और किसी ने नीत्शे से पूछा कि तुम इतने खुश हो, तुम्हें कौन सी खुशी का खजाना मिल गया है? नीत्शे ने कहाः यह मत पूछो क्योंकि जैसा मैं अपने को जानता हूं उसमें हंसने का कारण खुशी नहीं है उसमें हंसने का कुल कारण इतना है कि अगर मैं न हंसूं तो सिवाय रोने के मेरे पास कुछ बचेगा नहीं। मैं हंसता रहता हूं ताकि रोने को छिपा सकूं। मैं हंसता रहता हूं कि कहीं रोने न लगूं।

अगर आप भी अपने से पूछेंगे कि आपकी हंसी कहीं रोने को छिपाने का उपाय तो नहीं है? और जब आप रास्ते पर किसी से कहते हैं कि बहुत ठीक हूं और उस बहुत ठीक के पीछे आई मुस्कुराहट सिर्फ आपको छिपाती है या उघाड़ती है या प्रकट करती है।

अभी मैं पढ़ रहा था एक मनोवैज्ञानिक ने पागल की परिभाषा में बहुत अजीब बात कही है उसने कहा है, पागल मैं उस आदमी को कहता हूं कि जो अगर दुखी होता है तो कह देता है कि मैं दुखी हूं, परेशान होता है तो कह देता है कि मैं परेशान हूं और रोता होता है तो रो देता है।

तब तो मैं बहुत हैरान हुआ! अगर पागल आदमी की ये परिभाषा है कि अगर वह दुखी हो कि कह दे कि मैं दुखी हूं और रोता हो तो रोने लगे तो फिर जिसको हम स्वस्थ आदमी कहते हैं वह क्या एक धोखा है, एक डिसेप्शन है? ऐसा मालूम पड़ता है कि जिसे हम स्वस्थ आदमी कह रहे हैं वह एक धोखा है। खेत में आपने धोखे के आदमी खड़े हुए देखे हैं। गांव के किसान हंडी को लटका कर कुर्ता लटका देते हैं लकड़ियों में। आदमी, कामचलाऊ आदमी पैदा हो जाता है। पक्षियों को डराने के लिए काफी होता है, खुद के लिए काफी नहीं होता खुद के लिए होता ही नहीं, सिर्फ दूसरों के लिए होता है। शायद आपने भी खेत में खड़े हुए झूठे आदमी को देखा होगा? उसकी जिंदगी दूसरों के लिए है, खुद के लिए उसकी कोई जिंदगी नहीं है। और अगर बहुत गौर से हम अपनी तरफ देखें तो हममें से शायद ही ऐसा आदमी होगा जिसने अपने लिए जिंदा रहना शुरू कर दिया हो। आमतौर से हम भी दूसरे के लिए जीते हैं। किसी दूसरे के लिए हंसते हैं और किसी दूसरे के लिए मुस्कुराते हैं और किसी दूसरे के लिए खुश मालूम होते हैं और किसी दूसरे के लिए रोते हुए मालूम होते हैं और धीरे-धीरे जिंदगी दूसरे के लिए जी जाकर समाप्त हो जाती है। लेकिन जो जिंदगी सिर्फ दूसरों को दिखाने के लिए जी गई हो वह एक अभिनय हो सकती है, एक एक्टिंग हो सकती है एक जिंदगी नहीं हो सकती। और जो जिंदगी अभिनय हो,

सत्तर वर्ष का लंबा अभिनय वह अगर विक्षिप्त और पागल और डिजीज्ड हो जाए तो आश्चर्य नहीं है। हम इतने डर भी गये हैं अपनी जिंदगी जीने से और अपने को पहचानने से जिसका हिसाब लगाना मुश्किल है। हम सब डरे हुए लोग हैं। और हमारा धर्म और हमारा समाज और हमारी नीति और हमारा शिष्टाचार हम सब भयभीत लोगों के इंतजाम हैं भय को कम करने के। जैसे कि कोई आदमी अंधेरी गली में जाता है तो सीटी बजाने लगता है हालांकि उसके सीटी बजाने से कोई फर्क नहीं पड़ता। अंधेरा कम नहीं होता और न उस अंधियारे में कोई भय की कमी होती है। लेकिन खुद सीटी बजा कर आत्मविश्वास बढ़ता हुआ मालूम होता है। आदमी अकेले में सीटी बजा कर अपने को ही धोखा दे लेता है। हम इस जिंदगी के रास्ते पर न मालूम कितने-कितने ढंगों से अपने को धोखा दे रहे हैं।

इस धोखे को मैं बीमारी कहता हूं। और जब तक आदमी इस तरह के सेल्फ डिसेप्शन में और आत्मवंचना में जीएगा तब तक आदमी स्वस्थ नहीं हो सकता है। और इस आत्मवंचना का कुल परिणाम इतना होता है कि हमारी कोई समस्या समाप्त नहीं होती। बल्कि हर हमारी समस्या के लिए खोजा गया समाधान दस नई समस्याओं को पैदा कर जाता है। जहां सारे लोग धोखे में जी रहे हों वहां अगर धोखे का एक जाल फैल जाए और उस धोखे के जाल में हर आदमी इस बुरी तरह फंस जाए कि उसे निकलना मुश्किल हो जाए या निकलने की कोशिश करे तो उसे नये जाल बनाने पड़ें और उनमें फंसता चला जाए और फिर एक विसियस सर्किल पूरी जिंदगी को लेकर डूब जाता है और आदमी जैसे था या नहीं था बराबर मालूम होता है।

इस विक्षिप्त स्थिति के लिए कौन जिम्मेवार है? और इस विक्षिप्त स्थिति के पैदा होने के कारण क्या हैं? हमारे अतिरिक्त और कोई जिम्मेवार नहीं है। और कारण भी हमने पैदा किए हैं। और बचपन से हम हर बच्चे के दिमाग में वे सब कारणों के बीज बो देते हैं जो उन्हें पागल कर देंगे। जिस भांति हमें हमारी पुरानी पीढ़ियां पागल कर गई होती हैं हम अपनी नई पीढ़ियों को पागल करते चले जाते हैं। अगर पुरानी पीढ़ी से नई पीढ़ी को वसीयत में सबसे बड़ी कोई चीज मिलती है तो वह सदा से चला आया हुआ पागलपन मिलता है। न मालूम कितने झूठ जिनको हमने सच बना रखा है और न मालूम कितने सच हैं जिन्हें हमने झूठ बना रखा है। जहां दरवाजे नहीं हैं वहां हम दरवाजे समझाते हैं और जहां दीवालें हैं वहां हम दरवाजे बताते हैं। हमने सारी जिंदगी के आधार बचपन से इतने बड़े झूठों पर रखे हैं कि एक दिन फिर सच के दर्शन होने बंद हो जाते हैं। और अगर बचपन से ही अंधेरे को प्रकाश समझाया जाता हो और प्रकाश को देखने में भय बताया जाता हो तो बहुत आश्चर्य नहीं है कि आंखें बंद हो जाएं।

मैंने सुना है कि एक टैक्सी ड्राइवर शायद नया-नया ही टैक्सी चलाने निकला होगा। उसके चाल-ढाल को उसके ढंग को, उसकी भाग-दौड़ को देख कर उसके बैठे यात्री ने उस ड्राइवर से कहा कि कम से कम मोड़ पर तो थोड़ा सम्हल कर चलाओ। उस टैक्सी ड्राइवर ने कहा, घबड़ाएं मत, जो तरकीब मैं अख्तियार करता हूं वही आप भी करें। उस यात्री ने पूछा, वह क्या तरकीब है? उसने कहा, जब मोड़ आता है तो मैं आंख बंद कर लेता हूं। न उपद्रव दिखाई पड़ेगा न कोई डर रहेगा। जो तरकीब मैं काम में ला रहा हूं वो ही आप भी काम में लाएं। और जब आप घबड़ाने लगें तो आंख बंद कर लें।

यह हमें हंसने की बात मालूम पड़ती है लेकिन मनुष्य की पूरी जाति इसी तरकीब को काम में ला रही है। जहां-जहां जिंदगी के खतरे हैं वहां-वहां आंख बंद कर लेना हमारी तरकीब है, इंतजाम है। और हर बच्चे को हम इस तरह की व्यवस्था देते हैं कि उसके पास आंख भी रहें और वह अंधा भी हो जाए। आंखें कामचलाऊ रह

जाती हैं, अंधापन बहुत गहरा हो जाता है। फिर पागल होना बिल्कुल स्वाभाविक हो जाता है। ऐसे कुछ थोड़े से सूत्रों की मैं आपसे बात करूं जिनमें आदमी को एक डिसी.ज बना दिया है।

पहली तो बात ये कि न जाने किस दुर्भाग्य के क्षण में आदमी के ऊपर दुखवादियों का प्रभाव भारी रूप से पड़ गया है। नामालूम किस क्षण में सुख लेना पाप मालूम होने लगा। हर बच्चे को हम सुख न ले पाए इसका पूरा इंतजाम करते हैं। और इस तरह की स्थिति पैदा कर देते हैं कि सुख लेते वक्त उसको गिल्ट अपराध मालूम पड़ने लगे।

अभी इजराइल में एक छोटा सा प्रयोग वे करते हैं बच्चों के ऊपर किबुत्स। और उस प्रयोग में उन्होंने जो निष्कर्ष निकाले हैं उसमें एक निष्कर्ष जरूर सोचने जैसा है। उसमें उनका कहना यह है कि जब तक हम मां-बाप से बच्चों को न छुड़ा सकें तब तक हम दुनिया को खुशी से नहीं भर सकते हैं। बहुत अजीब बात है! अगर मां-बाप से बच्चों को न छुड़ा सकें तब तक दुनिया को खुशी से न भर सकें तब तो एक बार सोचना पड़ेगा कि मां-बाप और बच्चों के बीच जो... चल रहा है वह कहां तक स्वस्थ है। मुझे भी लगता है कि उनके कहने में दूर तक सचाई है। उसके कारण भी हैं। जैसे-जैसे उम्र ढलती जाती है वैसे-वैसे आदमी उदास होता जाए यह स्वाभाविक है। और अब तक पूरी मनुष्यता के बच्चे बूढ़ों के हाथ पाले गए हैं। और बूढ़े अपनी उदासी बच्चों के ऊपर थोप जाएं इसमें बहुत हैरानी नहीं है। यह अजीब सी बात है कि नये बच्चे बूढ़ों के हाथ में पड़ते रहे हैं। बूढ़ों की जिंदगी जा चुकी है। शायद कभी आई ही न हो उनके हाथों में। लेकिन एक बात तय है कि अब उनके हाथों में जिंदगी नहीं है। सूरज उनका ढलता है, रात होने के करीब है। मौत करीब आने लगी। और मौत की काली छायाएं उनके मन पर प्रभाव करने लगी हैं। इन बूढ़ों के हाथ में बच्चों को पालने का मौका आता है स्वभावतः इनके बीच पचास साल, चालीस साल, साठ साल का भी अंतर हो सकता है। इतने बड़े अंतर पर आने वाले बच्चों को ठीक वैसी ही हालत मिलती है जैसे कुम्हलाते हुए फूलों को नई कलियों को शिक्षा देने का मौका मिल जाए। मरते हुए पौधे अंकुरित होते हुए पौधों के लिए संदेश दे जाएं। डूबता हुआ सूरज उगने वाले सूरज के लिए पत्र छोड़ जाए। जो खतरा होगा वही खतरा है। मनुष्य-जाति के साथ हो गया है। डूबता हुआ आदमी उगते हुए आदमियों के लिए अपने संदेश दे जाता है। बूढ़े बच्चों के लिए उदासी की खबरें छोड़ जाते हैं। मनुष्य-जाति के सारे धर्मग्रंथ बूढ़ों के द्वारा निर्मित हुए हैं। और मनुष्य-जाति की सारी शिक्षाएं वृद्धों ने तय की हैं। और मनुष्य-जाति का सारा का सारा विचारतंतु का जो जाल है वह डूबते हुए लोगों के द्वारा अस्तित्व में आया है। और आते हुए बच्चों के ऊपर थोप दिया जाता है। बच्चे नाचना चाहेंगे लेकिन बूढ़े अब नहीं नाचना चाहेंगे। और तब बूढ़ों की आंखें बच्चों के नाच को अपराध बना दें तो बहुत हैरानी नहीं है। बच्चे आनंदित होना चाहेंगे लेकिन बूढ़ों के लिए आनंदित होना मजाक मालूम होने लगेगा। बच्चे प्रसन्न होना चाहेंगे लेकिन बूढ़ों के लिए प्रसन्नता दुखद होती चली जाएगी। और तब अगर सारे बूढ़े मिल कर जिनके हाथ में समाज है राह है वे अगर बच्चों की खुशियां छीन लें या बच्चों के मन में ऐसा भाव डाल दें कि वे कोई अपराध कर रहे हैं, कोई पाप कर रहे हैं, कुछ बुरा कर रहे हैं, तो इसमें हैरानी नहीं है।

इसलिए हर पीढ़ी आने वाली पीढ़ी के मन में उदासी के बीज छोड़ जाती है। हर आने वाली पीढ़ी जन्म के साथ मृत्यु के बीज छोड़ जाती है। हर पुरानी पीढ़ी खुशी में जहर डाल जाती है। और खुशी को अपराध कर जाती है।

स्वभावतः इसके परिणाम खतरनाक होने वाले हैं। इसका एक खतरनाक परिणाम तो यह हुआ कि अगर मैं आनंद भोगने में असमर्थ हो जाऊं तो सिवाय दुख भोगने के और कोई उपाय नहीं रह जाएगा। और दुख

भोगने के लिए मन कभी राजी नहीं होता। स्वभावतः दुख भोगने के लिए आदमी बना नहीं है। दुख भोगने के लिए हमारे मन में गहरा विरोध है। सुख भोगने के संबंध में अपराधी हो जाएंगे दुख भोगने का विरोध है फिर यह आदमी एक तनाव में एक इनर टेंशन में उलझ जाएगा, जिससे सुलझना मुश्किल है।

और जो आदमी एक बार ऐसा समझ ले कहीं भी भ्रांति से भी उसके मन में ये बात प्रवेश कर जाए कि सुख अपराध है वह आदमी दूसरों का सुख भी बरदाश्त नहीं कर सकेगा। इसलिए सब साधु-संतों ने मिल कर जिन लोगों को भी सुख की जरा सी भी चाह है उन्हें नरक में डाला हुआ है। जिनके जीवन में भी सुख की जरा सी आकांक्षा है उनको पापी घोषित कर दिया है। धर्मों ने एक अजीब बात घोषणा कर रखी है कि जो आदमी दुख झेलने को तैयार है वही आदमी धार्मिक है। और जो आदमी अपने हाथ से अपने को दुखी करने में बहुत तैयारी दिखलाता है वह आदमी बहुत महान है। और जो अपने हाथ से दुख पैदा कर लेता है अपने चारों तरफ वह महात्यागी है, वह आदरणीय है।

जब हम दुख की इस भांति पूजा करेंगे तो पृथ्वी विक्षिप्त नहीं हो जाएगी तो क्या होगा? हमने अब तक दुख ही पूजा है। हमारी ये दुख की पूजा बहुत लंबी हो गई है, सनातन हो गई है। इस पृथ्वी पर दुख के देवता के अतिरिक्त हमने किसी देवता को खड़ा नहीं किया है। इसलिए हम सोच भी नहीं सकते कि साधु-संत हंसते हुए हों, मुस्कुराते हुए हों, आनंदित हों। हम सोच भी नहीं सकते कि साधु-संत नाचते हुए हों, हम सोच भी नहीं सकते कि साधु-संतों के हाथ में खिलते हुए फूल हों हम साधु-संतों के आस-पास मौत और मरघट को देखने के आदी हो गए हैं।

निश्चित ही जो लोग सबसे ज्यादा रुग्ण हैं वे ही लोग इस तरह के दुखवादी संसार में आद्रत हो सकते थे। हमने बीमारों को पूजा है और हमने स्वस्थ लोगों की निंदा की है। हमने सब तरह के स्वस्थ लोगों की भारी निंदा की है। अगर एक आदमी खाना खाने में आनंद ले रहा है तो निंदित हो गया है। और हमने अपने सिद्धांत बनाए हैं कि सिद्धांत है अस्वाद। अगर गांधीजी के ग्यारह सिद्धांतों को उठा कर देखें तो वे किसी भी आदमी को या तो पागल या पाखंडी बना देने के लिए काफी हैं।

अस्वाद भोजन करना लेकिन स्वाद मत लेना। अब यह किसी भी आदमी को पागल कर देने के लिए पर्याप्त है। या पाखंडी कर देगा, या तो मेडनेस आएगी, या हिपोक्रेसी आएगी। और हिपोक्रेसी मेडनेस से भी बुरी मेडनेस है। उससे तो बेहतर है आदमी पागल हो जाए। कि कम से कम पागल आदमी आनेस्ट तो होता है, ईमानदार तो होता है, धोखेबाज तो नहीं होता।

क्या अजीब बात है, मुंह और जीभ बनाई इसीलिए गई है कि आप स्वाद ले सकें। और जिस आदमी की जीभ काट दी जाएगी उसकी आत्मा का एक हिस्सा कट जाएगा। क्योंकि जो आदमी स्वाद नहीं ले सकता उस आदमी की जिंदगी में स्वाद से जो अनुभव आते हैं वह वंचित रह जाएगा। उसकी उतनी समृद्धि कम हो जाएगी।

आप ऐसा सोचें कि एक आदमी की जीभ भी काट दें, आंख भी काट दें, कान भी काट दें, क्योंकि ये सभी इंद्रियां अपने-अपने स्वाद लेती हैं। आंख रंग को देखना चाहती है, रूप को देखना चाहती है। आंख सौंदर्य का स्वाद लेना चाहती है चाहे वह फूल का हो, चाहे आदमी की शक्ल का हो, चाहे स्त्री की शक्ल का हो, चाहे चित्र में हो। कान गीत सुनना चाहते हैं, संगीत सुनना चाहते हैं। ये सब स्वाद हैं। आंख का स्वाद है, कान का स्वाद है। हाथ भी स्वाद लेना चाहते हैं, पूरा जीवन स्वाद लेना चाहता है। इस स्वाद को सब तरफ से काट दें तो आदमी में और अमीबा में फर्क क्या रह जाए! आदमी और अमीबा में कोई फर्क नहीं रह जाए। आदमी और पशुओं में जो

अंतर है उसकी इंद्रियों की सेंसिविटी के विकास का अंतर है। आदमी की इंद्रियां जितनी संवेदनशील हैं उतनी उसकी आत्मा गहरी और समृद्ध होती चली जाती है।

ऐसा नहीं है कि बुद्ध की आंखें कम देखती हैं। बुद्ध की आंखें हमसे ज्यादा देखती हैं। ऐसा नहीं है कि बुद्ध की आंखों ने सौंदर्य देखना बंद कर दिया है, सचाई ये है कि बुद्ध की आंखों ने सौंदर्य को इतने गहरे देखा है कि अब कुरूपता में भी उन्हें सौंदर्य दिखाई पड़ने लगा है। ये बहुत दूसरी बात है। सूरदास ने आंखें फोड़ लीं हैं कि कहीं आंखें भटका न दें। लेकिन जो आत्मा इतनी कमजोर हो कि आंखों के देखने से इससे भटकने का डर मालूम पड़ता हो। क्या आंखें फोड़ने से वह आत्मा बहुत मजबूत हो जाएगी? आंखें रहते हुए जो भटक सकता है, आंखें खो जाने पर बच जाएगा भटकने से? आंखों वाले भटक जाएंगे तो अंधों का क्या होगा!

नहीं आंखें फोड़ लेने से कोई भटकने से नहीं बच सकता। आंखें फोड़ना सिर्फ इस बात की खबर है कि आदमी की आत्मा बहुत कमजोर है। आंखों से बच कर कोई रूप से बच सकता है? आंखें बंद कर लें तो रूप आंखों के भीतर पैदा होना शुरू हो जाता है। और आंखें बंद करके जैसा रूप दिखाई पड़ता है वैसा रूप खुली आंखों से कभी नहीं दिखाई पड़ता।

बंद आंखों से कोई भाग नहीं सकता। न कान फोड़ कर कोई संगीत से मुक्त हो सकता है। हां, एक बात पक्की हो सकती है कि इन द्वारों को बंद करके वह उसकी आत्मा दीन और दरिद्र हो सकती है।

स्वाद इतनी पूर्णता से लिया जा सकता है कि परमात्मा को धन्यवाद उससे पैदा हो। और मैं उस आदमी को धार्मिक कहता हूं जो इतना पूर्ण स्वाद ले सके कि परमात्मा के प्रति ग्रेटीट्यूट और धन्यवाद पैदा हो। मैं उस आदमी को धार्मिक कहता हूं जो आंखों से सौंदर्य देखते देखते उस सौंदर्य को भी देख ले जो आंखों से दिखाई नहीं पड़ता है। मैं उस आदमी को धार्मिक कहता हूं जो सुख को इस गहराई से भोगे कि सुख भौतिक न रहकर आध्यात्मिक होना शुरू हो जाए। एक फूल को देखते वक्त सिर्फ फूल ही दिखाई नहीं पड़ता जो देखना जानते हैं उन्हें फूल के पीछे छिपी हुई आत्मा भी दिखाई पड़ने लगती है।

लेकिन अब तक की सारी की सारी व्यवस्था दुखवादियों की, पैसिमिस्ट की है उन दुखवादियों ने मनुष्य के पूरे मन को आक्रांत कर लिया है। और बचपन से हम एक-एक बच्चे के मन में दुख के बीज बो रहे हैं। शायद बूढ़ों की ईर्ष्या भी काम करती है। और स्वाभाविक है। बूढ़ों से ज्यादा ईर्ष्यालु और कोई भी पृथ्वी पर नहीं होता। असल में ईर्ष्या और जेलसी पैदा ही तब होती है जब सामर्थ्य कम होती है। जितनी सामर्थ्य कम होती है उतनी ईर्ष्या पैदा होती है। बूढ़े इस जिंदगी से छीने जाते हैं। उनके हाथ से सब छिन रहा है। वे ईर्ष्या से भर गए होते हैं और बच्चे उनके सामने हंसते हुए और नाचते हुए मालूम पड़ें ये कष्टपूर्ण है। बूढ़े जाते-जाते इन बच्चों की खुशी को जहर से भर जाएंगे, पाय.जन से भर जाएंगे। लेकिन इससे कोई बूढ़ों का हित नहीं हो जाता। न बच्चों का कोई हित हो जाता है। होना तो इससे उलटा चाहिए कि आने वाले बच्चे बूढ़ों की जिंदगी को खुशी से भर दें। लेकिन अब तक हुआ उलटा है जाने वाले बूढ़ों ने बच्चों की जिंदगी को दुख से भर दिया है।

मैं एक छोटी सी किताब देख रहा था। एक अमरीकी बूढ़ी औरत जिसकी उम्र सत्तर वर्ष है वह एक छोटे से चार साल के बच्चे के साथ रहना शुरू करती है। और अपने पूरे संस्मरण उस चार साल के बच्चे के साथ रहने के, वह एक संकल्प करती है कि बच्चे को अपने साथ न रखेगी, खुद बच्चे के साथ रहेगी। ये संकल्प बहुत साधारण संकल्प नहीं है।

वह बूढ़ी औरत यह तय करती है कि बच्चा मेरे साथ नहीं रहेगा मैं बच्चे के साथ रहूंगी। इसलिए बड़ी कठिनाई होती है क्योंकि बच्चा रात दो बजे उठ आता है और उस बूढ़ी का हाथ पकड़ कर बाहर खींचने लगता है

कि बाहर अंधेरे में तारे चमक रहे हैं लेकिन उस बूढ़ी ने तय किया है कि उसे बच्चे के साथ रहना है तो वह दो बजे रात उठती है उस बच्चे के साथ रात के अंधेरे में जाती है, तारों को देखती है, उस बच्चे के साथ झींगुर की आवाज सुनती है, उस बच्चे के साथ समुद्र के फैन से खेलती है। उस बच्चे के साथ दौड़ती, तितलियां पकड़ती है। दो वर्ष उस बच्चे के साथ उस बूढ़ी का जीवन और उसने एक संस्मरणों की किताब लिखी है, उसने लिखा है कि मैं फिर से वापस मेरा पुनर्जन्म, रिबर्थ हो गई है। दो वर्ष उस बच्चे के साथ रहना मेरी सब कुछ स्थिति बदल गई है अब मैं कह सकती हूं मैं बूढ़ी नहीं हूं और मौत जब आएगी तो मैं मौत को भी उतनी ही जिज्ञासा और आनंद से देख सकूंगी जैसा छोटे बच्चे के साथ मैंने तितली को, फूलों को, तारों को देखा है।

इस स्त्री का दो वर्ष में सारा व्यक्तित्व बदल गया। इसके चेहरे की रौनक बदल गई। इसके चलने का ढंग बदल गया क्योंकि उसको चार साल के बच्चे के साथ दौड़ना पड़ा, उसे चार साल के बच्चे के साथ नाचना पड़ा, उसे चार साल के बच्चे के साथ चिल्लाना पड़ा, उसे चार साल के बच्चे के साथ जंगल के झाड़ों पर चढ़ना पड़ा, उसे समुद्र में उतरना पड़ा, उसे नदी में तैरना पड़ा। वह इस चार साल के बच्चे के साथ दो साल उसने अपना संकल्प पूरा किय। वह बच्चा तो विकसित हुआ लेकिन उस बूढ़ी की जिंदगी में एक नयेपन का जन्म हुआ।

मेरी अपनी समझ है कि अगर हम मनुष्यता को सुखी करना है तो हमें पुराने क्रम को बदलना पड़ेगा। बूढ़ों के साथ बच्चे नहीं, बच्चों के साथ बूढ़े। बूढ़ों को सब कुछ बच्चों को सिखाने का खयाल छोड़ देना चाहिए बहुत कुछ है जो बच्चों से सीखने योग्य है। बहुत कुछ है जो बच्चे ही सिखा सकते हैं। बहुत कुछ है जो बच्चों के पास निर्दोष है, इनोसेंट है। बहुत कुछ है जो बच्चों के पास ताजा है, जिंदा है। बहुत कुछ है जो बच्चों के पास अभी अन-अल्ट्रेटेड है। अभी उसमें कुछ बिगाड़ा नहीं गया। कहा जा सकता है कि बच्चों की आंखों में अभी परमात्मा की झलक है। बच्चों के खेल में अभी परमात्मा की पुलक है। अभी बच्चों की अराजकता में भी अभी परमात्मा का जो बड़ा अराजक जगत है, उसकी झलक है।

लेकिन इसके पहले कि हम सीखें हम बच्चों को बिगाड़ देंगे। इसके पहले कि बच्चे हमें कुछ दे पाएं हम बच्चों को सुधार देंगे। इसके पहले कि बच्चों से हमें कुछ मिल पाए हम उनकी क्षमता को नष्ट कर देंगे।

मनुष्य की विकृति में अब तक की सारी शिक्षा बूढ़ों से बच्चों की तरफ गई है इसे मैं मूल आधार मानता हूं मनुष्य की बीमारी में इसे मैं बुनियादी आधार मानता हूं। काश हमारे साधु-संत भी हमारे बच्चों से सीख सकें। काश हमारे शिक्षक भी बच्चों से सीख सकें। क्योंकि एक बात तो पक्की है कि बच्चे अभी-अभी आ रहे हैं उस जगत से जहां से हमें आए बहुत देर हो गई है। बच्चे अभी-अभी उस ओरिजिनल सोर्स, उस मूल श्रोत से आ रहे हैं जहां से हमें आए बहुत वर्ष हो गए हैं। अभी बच्चों की स्मृति उस मूल-श्रोत के संबंध में हम से ज्यादा ताजी है। कहें कि वे परमात्मा से हमसे ज्यादा निकट हैं। ठीक ऐसे ही जैसे आप तीस साल पहले किसी परदेस गए हों और लौटे हों और तीस साल में आपकी सब स्मृतियां धुंधली हो गई हों। और आज ही कोई परदेस से लौटा हो फिर नई स्मृतियों के साथ। आप उससे सीखना चाहेंगे। लेकिन बड़े दुर्भाग्य की बात हुई है कि बच्चों को हमने सिर्फ सिखाना चाहा। मैं देखता हूं कि इसमें मनुष्य के रोग के बड़े गहरे आधार रख दिए गए हैं।

दूसरी बात, बच्चों को जो भी हम सिखा रहे हैं वह हम बिना जाने सिखा रहे हैं।

जीसस एक गांव में गए और उस गांव के लोगों ने उनकी भीड़ में, उन्हें घेर लिया है और उनसे कुछ बातें पूछी हैं। और एक बात जीसस से उस गांव के लोगों ने पूछी है कि तुम्हारे प्रभु के राज्य में कौन लोग प्रवेश कर सकेंगे तो जीसस ने एक बच्चे को उठाकर भीड़ में ऊपर किया है और कहा है कि वे जो इस छोटे बच्चे की भांति होंगे।

नहीं कहा कि जो छोटे बच्चे हैं वे बल्कि कहा कि जो इस छोटे बच्चे की भांति होंगे। एक बच्चे का भी आनंद उतना बड़ा नहीं हो सकता जितना एक बूढ़ा अगर फिर से बच्चा हो जाए तो उसका होगा। क्योंकि बच्चे के आनंद में अनुभव की कमी है। बच्चे के अनुभव में ज्ञान का विस्तार नहीं है। बच्चे के आनंद में जीवन की समृद्धि नहीं है। बच्चे का आनंद छिछला ही होगा। लेकिन एक बूढ़ा अगर फिर से अगर बच्चा हो जाए तो उसके आनंद का हम कोई हिसाब नहीं लगा सकते हैं।

एक छोटी सी कहानी से मैं समझाने की कोशिश करूं।

मैंने सुना है कि एक बहुत अमीर आदमी जिसने दुनिया में जो कुछ मिल सकता था वह सब पा लिया है लेकिन उसे सुख नहीं मिला। तो वह सुख की तलाश में निकला है और फिर वह एक गांव में गया है और उस गांव के बाहर लोगों से उसने पूछा है कि कोई आदमी तुम्हारे गांव में होगा जो मुझे सुख की कोई खबर बता सके? वह अपने घोड़े पर हीरे-जवाहरातों से भरा हुआ एक बड़ा थैला लिए हुए है। उसने कहा, मैं ये करोड़ों रुपये के हीरे-जवाहरात उसके चरणों में पटक दूंगा। तो गांव के लोगों ने कहा, हां, एक आदमी हमारे गांव में है, शायद वह कुछ काम में पड़ जाए। क्योंकि जब और कोई काम में नहीं पड़ता तब वह आदमी काम में पड़ जाता है तुम उसे खोजो गांव में पूछ लेना कि मुल्ला नसरुद्दीन कहां है। वह गांव का एक फकीर है। वह पूछता हुआ अमीर आदमी उस मुल्ला नसरुद्दीन के पास गया। वह एक झाड़ के नीचे बैठा है, सांझ सूरज ढल रहा है।

मुल्ला नसरुद्दीन से उसने कहा कि मेरी जिंदगी में सब कुछ है, सिर्फ सुख नहीं है। और मैं ये करोड़ों रुपये के हीरे-जवाहरात उस आदमी के चरणों में पटकने को निकला हूं जो मुझे सुख की एक झलक दिखा दे। नसरुद्दीन ने उस आदमी की तरफ देखा और कहा कि नीचे उतर आओ, झलक मैं दिखा दूंगा।

वह आदमी नीचे उतर आया। बहुत लोगों के पास गया किसी ने ये हिम्मत नहीं की कि झलक मैं दिखा दूंगा। लोगों ने बड़े उपदेश दिए, समझाया, लेकिन लोगों ने कहा, हम कैसे झलक दिखाएंगे? झलक तुम्हें देखनी पड़ेगी।

उस नसरुद्दीन ने कहाः तुम नीचे उतर आओ, झोला मेरे सामने रखो मैं झलक दिखा देता हूं। उस अमीर आदमी ने झोला नीचे रखा, उसे पता भी नहीं था कि ऐसा होगा। उसने झोला नीचे रख भी नहीं पाया था कि नसरुद्दीन झोला उठा कर भाग खड़ा हुआ।

एक क्षण तो वह अवाक रह गया फिर चिल्लाया और भागा और कहा कि चोर है यह आदमी। मैं लुट गया! मैं मर गया! मेरी जिंदगी की सारी कमाई गई! वह गांव में भाग रहा है नसरुद्दीन के पीछे। गांव नसरुद्दीन का परिचित है, गली-कूचे उसे मालूम हैं। वह आदमी अजनबी है। चिल्लाता बहुत है लेकिन दौड़ नहीं पाता। और सारे गांव के लोग भी देख रहे हैं कि यह क्या हो गया? सारी दौड़ के बाद सूरज ढल गया है। नसरुद्दीन गांव के बाहर उसी झाड़ के पास आ गया है जहां घोड़ा खड़ा है अमीर का। थैली उसने घोड़े के पास पटक दी, झाड़ के पीछे छिप कर खड़ा हो गया।

वह अमीर आदमी भागा हुआ आया--हांफता हुआ, रोता-चिल्लाता, झोले को उठा कर छाती से लगाया और उसने कहा, हे भगवान! तेरा बड़ा धन्यवाद है!

नसरुद्दीन ने कहाः झलक मिली? उस आदमी ने कहा कि यह भी कोई ढंग है झलक दिखाने का?

नसरुद्दीन ने कहाः इसके अलावा कोई ढंग न था। तुमने कभी भगवान को धन्यवाद दिया था? नसरुद्दीन ने कहाः जरूरी था कि जो तुम्हारे पास है वह खो जाए ताकि तुम्हें पता चल सके कि वह तुम्हारे पास था। और जरूरी है कि वह तुम्हें वापस मिले ताकि तुम अनुगृहीत हो सको।

बच्चे के पास समृद्धि होती है, बूढ़े के पास खो गई होती है। और अगर कोई बूढ़ा फिर से बच्चा हो जाए तो परमात्मा के प्रति धन्यवाद से भर पाता है। उसे वापस मिल गया खजाना। उसे झलक दिखी। उसकी संपत्ति छिनी और वापस लौटी। लेकिन इसके पहले कि किसी बूढ़े को संपत्ति मिले हम सब मिल कर बच्चों की संपत्ति मिटाने की कोशिश में लग जाते हैं।

बच्चों के साथ जितना अन्याय हुआ है पृथ्वी पर उतना किसी के साथ नहीं हुआ है। ऐसा नहीं है कि आप ही कर रहे हैं आपके साथ भी किया गया है। ऐसा नहीं कि जिन्होंने आपके साथ किया है उन्होंने ही किया है उनके साथ भी ऐसा ही किया गया है।

हजारों साल से एक अदभुत चक्र है वह यह है कि बूढ़े बच्चों को शिक्षा दे रहे हैं और बच्चों से बिल्कुल नहीं सीख रहे हैं। जब कि बच्चों से जिंदगी की पुलक और जिंदगी का आनंद सीखना जरूरी है। एक जिंदगी, एक समाज जो सिर्फ बूढ़े बनाएंगे उदास और बीमार होगा। मरने के करीब पहुंचने वाले लोग सूत्र रचेंगे वे जिंदगी के सूत्र नहीं हो सकते। सांझ को जमीन पर गिर जाने वाले फूल कहानी लिखेंगे वे खिलने वाले फूलों की आवाज नहीं हो सकते।

लेकिन ऐसा हुआ है। अब इसके दो परिणाम हो रहे हैं एक परिणाम तो यह है कि आदमी पागल हुआ चला जा रहा है। दूसरा परिणाम यह है कि बच्चों ने बूढ़ों से सीखने से इंकार करना शुरू कर दिया। इसलिए सारी दुनिया में बच्चों की बगावत है। यह बगावत अर्थपूर्ण है। इस बगावत को सिर्फ नासमझी मत समझ लेना आप, कि यह बच्चों की नासमझी है। यह हजारों साल के बाद यह बहुत कीमती अवसर आया है कि बच्चे अब सीखने से इंकार कर रहे हैं। मैं इसे शुभ लक्षण मानता हूं। और अच्छा होगा कि जल्दी हम इस बात को समझ लें कि यह बगावत क्या सूचना दे रही है। ये चाहे हिप्पी हों, चाहे बीटनिक हों और चाहे नक्सली हों और चाहे इनका नाम दुनिया में कुछ भी हो। सारी दुनिया में पिछले दस वर्षों में एक चीज सघन होती जा रही है और वह ये है कि बच्चे बूढ़ों से सीखने से इंकार कर रहे हैं।

मैं मानता हूं कि यह बहुत बड़ी क्रांति का क्षण है। इससे शुभ फलित हो सकता है। इससे अशुभ भी फलित हो सकता है। अगर हमने इस बात की सार्थकता को नहीं समझा तो अशुभ फलित हो सकता है। अगर हमने इस बात की सार्थकता को समझा और इस क्रांति के क्षण का उपयोग कर लिया तो आने वाली मनुष्य-जाति अतीत के दुख के पार जा सकती है।

दूसरी बात, जो मैं आपसे कहना चाहता हूं वह यह कि हम प्रत्येक चीज में कंडेमनेशन का निंदा का एक दर्शन लिए बैठे हैं प्रत्येक चीज में। ऐसा कोई शास्त्र नहीं है जो ये कहता हो कि परमात्मा ने इस पृथ्वी पर आपको आपके किसी पुण्यफल को देने के लिए भेजा है। सभी शास्त्र कहते हैं कि पापों का फल भोगने के लिए पृथ्वी पर आना हुआ है। यह जेल की भांति जगह है। यह कारागृह है। यहां दंड भोग रहे हैं हम सब, तो स्वभावतः जेलखाने में आप जाकर देखें तो जैसी उदासी, जैसा दुख जैसी पीड़ा और जेलखाने में कोई जेलखाने को सजाता नहीं है। चाहे उस आदमी को दस साल उस कोठरी में रहना हो तो भी उस दीवाल पर एक चित्र नहीं बनाएगा। क्योंकि है वह जेल। वहां कोई रहना नहीं है वहां से जाना है। वहां से हर आदमी जाने की तैयारी में है।

मैंने तो सुना है कि एक आदमी जेलखाने में गया तो पहले जो उस कोठरी में आदमी मौजूद था उसने पूछा कि तुम्हें कितने साल की सजा हुई? उस आदमी ने कहा, मुझे सत्तर साल की सजा हुई है। तो उसने कहा कि तुम

जरा पीछे बैठो। मुझे पचास साल की सजा हुई है, मेरे बाहर निकलने का मौका पहले आएगा। तुम पीछे ठहरो मैं जरा दरवाजे के पास रुकूं।

पचास साल! लेकिन पचास साल भी कोई जेल को घर नहीं बना सकता। सत्तर साल वाले को वह कह रहा है, जरा पीछे रुको मुझे दरवाजे के पास रहने दो। मेरे छूटने का मौका पहले आने वाला है।

जेल घर नहीं बन सकता। यह पृथ्वी घर नहीं बन पाई। यह आज तक घर नहीं बन पाई। क्योंकि सारे धर्म इसे पापों के दंड पाने की जगह बता रहे हैं। यह कालापानी है, अंडमान-निकोबार। यहां सब अपराधी भेजे जा रहे हैं। सारी दुनिया में जो अपराध हो रहे हैं उन अपराधियों को दंड भोगने के लिए पृथ्वी पर भेजा जा रहा है।

क्या पागलपन है? किन पागलों ने ये खयाल पैदा किए होंगे? और जब हम जिंदगी को कारागृह समझ लेंगे तो फिर जिंदगी उदास हो ही जाने वाली है। फिर जिंदगी से हम कभी रस और आनंद को उपलब्ध नहीं कर पा सकते हैं। और जहां आनंद न मिले वहां आदमी विक्षिप्त ही होगा और क्या हो सकता है?

इस जिंदगी को हमने अब तक स्वीकार नहीं कर पाए। एक अहोभाव पैदा नहीं कर पाए कि हम कह सकें कि एक अहोभाव है जो परमात्मा ने मुझे मौका दिया कि मैं भी इस पृथ्वी पर हो सकूं। और वसंत में फूल खिलें तो देख सकूं और पूर्णिमा को शरद पूनम का चांद हो तो उसके नीचे नाच सकूं। और लोग मेरे आसपास हों तो उन्हें प्रेम कर सकूं।

नहीं ये एक अवसर नहीं है परमात्मा की तरफ से, एक दंड है। मैं मानता हूं कि जिन्होंने भी ये फिलोसफी दुनिया को दी। उनका मन किसी न किसी तरह न्यूरोटिक उनका मन किसी न किसी तरह रुग्ण और पागल होना चाहिए। वे नाम कितने ही बड़े हों इससे बहुत फर्क नहीं पड़ता। क्योंकि बड़े मजे की बात है कि आमतौर से पागल जो भी काम करते हैं, बड़ी व्यवस्था से करते हैं। अगर वे फिलोसफी भी बनाते हैं तो बड़ी सिस्टमेटिक बनाते हैं। अगर वे दुनिया को कोई दर्शन दे जाते हैं, शास्त्र दे जाते हैं तो वे भी बहुत ढंग और तर्कपूर्ण दे जाते हैं।

हमने अपने दुखों को जस्टीफाई किया है। हमने अपने दुखों को स्वीकार कर लिया है। और हमने नियम खोज लिए हैं कि हम दुखी क्यों हैं। पहली तो बात कि हम दुखी हैं इसलिए कि हम पापों का फल भोग रहे हैं। अनंत जन्मों के पापों के फल हैं वे हमें भोगने मिल रहे हैं। यह दृष्टि इससे ज्यादा खतरनाक और दृष्टि क्या हो सकती है?

मैं आपसे कहना चाहता हूं हम किन्हीं पापों का फल नहीं भोग रहे हैं। हम सिर्फ परमात्मा के आनंद की लहरें हैं। कोई समुद्र में जो लहरें उठ रही हैं वे किसी पापों का फल नहीं हैं। और वृक्षों पर जो फूल खिल रहे हैं वे भी किसी पापों का फल नहीं हैं। तो यह आदमी जो पैदा हो रहा है ये पापों का फल है!

ये भी आनंद की लहरें हैं। यह भी इस जीवन-ऊर्जा का खेल है। यह भी लीला है। यह जो विराट जीवन की ऊर्जा है, यह जो विराट जीवन की एनर्जी है, जिसे एलन वॉट कहता है... इसे हम परमात्मा कहना चाहें तो परमात्मा कहें। यह जो क्रिएटिविटी है जगत की, इसमें जैसे और सब चीजें अनंत-अनंत रूपों में खिल रही हैं वैसा मनुष्य भी खिल रहा है। लेकिन फूल अपने को स्वीकार करते हैं, तारे अपने को स्वीकार करते हैं, पक्षी अपने को स्वीकार करते हैं। मनुष्य अकेला प्राणी है जो अपने को स्वीकार नहीं करता। यह उसकी बेसिक डिजीज है। आदमी अपने को स्वीकार नहीं करता। वह निरंतर कहता है कि मुझे कुछ और होना है जो मैं हूं वह नहीं। उसकी एक ही विक्षिप्तता है कि मुझे कुछ और होना है। जो गरीब है उसे अमीर होना है। और बड़े मजे की बात है कि जो अमीर है वह गरीब होने की कोशिश में लग जाता है।

महावीर अमीर के घर पैदा होते हैं। बुद्ध अमीर के घर पैदा होते हैं, राजा के घर पैदा होते हैं। लेकिन जब तक वे सड़क पर भीख मांग लेते तब तक उनकी तृप्ति नहीं है। ये तो बड़े मजे की बात है। अगर अमीर के घर में कोई पैदा हो जाए तो उसे गरीब होना है। और गरीब के घर में कोई पैदा हो जाए उसे अमीर होना है। किसी को बिल्कुल वस्त्र न हों तो उसे सम्राटों के वस्त्र चाहिए और किसी को सम्राटों के वस्त्र मिल जाएं तो उसे नग्न हुए बिना कोई रास्ता नहीं है। अगर आपको महल मिल जाए तो आप महल त्याग करने की कोई न कोई फिलासफी खोज लेंगे। अगर आपको झोपड़ी मिल जाए तो आप महल बनाने के लिए कोई न कोई दौड़ तैयार कर लेंगे।

आदमी जो है उसके लिए भर राजी नहीं है। यह तो मैंने मोटी बात कही, बहुत गहरे में भी भीतर आदमी जो है उसके लिए राजी नहीं है। कुछ और चाहिए। सबको कुछ और चाहिए। ऐसा नहीं है कि वह मिलने से कोई फर्क पड़ेगा, वह मिलते ही फिर कुछ और चाहिए। बहुत गहरे में हम अपने को स्वीकार नहीं कर पाते, अस्वीकार किए चले जाते हैं।

पक्षी आनंदित हैं वे सुबह गीत गा पाते हैं। हम सुबह थके-मांदे ही उठते हैं। सुबह हम गीत नहीं गा पाते। क्योंकि दिन हमारे लिए एक दौड़ की तरह आता है। सुबह फूल खिल जाते हैं लेकिन हम नहीं खिल पाते। दिन हमारे लिए फिर चिंताओं के बोझ की तरह आता है।

जिंदगी हमारे लिए एक टेंशन है। जिसमें दौड़े जाना है, दौड़े जाना है। इतनी भी फुरसत नहीं है हमसे बहुतों को कि हम कहां दौड़ रहे हैं और किसलिए दौड़ रहे हैं! और अगर कोई हमसे पूछे भी तो हम उससे कहेंगे कि बेकार की बातों में समय खराब मत करो इतनी देर में मैं और थोड़ा दौड़ लेता हूं। जोर से दौड़ना है।

हम सब दौड़े चले जा रहे हैं कुछ और होने का, बिकमिंग का एक पागलपन है जो पूरे वक्त हमें पकड़े हुए है। और आनंद के साथ एक कठिनाई है। आनंद सदा बीइंग के साथ है, बिकमिंग के साथ आनंद कभी भी नहीं है। जिस आदमी को कुछ होना है उसने दुखी होने का रास्ता खोज रखा है। जो जो है, उसके साथ आनंदित हो सकता है, वही आनंदित हो सकता है। मैं जो आज हूं अगर मुझे आज की शरद पूर्णिमा का आनंद लेना है तो शरद पूर्णिमा का चांद मुझे आनंद नहीं दे सकता। आनंद तो इस पूर्णिमा के नीचे खड़ा हुआ जो मैं हूं अगर वह मुझे स्वीकृत है तो ही मैं आनंदित हो सकता हूं। चांद आनंदित है क्योंकि उसे कुछ और होना नहीं, जो है वह है। हम दुखी उस चांद के नीचे चलते रहेंगे। क्योंकि हमें कुछ और होना है जब तक हम वह न हो जाएं तब तक चांद हमें दिखाई नहीं पड़ सकता।

जिंदगी को हम चूकते हैं कुछ और होने में। न गा पाते हैं, न नाच पाते, न धन्यवाद दे पाते हैं। न हम प्रेम कर पाते हैं न हम प्रेम ले पाते हैं। न हम सुखी हो पाते हैं न हम सुख दे पाते हैं। क्योंकि समय नहीं है। दौड़ है कल, कल कुछ करेंगे। सारे लोग कल के लिए भाग रहे हैं। यह कल, यह दौड़ धर्म के अर्थों में मोक्ष बन जाती है। वह भी कल है। स्वर्ग बन जाती है, वह भी कल है। धनी के अर्थों में कल बन जाती है कोई करोड़पति होना है, कोई अरबपति होना है। संन्यासी के लिए कल बन जाती है जब परमात्मा उसको मिलेगा तब वह खुश होगा। सबके लिए कल है। आज आज किसी के लिए नहीं है।

जीसस एक गांव से गुजरते हैं लिली के फूल खिले हैं। सुबह का वक्त और सूरज निकला है। और जीसस अपने साथियों से कहते हैं कि तुम ये लिली के फूल देखते हो? तुमने ये लिली के फूल देखे? सोलोमन सम्राट जब अपने पूरे यश-गौरव में था तब भी इतना सुंदर नहीं था जितने ये गरीब लिली के फूल। ये गरीब फूल जितने सुंदर हैं उतना सम्राट सोलोमन सुंदर नहीं था। लेकिन वे शिष्य थके से खड़े रह जाते हैं। उनकी समझ में कुछ भी नहीं आता। लिली के फूल तो गांव-गांव के बाहर लगे हैं। उन्हें उसमें कुछ खास दिखाई नहीं पड़ता। वे कहते हैं ये

बड़े साधारण फूल हैं, ये तो गांव-गांव में सब जगह लगे रहते हैं। आप ऐसा क्यों कहते हैं, कहां सोलोमन और कहां लिली के साधारण फूल!

जीसस कहते हैं, गौर से देखो। सोलोमन इतना प्रसन्न कभी भी न था। क्योंकि सोलोमन आज में नहीं हो सकता था वह सदा कल था।

जो कल में है वह चिंता में होगा। कल ही चिंता का दूसरा नाम है। कल का अर्थ हैः एंजायटी। जो कल में जीएगा वह चिंता में जीएगा, परेशानी में जीएगा। जो आज जी सकता है वह खिल सकता है। सब फ्लावरिंग आज है। कल सिर्फ चिंता है। और ऐसा नहीं है कि कल कभी आएगा वह कभी आता भी नहीं। जब आप कल तक पहुंचेगे वह आज हो चुका होगा। और यह कल की आदत हैबिट। जब आप कल पहुंचेगे तब आगे वाले कल की चिंता शुरू हो जाएगी। कल को भी आप खोएंगे, आने वाले कल को भी खोएंगे। रोज आप खोते जाएंगे क्योंकि समय जब भी आता है तब वह आज की भांति आता है। समय कभी कल की भांति आता नहीं। और हम सब कल के मन से जीते हैं। तनाव, बेचैनी, परेशानी दुख के अतिरिक्त हमारी कोई नियति नहीं बन पाती।

ऐसा यह जो आदमी है ऐसा आदमी एक बीमारी है। ऐसा आदमी आदमी ही नहीं है। ऐसा लगता है कि आदमी जो हो सकता था वह होने से चूक गया है। कहीं कोई चीज चूक गई है। कहीं रास्ते से कोई पटरी उखड़ गई है। कहीं हम किसी और रास्ते पर चले गए हैं जो हमारा भाग्य नहीं है, जो हमारी नियति नहीं है। इसलिए हम कुछ भी हो जाएं बेचैनी हमारा पीछा करती है।

कहीं मैंने एक वचन पढ़ा है। पढ़ा है मैंनेः "आदमी को मयस्सर नहीं इंसा होना।" बहुत हैरानी का वचन मुझे लगा--"कि आदमी को आदमी होना संभव नहीं।" तो आदमी को और क्या होना संभव हो सकता है? अगर आदमी आदमी नहीं हो सकता, तो और क्या हो सकता है? फिर तो और कुछ भी नहीं हो सकता। लेकिन आदमी सब कुछ होना चाहता है, सिर्फ आदमी नहीं होना चाहता। क्योंकि आदमी होना तो आज और अभी है। हियर एंड नाउ। वह तो इसी क्षण में होना होगा। इसी क्षण में हम हैं। काश हम स्वीकार कर सकें कि जो हम हैं उसके लिए राजी हो सकें तो जिंदगी तत्काल आनंद के द्वार खोल देती है। सब तरफ से मंदिर के द्वार खुल जाते हैं और मंदिर की घंटियां बुलाना शुरू कर देती हैं। सब तरफ से पूजा और आरती होनी शुरू हो जाती है, जो हम हैं। लेकिन हम जो हैं उससे राजी नहीं हैं। हम कहते हैं मुझे कुछ और होना है। और तब हम दौड़ते चले जाते हैं। और जो मंदिर हमें भीतर बुला सकता था उस मंदिर के चारों तरफ चक्कर काटते-काटते गिरते हैं और मर जाते हैं। जीवन एक अतृप्ति की लंबी कहानी के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं हो पाता है।

ऐसा आदमी एक बीमारी है। लेकिन ऐसे आदमी आप हों यह आपका चुनाव है। न हो यह आपका निर्णय है। ऐसे हम हैं लेकिन हम चाहें तो इसको ट्रांसेंड कर सकते हैं, इसके पार जा सकते हैं। कल को भूल जाएं इसका यह मतलब नहीं है कि कल नहीं होगा। इसका यह भी मतलब नहीं है कि कल ट्रेन पकड़नी हो तो आज आप टिकट नहीं खरीदेंगे। इसका ये मतलब भी नहीं है कि कल कहीं जाना हो तो आज उसका विचार नहीं करेंगे। ये मैं नहीं कह रहा हूं।

नहीं, जीने के लिए कल नहीं है। जीना तो आज है। जीने के योजनाएं कल होंगी। लेकिन जीना आज है। जीने के काम कल होंगे लेकिन जिंदगी की पुलक आज है। हृदय को धड़कना आज है, श्वास अभी लेनी है, प्रेम अभी करना है, आनंदित अभी होना है, रस अभी लेना है, गीत अभी गाना है। जिंदगी के कामधाम की दुनिया कल भी फैलेगी लेकिन आपका होना, आपका अस्तित्व, आपका बीइंग जितने गहरे में आज के क्षण से जुड़ जाए

उतने आपके विक्षिप्त होने की संभावना समाप्त हो जाएगी। उतने आप तृप्त, उतने आप संतुष्ट, उतने आप आनंद से भरे हुए।

ऐसा नहीं है कि इसका अर्थ होगा कि आप स्टग्नेंट हो जाएंगे कि रुक जाएंगे और मर जाएंगे। ऐसा नहीं है। नहीं, आज की धारा आपको कल भी ले जाएगी। गंगा भी बहती है। आने वाले कल का कोई फिकर नही है। लेकिन आज की धारा कल भी पहुंच जाती है। सूरज भी चलता है। कल सुबह उगेगा इसकी चिंता आज नहीं है। लेकिन आज का जीवन कल भी उगता ही है। कल तो होता ही रहा है होता ही रहेगा। सिर्फ सवाल ये है कि मेरा मन आज कल से अटक जाए? तो मैं चूक जाऊंगा आज से। और मेरा आज से चूक जाना मेरी डिसीज, मेरी बीमारी, मेरा पागलपन बन जाता है। और हम सब कल में उलझे हुए लोग हैं। इसलिए हम सब चिंतित और परेशान हैं। फिर अगर हम मंदिर भी पहुंचते हैं तो वह मंदिर भी कल के लिए है। अगर प्रार्थना भी करते हैं तो वह प्रार्थना भी कल के लिए है। अगर कोई ध्यान में भी बैठता है तो वह ध्यान भी कल के लिए है।

नहीं, न कोई ध्यान कल के लिए है, न कोई प्रार्थना, न कोई मंदिर, न कोई परमात्मा। परमात्मा है तो अभी और इसी क्षण में, उससे हम जुड़ सकते हैं। एक क्षण को भी कोई आदमी अपने को स्वीकार कर ले तो वह परमात्मा के द्वार पर खड़ा हो जाता है। और स्वास्थ्य की अनंत संभावनाएं प्रकट हो जाती हैं।

यह हमारा शब्द स्वास्थ्य बहुत अदभुत है, इसके संबंध में दो शब्द और अपनी बात मैं पूरी करूं। यह शब्द बहुत कीमती है। अंग्रेजी के "हेल्थ" शब्द में वह बात नहीं है। अंग्रेजी का "हेल्थ" शब्द तो मेडीसिन का शब्द है, औषधिशास्त्र का शब्द है। हीलिंग से बना है। घाव भर जाए। लेकिन हमारा "स्वास्थ्य" शब्द बहुत अदभुत है, वह बहुत आध्यात्मिक है। स्वस्थ का अर्थ हैः जो स्वयं में है। वन हू इ.ज इन वनसेल्फ। उसका अर्थ हीलिंग नहीं है। उसका मतलब हैः जो अपने में जी रहा है, जो अपने में मौजूद है, जो अपने साथ है, जो अपने भीतर गहरे में है, जिसकी रूट्स अपने भीतर चली गई हैं, जिसकी जड़ें अपने में हैं। हां, जिसके फूल आकाश में खिलेंगे, लेकिन जिसकी जड़ें अपने भीतर हैं।

जो सेल्फ-रूटेड, जिसकी जड़ें भीतर स्वयं में पहुंच गई हैं, जो अपनी भूमि पर खड़ा है, ऐसे व्यक्ति को हम स्वस्थ कहते हैं। चाहे शरीर का सवाल हो, चाहे मन और चाहे आत्मा का। अगर शरीर अपने है तो स्वस्थ होता है, जब आपके सिर में दर्द होता है तो इसका इतना ही मतलब होता है कि शरीर अपने में नहीं है। जब आपके पैर पैरालाइज्ड हो जाते हैं तो उसका मतलब यही होता है कि शरीर अपने में नहीं है। शरीर चूक गया कहीं अपने होने से। जब आपका मन चिंता से भरता है, तो उसका अर्थ है कि मन अपने में नहीं है, मन चूक गया। जब आपकी आत्मा भी अपने में नहीं होती और कुछ और होना चाहती है तब आत्मा भी चूक जाती है। हम चूकते चले जाते हैं अपने में नहीं हो पाते।

अपने में हम हो जाएं तो हम स्वस्थ हो जाते हैं। और मनुष्य अपने में हो जाए तो इस पृथ्वी पर न तो इतना कोई सुंदर फूल है जैसा मनुष्य; और न कोई इतना चमकता हुआ तारा है जैसा मनुष्य; और न कोई गीत गाता हुआ झरना है जैसा मनुष्य; न कोई ऐसी चांदनी रात है जैसा मनुष्य; न कोई समुद्र की लहर इतने आनंद से भरी है जितना मनुष्य। क्योंकि से सब सोए हुए बेहोश हैं, आदमी जागा हुआ है, होश में है। उसका आनंद एक होशपूर्ण आनंद है। उसका गीत एक जाग्रत गीत है। लेकिन जो सबसे ज्यादा संभावना है जिसकी आनंद की ऊंचाइयों के लिए स्वभावतः सबसे ज्यादा गिर जाने की भी उसकी संभावना है। जो लोग जमीन पर सीधे चलते हैं उनके गिरने का डर कम है। लेकिन जो एवरेस्ट की चोटियां छूना चाहें उनको एवरेस्ट जितनी गहरी खाइयों में गिरने की भी संभावना को भी स्वीकार करना पड़ता है। आदमी खाइयों में गिर गया है क्योंकि चेतना की

बहुत ऊंचाइयों पर बहुत उठ सकता है। जो उसकी पोटेंसियलिटी है, जो उसकी संभावना है वही उसका दुख भी बन जाता है।

आदमी इतना ऊपर उठ सकता है कि परमात्मा हो जाए, इसलिए इतना नीचे भी गिर जाता है कि पक्षी और पत्थर भी नहीं रह जाता। पक्षी और पत्थर भी जितने आनंदित मालूम होते हैं उतना आनंदित भी नहीं रह जाता। यह मनुष्य की दोनों संभावनाएं हैं। इनमें हम क्या चुनते हैं यह हम पर निर्भर है। आज तक मनुष्य-जाति के बड़े हिस्से ने दुख चुना है, बीमारी चुनी है, चिंता चुनी है, पागलपन चुना है, साधारणतः हम भी वही चुने चले जाते हैं। और ऐसा लगता है कि धीरे-धीरे शायद पूरी पृथ्वी एक मेडहाउस होकर रहेगी। करीब-करीब हो गई है। कुछ नहीं कहा जा सकता किस दिन तय करना मुश्किल हो जाए कि अब कौन आदमी पागल नहीं है। करीब-करीब ऐसी हालत हो गई है। सारे राजनीतिज्ञ, सारे धर्मगुरु, सारे साहित्यिक, सारे कलाकार, ऐसा मालूम पड़ रहे हैं कि एक विक्षिप्तता की गहरे दौड़ में दौड़ रहे हैं। अगर चित्रकारों के चित्र देखें, अगर पिकासो के चित्र देखें तो ऐसा लगता है कि आदमी कहीं विक्षिप्त हो गया है। अगर इजरा पाउन की कविताएं पढ़ें, तो ऐसा लगता है आदमी कहीं विक्षिप्त हो गया है। अगर राजनीतिज्ञों की चालें की देखें, चाहे माओ की, चाहे निकसन की, तो ऐसा लगता है आदमी कहीं पागल हो गया है। चारों तरफ देखें, तो ऐसा लगता है कि आदमी सब तरफ से पागल हुआ जा रहा है।

क्या कोई संभावना आदमी के स्वस्थ होने की नहीं है?

मैं मानता हूं, संभावना है। वह आपसे शुरू होती है। वह प्रत्येक से शुरू होती है। शायद पूरी पृथ्वी को हम स्वस्थ करने के पागलपन में नहीं पड़ सकते हैं, लेकिन अपने को स्वस्थ करने की समझदारी बरती जा सकती है। और ऐसा मुझे लगता है कि अगर एक आदमी भी हमारे बीच पूरी स्वस्थ हो, तो वह एक जलता हुआ दीया बन जाता है और आस-पास के बुझे दीयों के लिए भी प्रेरणा सिद्ध होता है।

मैंने ये थोड़ी सी बातें कहीं इस आशा में कि आप सोचेंगे। मेरी बातों को मानने की जरा भी जरूरत नहीं है। क्योंकि पता नहीं मैं खुद भी एक पागल आदमी हूं और आपसे कुछ बातें कह रहा हूं। जरूरी नहीं है मेरी बातों को मानना।

मेरी बातों को सुना, पक्का नहीं है कि आपने सुना ही हो, क्योंकि बहुत ही कम लोग यहां मौजूद होंगे। वहां जा चुके होंगे कुछ लोग जहां उन्हें इसके बाद जाना है, कुछ लोग अभी वहीं होंगे जहां से वे आए हैं। शायद कोई यहां पहुंच हो आपमें से, तो उसने मेरी बातों को सुना होगा। उनसे मेरी प्रार्थना है जिन्होंने सुना हो, कि मान नहीं लेंगे सोचेंगे। बहुत बड़ा सोचने का क्षण आदमी के सामने आ गया। एक-एक कदम सोचने का उठाने जैसा है, क्योंकि खतरा बहुत ज्यादा है, और खाई बहुत निकट है, और जरा सी चूक और पूरी मनुष्यता समाप्त हो सकती है। लेकिन पूरी मनुष्यता समाप्त हो या न हो यह आपकी जिम्मेवारी नहीं है, एक जिम्मेवारी जरूर आपकी है कि आप इसके पहले कि समाप्त हों, अपने जीवन की गहराई, इसके पहले की समाप्त हों, अपने जीवन की ऊंचाई, इसके पहले ही समाप्त हों, जीवन के पूरी नृत्य, इसके पहले ही समाप्त हों, जीवन का पूरा अस्वाद और जीवन की पूरी निर्दाषिता और जीवन की पूरी सरलता को अनुभव करके जा सकें, ऐसी मैं परमात्मा से प्रार्थना करता हूं। क्योंकि अन्यथा हमारा आना बिल्कुल व्यर्थ है। हमारा जाना व्यर्थ है। हमारा होना व्यर्थ है। यह सार्थक हो सकता है। थोड़ा सोचें और अपने को पागलों की दुनिया से थोड़ा बाहर हटाएं। और अपने पागल बढ़ते हुए कदमों को थोड़ा लौटाएं। और थोड़ा देखें कि आपके पैर किस तरफ चले जा रहे हैं। एक छोटी सी कहानी, अपनी बात मैं पूरी कर दूं।

मैंने सुना है, एक आदमी एक युनिवर्सिटी को खोज रहा था। उसके आफिस को खोज रहा था। लेकिन ठीक युनिवर्सिटी के सामने ही एक पागलखाना भी था। जैसी है आज हालत, करीब-करीब सब युनिवर्सिटीज के सामने पागलखाना बनाना ही पड़ेगा। वे कुछ बुद्धिमान लोग रहे होंगे, उन्होंने वहां बना रखा था। वह भूल से आदमी युनिवर्सिटी के चपरासी के पास न जाकर पागलखाने के चपरासी के पास पहुंच गया। दोनों के दरवाजे एकसे थे। तो उसने पूछा कि मैं युनिवर्सिटी का आफिस खोज रहा हूं लेकिन दरवाजे दोनों एकसे हैं, इन दोनों में कौन सी जगह युनिवर्सिटी है? और दरवाजे एक से क्यों हैं? कुछ फर्क क्यों नहीं किया गया?

तो उस चपरासी ने कहा कि फर्क ज्यादा नहीं है, इसलिए दरवाजे एक से हैं। थोड़ा सा वैसे फर्क है। पागलखाने में जो भी आता है जब तक ठीक न हो जाए निकल नहीं सकता। इतना ही फर्क है। युनिर्सिवटी में जाकर हालत उलटी है, जब तक बिगड़ न जाए तब तक निकल नहीं सकता।

उसने कहाः मैं बहुत दिनों से यहां चपरासी का काम करता हूं, यही फर्क देख पाया हूं। और ज्यादा कोई फर्क मुझे दिखाई नहीं पड़ा है।

हमारे कदम पागलखानों की तरफ बढ़ते जा रहे हैं, वे न बढ़ें इस तरफ जितना सचेत हम हो सकें उतना अच्छा है। खुद के लिए भी, सबके लिए भी, भविष्य के लिए भी।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उससे बहुत अनुगृहीत हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेर प्रणाम स्वीकार करें।